सीमा

[कुछ नई कहानियाँ]

कृष्णचन्द्र एम. ए.

राजपाल एण्ड सन्ज़
कश्मीरी गेट
दिल्ली ६.

मूल्य

तीन रुपये

अनुवादक

बालकृष्ण एम. ए.

रेवतीसरन शर्मा

प्रकाशक : युगान्तर प्रकाशन लिमिटेड, देहली।

मुद्रक : युगान्तर प्रेस, डफ़रिन पुल, देहली।

विषय-सूची

१.	सीमा	...	...	१
२.	तिरंग चिड़िया	...	...	२१
३.	नुक्कड़	...	...	३१
४.	हम सब गन्दे हैं	...	...	४०
५.	झील से पहले, झील के बाद		...	५१
६.	फूलवाला	...	...	५८
७.	क़ाफ़ला	...	...	७०
८.	जगन्नाथ	...	...	८२
९.	टूटे हुए तारे	...	...	९३
१०.	पराजय के बाद	...	...	१०५
११.	बाल्कनी	...	...	१५१
१२.	दुर्घटनाएँ	...	...	१७८

: १ :

सीमा

न जाने वह दिन भर बैठा २ क्या सोचता रहता था! वह अभी १६ साल का ही होगा और कॉलिज के पहले वर्ष में था, परन्तु हर समय खोया २ सा रहता था। उसके सिर के बाल बढ़े हुए और उलझे हुए रहते थे। पतलून घुटनों के समीप आगे को बढ़ी हुई और कोट की बाहें कोहनियों के समीप बहुत मैली और घिसी हुई रहती थीं। वह बहुत लज्जाशील लड़का था—लज्जा, डर और झिझक, ये तीनों गुण उसमें थे (यदि इन्हें गुण कहा जा सकता है तो—)। यह डर यूँ ही एक निरर्थक सा, अकारण सा, डर था—कॉलिज के विद्यार्थियों से, अध्यापकों से, सड़क पर चलते हुए सुन्दर वस्त्र पहने हुए लोगों से उसे डर लगता रहता था। यदि वह चाहता तो स्वयम् अच्छे २ कपड़े पहन सकता था, परन्तु उसे अच्छे वस्त्रों से डर सा लगता था। वह कोई भी ऐसा काम नहीं करना चाहता था जिससे लोगों का ध्यान उसकी ओर आकर्षित हो। उसके मुख पर हर समय विषाद की एक छाया सी पड़ी रहती थी। मोटी २ काली आँखों में से उदासी मानो सदा झांकती रहती थी। होंटों पर कभी २ मुस्कराहट आ जाती थी परन्तु उस मुस्कराहट में भी एक प्रकार का विषाद सा भरा रहता था।

वह अपनी माँ की देखरेख में इस नगर में पढ़ने आया था। नगर की एक गली में उन्होंने एक मकान किराये पर ले लिया था। उसका

जी चाहता था वह शहर से बाहर लोगों से अलग कोई मकान ले ले, परन्तु उसकी माँ ने इस बात का विरोध किया। नगर से बाहर चमारों की बस्ती थी या फिर एक पागलख़ाना था। इन दोनों आपत्तियों से भी बढ़कर उसकी माँ के लिये एक यह कठिनाई थी कि नगर से बाहर उसे बातचीत करने के लिये अन्य महिलाएँ नहीं मिलतीं। स्त्री और निस्तब्धता दो परस्पर-विरोधी वस्तुएँ हैं। जो मकान इन्होंने लिया था उसमें यह भी सुविधा थी कि वह कॉलिज से दूर नहीं था। मकान से कॉलिज का रास्ता साइकल पर दस मिनट का और पैदल पच्चीस, तीस मिनट का था। माँ ने उसे नया साइकल भी ले दिया था, परन्तु उसे अपने साइकल से भी डर सा लगता था। क्या ऊटपटाँग सवारी है यह! हर समय चढ़ने वाले के प्राण मानो ब्रेकों में फँसे रहते हैं। हैण्डल सम्भालो तो ब्रेकों का ध्यान नहीं रहता, ब्रेकों का ध्यान रखो तो घन्टी बजाना भूल जाता है। कोई मोटर सामने से आजाए तो न पैडल चलते हैं न पहिये। सवार को यह भी पता नहीं रहता कि उसका शरीर गद्दी पर है या हवा में लटका हुआ है।

उसकी माँ उसे बहुत प्यार करती थी। यदि कॉलिज से लौटने के समय पाँच मिनट की भी देर हो जाती तो वह घर के द्वार पर खड़ी होकर उसकी प्रतीक्षा करने लगती। यदि वह सैर या खेल से देर में आता तो उसकी माँ का मन चिन्ता से व्याकुल हो उठता और वह बार-बार पूछती, "बेटा इतनी देर कहाँ रहे?"

"यूँही सोचता चला आ रहा था।"

"यह अच्छी आदत नहीं। यूँही हर समय क्या सोचते रहते हो?"

और वह लजा कर कहता, "कुछ नहीं माँ।" और उसका चेहरा कानों तक लाल हो जाता। यदि वह बता दे कि वह क्या सोचता हुआ आ रहा था तो उसकी माँ मन में क्या सोचेगी? वह स्वयम् भी कई बार सोचा करता कि वह क्यों हर समय कुछ न कुछ सोचता रहता

है। इस प्रकार सोचने का क्या लाभ है, क्या प्रयोजन है ? यह बात सोचकर उसे अपने आप से डर सा लगने लगता।

सीमा को उसने पहले पहल इसी घर में देखा था। अल्हड़ और भद्दी सी लड़की। केवल उसका रङ्ग साफ़ था। उसमें कोई ऐसी बात नहीं थी जिसके सम्बन्ध में वह कुछ सोच सकता। उसमें न यौवन था न रूप, न माधुर्य, न चाल अच्छी थी, न वस्त्र सुन्दर होते थे, न हँसने का ढङ्ग सुन्दर था और न ही उसकी बातों में कोई आकर्षण था। हाथों की अंगुलियाँ बड़ी बेढंगी-सी दिखाई देती थीं। उनमें किसी प्रकार का लालित्य नहीं था। उसके होंट फीके, शुष्क और नीरस लगते थे। आँखों में गहराई न थी, सीधी-सादी सी निगाहें थीं—वे निगाहें जो कुछ भी नहीं जानतीं। जानता तो वह भी कुछ नहीं था, परन्तु कम से कम पुस्तकों में उसने लड़कियों के सम्बन्ध में कुछ पढ़ा था। और दूर से उसने कई सुन्दर लड़कियों को देखा भी था, परन्तु उसने बात कभी न की थी। उसे लड़कियों से एक अज्ञात-सा डर लगता था।

हाँ, सीमा से उसे डर न लगता था। सीमा वैसी लड़की न थी जिससे उसे डर लगता। एक बार जब वह सीमा की ओर ध्यान से देख रहा था और सीमा नौकर से खाना माँग रही थी और नौकर उस से हँस-हँस कर बातें करने का प्रयत्न कर रहा था तो उसे बहुत बुरा लगा। नौकर की हँसी और सीमा का बेढंगापन और बेसमझी—वे सब बातें उसे बुरी लगीं और वह सोचने लगा, यह लड़की हमारे घर आती ही क्यों है ? परन्तु फिर उसने सोचा उसकी माँ पुराने विचारों की महिला है, वह जब तक दिन में किसी ब्राह्मण को भोजन न करा ले स्वयम् भोजन नहीं करती। उसे उन ब्राह्मणों से जो गले में चादर लटकाए, माथे पर तिलक लगाए और बगल में पोथी दबाए उसके घर आते थे और जिन्हें खाना खिलाए बिना तथा दक्षिणा दिये बिना उसकी माँ कभी वापिस नहीं करती थी, बहुत डर लगता था। परन्तु

यह सब झगड़े-टन्टे उसकी माँ अपने लाल के लिए करती थी। वह उसकी जन्मपत्री खोलकर बैठ जाती और ब्राह्मणों से पूछती, "महाराज! मेरा लड़का नौकर कब होगा? महाराज! मेरे लड़के का ब्याह कब होगा? महाराज! क्या मेरी बहू मेरे कहने में रहेगी? महाराज! पौत्र का मुँह कब देखूँगी?" और ब्राह्मण महाराज इतने सुन्दर और आकर्षक उत्तर देते थे कि वह बेचारी उनको खाना खिलाये और दक्षिणा दिये बिना रह ही नहीं सकती थी।

रामधन उसके नौकर का नाम था। वह आयु में उसके बराबर का था, परन्तु था बड़ा चलता हुआ। भले लोगों की शब्दावली में तो उसे बदमाश ही कहना चाहिये। वह सीमा को बहुधा छेड़ता रहता था। परन्तु सीमा को एक तो उसके बहुत से सांकेतिक आक्रमणों का पता ही न चलता था और दूसरे वह रोज़ उससे भोजन ले जाती थी और फिर इसमें किसी का बिगड़ता भी क्या था? बेचारा रामधन चूल्हे के समीप बैठा रोटियाँ बनाता रहता और एक-दो गन्दे मखौल करके रह जाता और वह खाना लेकर चल देती। बात इससे आगे कभी न बढ़ने पाई थी, क्योंकि सीमा की आयु ग्यारह-बारह वर्ष से अधिक न होगी। उसका चेहरा, उसकी चाल-ढाल, आकृति, उसका प्रत्येक अंग—प्रत्येक चीज़ मानो अपूर्ण थी। ऐसा लगता था जैसे स्रष्टा ने उसे बनाते-बनाते जान-बूझकर अधूरा छोड़ दिया था। वह सुन्दर बन सकती थी, परन्तु दुर्भाग्य से बन न सकी।

एक दिन सीमा रसोई में खड़ी खाना ले रही थी और वह अपना चेहरा अपनी हथेलियों में थामे हुए कुछ सोच रहा था कि रामधन की दुष्टतापूर्ण हँसी की आवाज़ उसे सुनाई दी। रामधन उसका ध्यान आकर्षित करना चाहता था। जब उसने रामधन की ओर देखा तो रामधन अपनी जाँघ पर हाथ मारकर बोला, "वाह! बाबू जी, वाह! मैंने एक बहुत बढ़िया उपाय सोचा है। बतलाइये कि यदि आपका विवाह सीमा से हो जाए तो कैसा रहे? वाह वाह!"

सीमा बिना किसी झिझक और डर के हँस पड़ी। उसे सीमा की हँसी और रामधन का मज़ाक़ बहुत बुरा लगा और उसने घृणा से अपना मुँह दूसरी ओर कर लिया। जब सीमा चली गई तो उसने रामधन को बहुत डाँटा और फिर माँ से शिकायत करके एक डाँट और पिलवाई। उसने मन में कहा यह गँवार कुत्ता कितना अश्लील, निकम्मा और मूढ़ है। जब देखो लड़कियों के सम्बन्ध में गन्दे मजाक़ करता रहता है। दुष्ट कहीं का!

इस घर में वह सीमा को लगभग हर रोज़ देखता था—यूहीं उचटती दृष्टि से। उसने कभी सीमा के जीवन, उसके दैनिक कार्यों और उसके अस्तित्व के संबन्ध में कुछ विशेष विचार नहीं किया था। एक बार उसने उसके सम्बन्ध में जो अनुमान लगाया था वह बहुत दोनों तक उसके दिल में रहा। दो वर्ष बीत गये, परन्तु उस अनुमान में कोई अन्तर नहीं पड़ा। वह अब बी० ए० में हो गया था और अपने विचारों के जगत् में और भी अधिक गहरी दिलचस्पी लेने लगा था। अब यह जगत् उसके लिए वास्तविक जगत् बनता चला जा रहा था। बाह्य जगत् को वह एक उचटती दृष्टि से देखता—स्त्री, पुरुष, वस्त्र, आवाज़ें, हँसना, रोना, आदि बातें उसे निरर्थक दिखाई देतीं। उनमें उसे कोई आनन्द न मिलता था। इस पर्दे के पीछे एक और संसार था, रंगीन, स्वप्नमय, सुन्दर और अलौकिक। साहित्यिक अध्ययन ने उसके मन पर गहरा प्रभाव डाला और वह सदा अपने काल्पनिक जगत् में रहने लगा। कई बार तो वह अपने विचारों में इतना डूब जाता कि उसकी माँ उसे झंझोड़ कर उठाती और खाना खिलाने लगती। जब वह खाना खाने के लिए बैठता तो ग्रास हाथ में लेकर सोचने लगता और उसकी माँ उसे फिर उसके काल्पनिक जगत् में से खींच कर लाती। वह खिसियाना सा होकर खाना खाने लगता। खाना खाते-खाते बीच-बीच में वह न जाने फिर कहाँ खो जाता। उसकी माँ खीझ कर कहती, "हाय! यह तुम्हें कैसा रोग लग गया? आख़िर

तुम सोचते क्या रहते हो ? मैंने तुम्हें कितनी बार समझाया है कि कम से कम भोजन करते समय कुछ न सोचा करो। यह बहुत बुरी आदत है।" यह सुनकर वह स्वयं अपने आप से ही लज्जित हो उठता था।

बी० ए० में दाख़िल होने के बाद उसने अपनी माँ से कह सुनकर मकान बदलवा लिया। उसे गली में रहना अच्छा न लगता था, वरन् वह कहीं नितान्त अकेला रहना चाहता था। अब वह बड़ा हो गया था—अर्थात् अठारह वर्ष का युवक। अब उसकी माँ यूँ ही उसकी हर बात को नहीं टाल सकती थी। अन्त में उसकी माँ ने नगर से बाहर तो नहीं परन्तु नगर के उत्तरी कोने पर एक मकान ले लिया। यह मकान एक गली के अन्तिम सिरे पर स्थित था और इस मकान के परे एक विशाल मैदान था। उससे आगे सरकारी अस्पताल का बाग़ था। और उससे परे खेत दूर-दूर तक फैले हुए थे। इन खेतों से परे पहाड़ थे जो दूर-दूर तक फैले हुए थे। वह इस मकान को लेकर बहुत प्रसन्न हुआ। उसकी माँ भी इस मकान से असन्तुष्ट नहीं थी, क्योंकि चाहे कुछ भी हो आख़िर यह मकान एक गली में ही तो था, और वह सुविधा के साथ अन्य स्त्रियों के साथ बातचीत कर सकती थी।

उनके मकान के साथ भूमि का एक ख़ाली टुकड़ा था, जिस पर जगह-जगह झाड़ियाँ उगी हुई थीं, जंगली लाला खिला हुआ था, और धतूरे के सफेद फूल अपनी डंडियों पर झुके हुए थे। इस भूमि के टुकड़े के परे सीमा का घर था—कच्ची मिट्टी का बना हुआ। यहाँ सीमा अपने छोटे भाई, अपनी माँ और अपनी मौसी तथा मौसा के साथ रहती थी।

इस बार जब शरद् ऋतु का आगमन हुआ तो उसने सीमा में पहली बार परिवर्तन का अनुभव किया। वह जल्दी-जल्दी पाँव उठाता हुआ कॉलिज की ओर जा रहा था कि उसे खाली भूमि के टुकड़े के समीप सीमा मिल गई। वह अपने हाथ में एक काँगड़ी लिये उसके

घर की ओर आ रही थी। काँगड़ी में लाल-लाल कोयले दहक रहे थे। सीमा उसकी ओर देखकर मुस्कराई और बोली, "आप सर्दी में ठिठुरते हुए जा रहे हैं। लीजिये, इस काँगड़ी पर हाथ ताप लीजिये।" यह कहकर वह हँसी।

वह चौंक पड़ा। यह नई किस्म की अलबेली हँसी थी—अलबेली, मीठी, जिसमें थोड़ा सा गर्व था और थोड़ा सा आत्म-सम्मान। उसने सीमा की ओर देखा। दोनों की आँखें मिलीं, परन्तु अब उन आँखों में अनजानपन न था। वह सीमा से आँखें न मिला सका। उसने सहसा अनुभव किया कि सीमा के मुख पर एक नया माधुर्य आ गया है। गालों पर एक अलौकिक लावण्य बिखर गया था। उन पर ऐसी लाली छा गई थी जैसे पके हुए सेव पर, जिसे मनुष्य के हाथों ने न छूआ हो। होंटों में रस भर गया था और उन पर लालिमा चमक रही थी और एक सूक्ष्म प्रकार का विद्रोह उन पर खेल रहा था—मानो ये होंट अब अपने स्वामी के अधिकार में नहीं रहना चाहते। इनकी चंचलता, इनकी हँसी, इनकी लालिमा, इनकी चमक ये सब उसने देखीं। सीमा की मख़मली ठोड़ी से उतर कर उसकी दृष्टि सीमा की गर्दन पर अटकी। इस गर्दन में हंस के परों की सफेदी और हंस की गर्दन का लोच था। उसे बहुत अचम्भा हुआ। उसकी दृष्टि और नीचे उतरने लगी परन्तु गले के नीचे एक रेशमी नीला कुर्ता था—झिल-मिल करता हुआ। फिर उसकी दृष्टि उन हाथों पर पड़ी जो काँगड़ी को पकड़े हुए थे। लम्बी, पतली अँगुलियाँ जिनकी पोरियाँ मेंहदी में लाल हुई दीख रही थीं। भला वह अब तक इन अँगुलियों के सौन्दर्य से क्यों परिचित न हुआ था? सीमा एक हाथ उठाकर अपने सिर की तरफ़ ले गई और काँच की चूड़ियाँ सहसा चाँदी की घंटियों की तरह बज उठीं। उसकी दृष्टि सीमा के सिर की ओर गई और उसने देखा कि सीमा के सिर के बाल सुनहले और बल खाते हुए थे। वह बहुत विस्मित हुआ। उसने अपने मन में एक नये प्रकार की झिझक

का, एक अनोखे डर का अनुभव किया। आज तक उसे सीमा से कभी डर नहीं लगा था, परन्तु आज उसे सीमा से भी डर लगने लगा।

वह मार्ग में सीमा के सम्बन्ध में सोचता रहा। वह उसके संबंध में सोचना तो न चाहता था परन्तु न जाने क्यों, सीमा का मुखड़ा बार-बार उसके सामने आ जाता और वह व्याकुल-सा हो उठता। जिस वस्तु को आज तक वह अपूर्ण, अधूरी समझता आया था अब सहसा इतनी आकर्षक, लावण्यमय और पूर्ण बन गई थी कि उसका ध्यान आते ही उसका हृदय काँपने लगा। अभी कल ही तो उसने उसे देखा था और आज......सहसा क्या हो गया है! अब न वह अल्हड़ थी, न भद्दी। उसकी चाल में एक विलक्षण आकर्षण आ गया था। आँखों में लावण्य, होंटों में रस और फिर एक सूक्ष्म प्रकार का विद्रोह, एक सूक्ष्म प्रकार का गर्व—मानो वह चाहती थी कि कोई उसकी ओर देखे और वह उसे अधिकृत कर ले; मानो कोई उससे मज़ाक करे और वह एक रानी की भाँति उसे झिड़क दे, अथवा चुपचाप इस तरह निकल जाए, जैसे वह इन बातों से बहुत परे और उदासीन है। सहसा उसे भी ऐसा लगने लगा मानो सीमा बहुत ऊँची और उदासीन हो गई है। आज तक उसके मस्तिष्क में सीमा केवल रोटी लेने वाली एक निर्धन ब्राह्मण लड़की से अधिक न थी, परन्तु आज उसे ऐसा लगा मानो वह स्वयम् उसके सामने एक निर्धन भिक्षुक बन गया है।

उस दिन जब वह कॉलिज से लौटा तो उसके मन की कुछ अद्-भुत अवस्था थी। ज्यों-ज्यों वह सीमा के कच्चे घर के समीप आता गया उसका मुख लाल होता चला गया और उसके हृदय की धड़कन बढ़ती चली गई। उसकी चाल में एक अद्‌भुत-सा बेढंगापन उत्पन्न हो गया, मानो किसी ने उसे शराब पिलाकर, संज्ञाहीन-सा कर दिया हो। इसी अवस्था में जब वह सीमा के घर के सामने से निकला उसने देखा कि सीमा द्वार पर खड़ी हुई अपनी मौसी से बातें करने में व्यस्त है। दीवार के साथ-साथ नीलराज की लता फैली हुई थी, जिसके लम्बे-

लम्बे नाजुक से फूल सीमा की अँगुलियों जैसे लगते थे। उस दिन उसे नीलराज के फूल बहुत प्यारे लगे। अब तक उसे कवियों से और कविता से कोई प्रेम न था। अँग्रेज़ी कविताओं के उलझाव बहुधा उसकी समझ में न आते थे। आज रात वह बहुत देर तक अँग्रेज़ी कविताएँ और गीत पढ़ता रहा। उन गीतों में जो दर्द था वह धुआँ-सा बनकर उसके मन पर छा गया। उसे ऐसा लगा मानो वर्षों की प्यासी आत्मा आज तृप्त हो गई हो! गीतों ने और सीमा के जीवित, साक्षात् परन्तु अलौकिक सौन्दर्य ने उसके मन को उद्वेलित कर दिया। उसकी आत्मा में बिजली-सी कौंध गई। उसके हृदय में भावनाओं की लहरें टकरा रही थीं। वह ठीक प्रकार से उनका विश्लेषण न कर सका। एक आँधी-सी थी जो बढ़ती चली आ रही थी। उसने झिझकते हुए, डरते हुए परन्तु एक अज्ञात से आनन्द की अनुभूति के साथ अपने आपको इस आँधी के हवाले कर दिया।

वह कई वर्षों तक इसी नशे की सी अवस्था में रहा। मन ही मन में वह सीमा को प्यार करता रहा। वह अत्यन्त लज्जाशील लड़का था। अपने प्रेम को जिह्वा पर लाने का उसे कभी साहस न हुआ। वह किसी पर अपना यह भेद प्रकट करना नहीं चाहता था। सीमा से पहले उसने सौन्दर्य को न कभी देखा था न कभी समझा था। अब उसे ऐसा लगा मानो सौन्दर्य की अमूल्य निधि सहसा उसके हाथ लग गई हो। इसने इस अमूल्य निधि को—सीमा को—उठाकर अपने हृदय में रख लिया—सिर से पाँव तक। किसी को इस बात का पता न चला। सीमा भी इस बात से अपरिचित रही क्योंकि वह बेहद लजीला था। उसे इस नई भावना से, इस नई अनुभूति से, इस नये सौन्दर्य से डर सा लगता था। वह चुपके २ ही अपने कल्पना-जगत के सुनहले उद्यानों में घूमना चाहता था—अकेले ही अकेले। वह यह नहीं चाहता था कि लोग उसे देखें और उसकी ओर ध्यान दें। इस बात के विचार से

ही उसका मुख लाल हो जाता और माथे पर पसीने की बूंदें आ जाती थीं।

वह सीमा को दिन में कई बार देखता था। और जब तक देख न लेता उसे चैन न पड़ता था। यदि यह कहा जाए कि वह उस रास्ते को भी पूजता था जिस पर से सीमा निकलती थी, तो इसमें कोई अतिशयोक्ति न होगी। उसके मन पर सदा एक नशा सा छाया रहता था। एक लवलीनता, एक विलक्षण प्रकार की व्याकुलता, मीठा दर्द सा हर समय उसके मन पर छाये रहते थे। सीमा को देखते ही उसके रोम २ में कोई जलता हुआ द्रव्य सा लहरें मारने लगता था। उसे ऐसा लगने लगता था मानो उसका शरीर टुकड़े २ हो रहा है और शरीर और आत्मा मानो पिघलते चले जा रहे हैं और पिघलते हुए क्षितिज का प्रकाश बनते चले जा रहे हैं। और यह प्रकाश सीमा के चारों ओर ढलता चला जा रहा है। फिर वह अपने मस्तिष्क में, इस प्रकाश में और सीमा में किसी अन्तर को पहचान न पाता।

लज्जा, झिझक, और डर के कड़े खोल ने उसे थाम रखा था। ये गुण उसे अपने पूर्वजों से, अपने समाज से तथा अपने देश के वातावरण से उत्तराधिकार के रूप में प्राप्त हुए थे। उसकी माँ उसकी देखभाल बड़े ध्यान से करती थी। वह उसे बहुत चाहती थी, और उसे बुरे लड़कों की कुसंगति से बचाने का पूरा प्रयत्न करती थी। और साथ ही वह उसे किसी भी लड़की से बातचीत नहीं करने देती थी। उसका एक उजले, स्वच्छ, पवित्र और दोषरहित वातावरण में पालन-पोषण हो रहा था कि सहसा उसके जीवन का सीमा के सौन्दर्य के साथ टकराव हुआ और उसका जीवन दो भागों में बँट गया। दोनों भाग अपने २ धुरे पर घूमने लगे। एक भाग वही पुराना था जिसमें घर था, माँ थी, कॉलिज था, खेल का मैदान था और पुस्तकें थीं। दूसरा भाग वह था जिसमें केवल सीमा थी। इन दोनों भागों के बीच में वही लज्जा, वही झिझक और वही डर लोहे की दीवार बनकर खड़े थे!

किसी भी व्यक्ति को उसके इस प्रेम का पता न था। लोग कहते हैं कि "इश्क और मुश्क छिपाए नहीं छिपते।" परन्तु उसने इस कहावत को झूठा प्रमाणित कर दिया। उसने अपने प्यार को वर्षों तक अपने अन्तस्तल में छिपाये रखा—उस सीप की भांति जो अपने अमूल्य मोती को लिये हुए भयंकर लहरों से दूर बहुत गहरे समुद्र में पड़ी हुई हो, जहाँ कोई ग़ोता लगाने वाला भी नहीं पहुँच सके। उसके मन की गहराई तक कौन पहुँचता? वह तो अपना ग़ोताख़ोर स्वयं अपने आप था। वह इस भेद को संसार से, सीमा से, यहाँ तक कि अपने आप से भी छिपाये रखना चाहता था। एक अज्ञात सा, अस्पष्ट सा डर हर समय उसके हृदय पर छाया रहता था कि यदि उसके भेद का पता चल गया तो उसके मोती का क्या बनेगा।

परन्तु कई बार जब उसका अन्तस् सीमा के अथाह सौन्दर्य की लहरों के थपेड़ों से तड़पने लगता तो उसका मन करता कि वह अपना भेद प्रकट कर दे और किसी सांकेतिक ढंग से सीमा पर अपना असीम दर्द प्रकट कर दे। कभी-कभी वह अनुभूति की गहरी चोट से झल्ला उठता और चाहता कि सीमा को अपने बाहुओं में इतने ज़ोर से कस कर पकड़ ले कि उसका दम घुटने लगे, उसकी बड़ी-बड़ी आँखें विस्मय से और भी बड़ी हो जायँ और उसके कोमल होंट इस तरह खुले रह जायँ, जैसे गुलाब की अधखिली कली, जिसे रात की ओस और प्रभात के झोंकों ने कच्ची नींद से जगा दिया हो। कभी-कभी इस तीव्र भावना के कारण लज्जा, झिझक और डर के ख़ोल के अन्दर ही अन्दर उसका दम घुटने लगता और उसकी इच्छा होती कि एक दम, एक ही झटके से इस ख़ोल को तोड़कर बाहर निकल आए—उस ख़ोल को तोड़कर उसके टुकड़े-टुकड़े कर दे—यहाँ तक कि उसके जीवन के दोनों भाग एक दूसरे से मिल जाँय और एक ही धुरे के चारों ओर घूमने लगें; परन्तु यह व्याकुलता, यह भावना थोड़ी देर के लिये जागृत होती थी, मानो किसी मज़बूत पिंजरे के अन्दर कोई पक्षी पर फड़फड़ा कर

रह जाय। थोड़ी देर के पश्चात् जीवन फिर उसी डगर पर चलने लगता था।

कई बार ऐसे अवसर भी आए जब वह सीमा से अकेला मिला। एक बार उसकी माँ ने घर से कहीं बाहर जाते समय सीमा को बुला भेजा था। माँ ने उससे कह दिया था कि उसके लौटने तक वह घर में ही रहे, फिर उसने सीमा के सामने चावलों का एक थाल रख दिया था और उससे कह दिया था कि वह उनमें से कंकर अलग कर दे और चावल संवारने के पश्चात् दाल भी धो दे। "इतने तक मैं अवश्य लौट आऊँगी" यह कह कर वह बाहर चली गई थी और जाते-जाते यह भी कह गई थी, "बेटा तुम भी सीमा की इस काम में सहायता कर देना।" माँ के चले जाने के पश्चात् वह चुपके से सीमा के निकट आकर बैठ गया और चावलों में से कंकर निकालने लगा। बहुत देर तक वे दोनों इसी काम में लगे रहे, परन्तु वह सीमा से कुछ भी न कह सका। उसे डर लगा रहा कि कहीं सीमा उसके दिल की धड़कन न सुन ले—वह उसकी उन आँखों को न देख ले जिनमें से उसका हृदय उछल कर बाहर निकलना और अपना भेद कह देना चाहता था। उसके मन की स्थिति उस समय विलक्षण थी। उसे लग रहा था मानो एक दैवी प्रकाश चारों ओर फैला हुआ है। इस प्रकाश में वह अपने और सीमा के सांस की मद्धम लय को एकाकार होते देख रहा था। चावल संवारने के पश्चात् वह वहाँ से उठ खड़ा हुआ और सीमा उठकर रसोई घर में दाल धोने लगी। उसके सुन्दर हाथों को देख-देख कर उस पर नशा सा छा रहा था। लम्बी, पतली, नाजुक अँगुलियाँ जिन्हें छूने के लिए उसका मन न जाने कितनी बार विह्वल हुआ था। क्या यूँ नहीं हो सकता कि वह आयु भर इस प्रकार सामने बैठी हुई दाल धोती रहे और वह उसे इसी तरह सामने बैठा हुआ तकता रहे। मन में यह विचार आते ही वह हँस पड़ा। कितना हास्यास्पद विचार है यह—

और असम्भव । इस जीवन के सब सपने यूँ ही होते हैं—मीठे, प्यारे आकर्षक, परन्तु असम्भव ।

एक बार वह उसी ख़ाली ज़मीन के टुकड़े पर से, जहाँ जंगली लाला खिल रहा था, सीमा के साथ फूल चुनने के लिए भेजा गया था । सर्दी की ऋतु थी । धूप खिली हुई थी और पकी हुई पीली-पीली घास हवा में लहरा रही थी । मैदान में स्थान-स्थान पर लाला के फूल उगे हुए थे और उनसे परे पंजतारे के पेड़ों की एक पंक्ति सीमा के घर तक चली गई थी । पंजतारे के पेड़ों पर लाल फूल आये हुए थे । दूर से ये पेड़ लाल छातों जैसे दिखाई देते थे । सीमा और वह घास की पत्तियों को अपने हाथों से छूते हुए, दबाते हुए, आगे बढ़ते गये । घास की पत्तियाँ नरम थीं—लम्बी, नरम, मुलायम और सुनहरी, जैसे सीमा के बाल । सीमा का दुपट्टा गर्दन से नीचे खिसक कर कन्धों पर गिर गया था और उसके बाल हवा में लहरा रहे थे—लम्बे, नरम, सुनहरे । उसका मन विह्वल हो उठा और उसने चाहा कि वह सीमा के बालों के साथ भी इसी तरह खेले जिस तरह वे दोनों उस समय घास की पत्तियों के साथ खेल रहे थे । धूप चमकदार थी और चमकते हुए आकाश की पृष्ठभूमि के सामने पंजतारे के लाल फूल सीमा के होटों की तरह मुस्कराते हुए दिखाई देते थे । हवा में घास की सौंधी सी सुगन्ध थी, या लाला की सुगन्ध, या धतूरे के सफेद फूलों की कड़वाहट परन्तु इस समय वह भी बुरी नहीं लग रही थी वरन् इन दोनों सुगन्धों के साथ मिलकर एक अनोखी सी महक पैदा हो गई थी—मीठी भी और कड़वी भी ।

चमकता हुआ सूरज, पञ्जतारे की लाल छतरियाँ, सुगन्ध से लदी हुई वायु और सीमा—मानो प्रकृति का जीवित और दैवी सौन्दर्य उसकी आँखों के सामने आ गया था। और उसका अन्तस् इस असीम सौन्दर्य की अनुभूति के बोझ से इतना दब गया कि वह सीमा से कुछ भी न कह सका। बस वे चुपचाप फूल चुनते रहे और वह

फूल चुन २ कर सीमा की झोली में डालता रहा—यहाँ तक कि झोली फूलों से इतनी भर गई कि फूल सीमा की ठोड़ी को छूने लगे। इन फूलों को उठाये हुए सीमा अब स्वयम् भी फूलों के एक पेड़ जैसी लग रही थी। कुछ देर के पश्चात् वे दोनों थककर पञ्जतारे के पेड़ों के नीचे जा बैठे। उसने सीमा के बैठने के लिए अपना कोट घास पर बिछा दिया। और सीमा उसकी इस बात पर हँस पड़ी। फिर वह आराम से अपने कानों में पञ्जतारे के फूल टाँकने में लग गई।

नहीं, उसने सीमा से कभी अपने दिल की बात नहीं कही। हज़ार कोशिश करने पर भी वर्षों तक वह उसे कुछ न कह सका। वह मन ही मन में सीमा से प्यार करता रहा, डरते २, झिझकते २। इस बीच में वह कुछ अधिक लजीला होता गया और उसकी झिझक पहले से भी अधिक बढ़ गई। उसने इसी बीच में अपनी शिक्षा समाप्त कर ली थी। फिर तीन वर्ष तक उद्यान विभाग में उसने ट्रेनिंग ली थी और अब वह सरकारी उद्यानों का बड़ा अधिकारी बन गया था। इसी बीच में सीमा का विवाह भी हो गया था। वह अब सिन्दूर का लाल टीका लगाये उसके घर आया करती थी। वह एक निर्धन ब्राह्मण की लड़की थी और एक निर्धन ब्राह्मण से ही ब्याही गई थी।

वह स्वयम् अब एक प्रतिष्ठित पदाधिकारी था—महाराज के उद्यानों का बड़ा अधिकारी। अब वह सरकारी उद्यानों के एक बंगले में रहता था। उसकी माँ उसके साथ थी और उसी तरह उसकी देख-भाल करती थी जैसे वह अभी दो वर्ष का बच्चा हो। शायद मन और अन्तस् में वह सचमुच ही दो वर्ष के बच्चे के समान था, क्योंकि वह अब भी सीमा को भूला नहीं था। उसका सीमा के प्रति प्रेम अब भी उतना ही तीव्र था बल्कि सीमा के विवाह के पश्चात् कुछ बढ़ ही गया था। जितनी अधिक वह अब उससे दूर हो गई थी, शायद उतना ही अधिक वह उससे प्रेम करने लग गया था। परन्तु अब उस प्रेम में विह्वलता बढ़ गई थी, कसक अधिक पैनी हो गई थी, और वह खोल

जो उसके जीवन में लोहे की डाट की भांति फँसा हुआ था अब उसकी आत्मा को कुचलता हुआ प्रतीत होता था।

उसे इस बात की कभी हिम्मत भी न हुई थी कि सीमा से अपने प्रेम की बात कह दे, अथवा अपनी माँ से कह दे कि वह उसका विवाह सीमा से कर दे। समाज ने ब्राह्मणों और अब्राह्मणों के बीच में जो दीवार खड़ी कर दी थी, उसे तोड़ने का तो विचार भी उसके मन में न आ सकता था। विवाह के पश्चात् सीमा का सौन्दर्य और भी चमक उठा था, मानो ऊषा की उज्ज्वलता को सूर्य की पहली किरणों ने छू दिया हो। सौन्दर्य की इस दीप्ति ने उसे चकाचौंध कर दिया था। झिझक, डर और लज्जा के होते हुए भी शायद उसके दिल के किसी अन्धेरे कोने में आशा की एक किरण अभी तक तड़प रही थी कि वह सीमा को प्राप्त कर लेगा। वह अपनी भावनाओं के सहारे बड़ी २ अभिलाषाएँ बाँधता। परन्तु उसका डर उसकी उमंगों का गला घोंट देता। सीमा अब तो विवाहिता थी, पतिव्रता, पवित्र स्त्री। परन्तु यह सब कुछ जानते हुए भी वह उसे चाहता रहा। अब उसे सीमा को देखने का अवसर कम मिलता था, परन्तु जब भी वह सीमा को देखता तो सीमा के मुख पर खेलती हुई मधुर मुस्कान को देखकर अनुभूति की तीव्रता से पागल सा होने लगता।

ऊदल उसी का मित्र था—निकम्मा, निडर और बेपरवाह। न उसे समाज की परवाह थी, न अपने माँ, बाप की। वह धर्म, कर्म से बहुत परे रहता था। वह पंचायत-विभाग में एक अधिकारी था। नगर के प्रतिष्ठित लोग उसे घृणा की दृष्टि से देखते थे क्योंकि लोग समझते थे कि इसका चरित्र ठीक नहीं है। वैसे भी कोई भला आदमी उसका साथी न था। यही लुहार, कुम्हार, जुलाहे आदि लोगों से उसने अपना मेल-जोल बढ़ा रखा था। ऊदल के और उसके स्वभाव में दिन-रात का अन्तर था। परन्तु शायद इसी विभिन्नता के कारण उनकी मित्रता बहुत गहरी थी। ऊदल सदा उसे छेड़ा करता और उसके धार्मिक,

राजनैतिक और निजी विश्वासों की हँसी उड़ाया करता, "इस संसार में प्रत्येक व्यक्ति स्वार्थी है, इस पूंजीवादी युग में हर व्यक्ति का एक मूल्य नियत है। प्रत्येक व्यक्ति एक विशेष मूल्य पर बिक जाता है। लोग अब भी बिकते हैं—बाज़ारों में, गली-कूचों में, दफ़्तरों में। यह नये प्रकार की दासता है, परन्तु लोग इसे 'दासता' के नाम से नहीं पुकारते, क्योंकि दासता अवैध है। समाज में स्त्रियों का स्तर ऊँचा हो गया है। परन्तु वे पूर्ववत् बिकती हैं, बेची जाती हैं। परमात्मा से लेकर स्त्री तक हर वस्तु संसार में ख़रीदी जा सकती है, यदि ख़रीदने वाले के पास पैसा हो—पैसा, पैसा, पैसा।" ऊदल इसी प्रकार की सैंकड़ों ऊटपटाँग बातें बकता। ऊदल की बातें सुनकर उसे बहुत क्रोध आता था और वह उससे घन्टों बहस किया करता। फिर बातें करते २ वह सहसा चुप हो जाता। एक विलक्षण सी उदासी की काली छाया उसकी आत्मा पर छा जाती और उसकी बड़ी २ काली आँखों में आँसू छलकने लगते।

उसे इस तरह दुःखी और चुप देखकर ऊदल उसे और भी तंग करता—"बातें करते-करते इस तरह उदास क्यों हो जाते हो? क्या तुम्हें किसी से प्रेम है? आश्चर्य है कि तुम्हारे जैसा डरपोक और लज्जा-शील व्यक्ति भी किसी स्त्री से प्रेम कर सकता है। क्या तुमने कभी किसी स्त्री की शक्ल भी देखी है? कभी किसी स्त्री से बात भी की है? वास्तव में दोष तुम्हारा नहीं। तुम्हारा पालन-पोषण ही ग़लत ढङ्ग से हुआ है। अम्मी की गोद में ही तो पलकर जवान हुए हो। तुम किसी से क्या ख़ाक प्रेम करोगे? स्त्री को देखते ही तुम्हारे तन-बदन पर कप-कपी छा जाती है। जिह्वा लड़खड़ाने लगती है, माथे पर पसीने की बूँदें आ जाती हैं। देखो, देखो अभी से तुम्हारा मुख लाल हो रहा है। लो, यह लाली तो कानों तक जा पहुँची। झेंप क्यों रहे हो? भैया, अपना इलाज करो। यह प्रेम-व्रेम सब बकवास है। मुझे देखो, विवाह नहीं किया, परन्तु दर्जनों स्त्रियों से प्रेम कर बैठा हूँ। विवाह तो मैं कभी

करूँगा भी नहीं, क्योंकि विवाह में स्त्री महँगी पड़ती है। मैं तो कभी-कभार स्त्री को ख़रीद लिया करता हूँ—जिस तरह जुराब या दस्ताना ख़रीद लिया जाता है। फिर जब वह बेकार हो जाती है तो उसे फेंक देता हूँ। इस जगत में हर वस्तु का एक मूल्य होता है। उस मूल्य पर वह वस्तु प्राप्त की जा सकती है और जब उस वस्तु का उपयोग समाप्त हो जाता है तो वह फेंक दी जाती है। हर जगह यही होता है—दफ़्तरों में, कारख़ानों में, बाज़ारों में, और......घरों में भी। यह तुम प्रेम का क्या रोग लगा बैठे हो? बताओ तो सही, वह कौन अप्सरा है जिससे तुम्हें इतना गहरा प्रेम है?"

इस पर वह झुंझला कर कहता, "मुझे किसी से प्रेम-प्रेम नहीं है। यह तुम कैसी ऊटपटाँग बातें करते हो।

ऊदल हँस कर उत्तर देता, "नहीं बताते तो न सही। परन्तु तुम्हारी ये आँखें सब कुछ बता रही हैं। और एक दिन तुम्हें अपने मुख से सब कुछ बताना पड़ेगा।"

और सचमुच एक दिन उसे ऊदल को सब कुछ बता देना पड़ा। एक दिन आकाश पर बादल छाये हुए थे। संध्या का समय था। ऊदल और वह ऊदल के घर में अँगीठी के निकट बैठे हुए आग ताप रहे थे। उसने ऊदल को सब कुछ बता दिया। उसका मन बहुत उदास था। कमरे से बाहर कुहर छाया हुआ था जिसने वातावरण को उदास बना दिया था। इस वातावरण में वह और भी व्याकुल और उदास हो गया था। इस बोझ ने आज उसके ख़ोल को तोड़ दिया। और उसने अपने गुप्त प्रेम की कहानी झिझकते-झिझकते, डरते-डरते ऊदल से कह डाली। ज्यों-ज्यों वह कहानी कहता गया, उसके हृदय की धड़कन तीव्र होती गई। मन में मानो एक तूफ़ान उमड़ा चला आ रहा था। उसकी घुटी हुई प्यासी आत्मा की सारी व्याकुलता मानो एकदम बाहर निकल आना चाहती थी। जब उसने कहानी समाप्त की तो उसकी और ऊदल की आँखों में आँसू चमक रहे

थे। ऊदल को पता न था कि उस लज्जाशील युवक के हृदय में प्रेम का एक अथाह समुद्र ठाठें मारता है। वह बहुत विस्मित हुआ और उसे अपने मित्र पर बहुत दया आई।

जब ऊदल अपने मित्र की प्रेम-कहानी सुन चुका तो उसने उसके कन्धे पर थपकी देकर कहा, "मुझे क्या पता था कि एक दिन मुझे तुम्हारा डाक्टर बनना पड़ेगा। फिर वह रुक कर बोला, "तुम्हारी जेब में दस-दस रुपये के दो नोट होंगे ?"

उसने दो नोट निकाल कर दिय और पूछा, "क्यों क्या बात है ?"

"कुछ नहीं" ऊदल मुस्कराया, तुम्हारे लिए दवाई लेने जा रहा हूं।" यह कह कर वह द्वार बाहर से बन्द करके चला गया।

वह ऊदल की बात समझ न सका। सोचा, शायद शराब लेने गया हो। ऊदल सदा ही इस प्रकार की ऊटपटाँग बातें किया करता था। इसलिये उसने ऊदल की बात की तरफ कुछ ध्यान न दिया। और आग तापते हुए फिर अपने विचारों में खो गया। बाहर बादल घिर आये थे और सामने के पहाड़ की चोटी पर झुके पड़े थे। उनकी गरज भयानक थी और बिजली की चमक मानो बादलों की क्रोधाग्नि थी—मानो बादल उस पर क्रोध कर रहे थे कि उसने क्यों अपने प्रेम के भेद को प्रकट कर दिया था। बाहर से दर्दनाक सीटियों की आवाज़ें आ रही थीं। और खिड़कियों के शीशे खड़खड़ कर रहे थे। उन्हीं आवाज़ों को सुनते-सुनते शायद वह सो गया। उसे यह पता नहीं था कि वह कितनी देर तक इसी अवस्था में बैठा रहा। सहसा उसने द्वार पर एक हल्की सी खटखट सुनी। उसने सोचा ऊदल होगा। क्षण भर के बाद ही फिर खटखट हुई और द्वार धीरे से खुल कर बन्द हो गया। यह सीमा थी। सीमा उसे देखकर चुप थी। फिर आँखें नीची किये, पाँव बढ़ा कर उसके समीप आई और उसके पास वाली कुर्सी पर बैठ गई।

उसने अपने मन में सोचा—सचमुच यह सीमा है—सीमा—

उसकी वर्षों की प्रेयसी—सृष्टि का जीवित और अलौकिक सौन्दर्य। वही लम्बे रेशमी सुनहरे बाल, वही प्यारा मुखड़ा, वही रसीले होंट, वही सफेद मोहनी गर्दन। यह सचमुच सीमा है। उसके हाथ स्वतः आगे बढ़े और उसके बालों से खेलने लगे। यह वही बाल हैं—सुनहले, मुलायम। यह वही चेहरा है। उसकी अँगुलियाँ सीमा के गालों को छूने लगीं—मानो कोई अन्धा रास्ता भूल गया हो और बढ़ते हुए तूफ़ान में हाथों से टटोल-टटोल कर रास्ता ढूंढ़ रहा हो। सीमा के शरीर में एक हल्की-सी कपकपी पैदा हुई। ये वही होंट हैं जिन्हें चूमने के लिये वह सैंकड़ों बार पागल हो चुका था। उसने धीरे से एक बार, दो बार, उन होंटों को चूमा—फीके और ठंडे होंट, मानो वह किसी मिट्टी की मूर्ति को चूम रहा हो। क्या, क्या, यह वही सीमा है? उसकी दृष्टि सीमा के हाथों पर पड़ी—सुन्दर हाथ, खड़िया मिट्टी की भाँति सफेद और मुलायम। उसने उसके हाथ अपने हाथो में ले लिये। सहसा उसे ऐसा लगा जैसे वह उन हाथों की उँगलियों को सिकुड़ते हुए देख रहा है। उन में झुर्रियाँ प्रकट हो रही हैं और त्वचा काली पड़ती जा रही है। सहसा एक ज्वाला-सी उठी और उसने घबड़ा कर हाथ छोड़ दिया। वह एक दम उठ खड़ा हुआ। उसे ऐसा लगा जैसे उसका दम घुटा जा रहा है, जैसे किसी ने उसके गले में एक पत्थर फँसा दिया है और वह बोल नहीं सकता। उसकी आँखों के सामने काले-काले घेरे से नाचने लगे। उसे ऐसा अनुभव हुआ कि यदि वह एक क्षण भी और इस कमरे में रहा तो घुट कर मर जायेगा। उसने अपने हाथ फैलाये और दौड़ता हुआ कमरे से बाहर निकल गया। दौड़ते-दौड़ते उसने ऊदल के अट्टहास की ध्वनि सुनी।

वह भागता हुआ जा रहा था और वर्षा के छींटे उस पर पड़ रहे थे। वह कुहरे के अन्धकार में भागा हुआ जा रहा था, परन्तु न उसने वर्षा की परवाह की, न अन्धकार की। उसे चारों ओर के संसार का कोई होश न था। कोई उसके कानों में चिल्ला २ कर कह रहा था, "संसार

में हर वस्तु का मूल्य है—परमात्मा से लेकर स्त्री तक।" उसने अपने दोनों कानों में अँगुलियाँ ठूंस लीं और भागता हुआ चला गया। पीले कुहरे में उसने पञ्जतारे के पेड़ों की एक पंक्ति देखी जो छाया की भांति उसके सामने से भागती हुई चली गई। नीलराज के लम्बे २ कोमल से फूल हरी पत्तियों पर झुके हुए थे। उसे भागते देखकर सहसा उन्होंने अपनी आँखें खोलीं और उसे सकरुण दृष्टि से देखने लगे। पीली २ घास की लम्बी, नरम और सुनहरी पत्तियाँ कोहरे में चारों ओर से उभर २ कर हवा में लहराने लगीं। उसने अपनी आँखें बन्द कर लीं, और बढ़ते हुए तूफ़ान में वह आगे ही आगे भागता गया। उसका दम घुटा जा रहा था, उसके अन्तस् में मानो कोई चीज़ फँसती जा रही थी। उसका सारा शरीर काँप रहा था। भागते २ उसके पाँव एक दम रुक गये, मुट्ठियाँ भिच गईं और वह कराहते हुए बोला, "सीमा! सीमा!!" जैसे वह अपने ईश्वर को बुला रहा हो—वह ईश्वर जो वहाँ मौजूद न था। फिर सहसा एक भयानक हँसी उसके होंटों से फूट पड़ी—हा हा हा—किसी ने बन्द ज्वालामुखी का मुख खोल दिया था और लाखों तोपों की गरज के साथ लावा फट २ कर बाहर बह रहा था। मानो पुजारी चिल्ला रहे थे और ग़ज़नवी ने गदा मार कर सोमनाथ की मूर्ति को टुकड़े २ कर दिया था। मानो उसके जीवन में फँसी हुई लोहे की डाट एक अन्तिम संघर्ष से टुकड़े २ हो गई थी, और जीवन के दोनों चक्र घूमते २ एक दूसरे के साथ पूरी तरह मिल गये थे। उसकी टाँगें कांपी और वह सहसा गीली भूमि पर गिर पड़ा।

जब वह होश में आया तो वर्षा में बिल्कुल भीग चुका था। चारों ओर घोर अन्धकार छाया हुआ था और वर्षा बराबर हो रही थी। वह धीरे से घुटनों का सहारा लेकर उठा। अब वह बिल्कुल होश में था। और घर के रास्ते का पता लगा सकता था। चलते २ उसे ऐसा लगा मानो उसके अन्तस् का तूफ़ान समाप्त हो चुका है और उसके जीवन में अब न कोई खोल है और न कोई धुरा।

: २ :

तिरंग चिड़िया

उस समय मेरी आयु छः वर्ष की थी। शरद् ऋतु का प्रारम्भ था और लम्बी पीली घास सूर्य की किरणों से ज्वलन्त दिखाई देती थी। नाशपातियों में पक्का रस उतरने लगा था और पृथ्वी पर जैली के बड़े २ नीले फूल जो दूर से ग्रामोफ़ोन बाजे के भोंपू जैसे दीखते थे, चारों ओर फैले हुए थे। मैं और कुन्तल और उसकी सहेली जरिया घास में टिड्डे पकड़ रहे थे—बड़े २ लम्बी २ टाँगों वाले टिड्डे जो दूर से घास की पत्तियों की तरह दिखाई देते हैं। परन्तु जब उनकी टाँग पकड़ ली जाए तो किस तरह फुर्र करके तड़फते हैं—अद्भुत तमाशा होता है। कासनी रंग की तीतरियाँ जो घास पर कलग़ी की तरह बैठी रहती हैं। और जब उन्हें हाथ से पकड़ लिया जाए तो हाथों में उनका कासनी रंग लगा रह जाता है और अँगुली की पोरी पर तीतरी की आकृति के सुन्दर चित्र बन जाते हैं।

मुझे याद है हम तीनों घुटनों के बल चल रहे थे और घास की भीनी २ महक चारों ओर फैली हुई थी। यद्यपि घास की सरसराहट काफ़ी ऊँची थी परन्तु हम अपनी समझ में बिल्कुल चुपचाप, सांस रोके चल रहे थे, ताकि टिड्डों को हमारे आने का पता न लग सके और वे हमारी आवाज़ सुनकर भाग न जाँय। जरिया की आँखें शिकार की प्रत्याशा में चमक रही थीं, उसके नीले होंट अन्दर की ओर भिंचे

हुए थे और गाल फूले हुए। कुन्तल के बालों में घास की अनेकों पत्तियाँ उलझी हुई थीं, जैसे किसी चिड़िया ने उसके बालों में अभी-अभी घोंसला बनाना चाहा हो। फिर सहसा कुन्तल ने धीमे स्वर में कहा—हश।

मैंने एक अँगुली अपने मुँह पर रखकर जरिया से कहा—हश।

जरिया ने हम दोनों की ओर देखकर कहा—हश।

और फिर हम तीनों और भी अधिक उकड़ु होकर चलने लगे, कि कहीं वह गुलाबी रंग की तीतरी जो हम से कुछ गज़ों की दूरी पर थी हमें न देखले।

सहसा टीहू-टीहू करती हुई एक चिड़िया हमारे सामने से उड़ गई। कई क्षणों के लिए उसने आकाश में पर फैलाए, गहरे, लाल, पीले और मटियाले रंग की सुन्दर धुनक आखों के आगे खिंच गई। फिर क्षण भर में ही वह लुप्त हो गई। चिड़िया ने पर समेटे और हवा में डुबकी लगाई। क्षण भर के पश्चात् वह धुनक फिर निकली—लाल, पीली और मटियाली। इस प्रकार पर तोलती हुई, समेटती हुई, उड़ती हुई और डुबकी लगाती हुई वह दूर होती चली गई। और अन्त में दूर एक धुन्ध में लुप्त हो गई।

कुन्तल ने हमें बतलाया कि यह तिरंग चिड़िया है। वह आयु में मुझ से एक वर्ष बड़ी थी। "तुम लोगों ने शोर मचाकर उसे डरा दिया नहीं तो हम उसे पकड़ लेते और एक सुन्दर पिंजरे में बन्द करके रखते।"

"यह तिरंग चिड़िया" मैंने जरिया को धमकाते हुए कहा, "तुमने उसे शोर मचाकर उड़ा दिया।"

"टीहू, टीहू" जरिया ने बड़े चंचल ढंग से तिरंग चिड़िया की नक़ल उतारते हुए कहा। मैंने घास की पत्तियाँ मुट्ठी में भर कर उसके बालों पर बखेर दीं।

× × ×

मैं वकालत की परीक्षा पास करके और टाइप सीखकर एक विलायती कम्पनी के दफ्तर में नौकर हो गया। २५० रुपया वेतन मिलता था, और अभी विवाह न हुआ था। इसलिए मैं जहाँ चाहता था वहाँ रहता था, जो चाहता था वह करता था। शाम बहुधा सिनेमा-घर में व्यतीत होती थी। सिग्रेट, पान आदि सभी वस्तुओं का थोड़ा थोड़ा शौक़ था। और पान में यदि कहीं से ज़रा सी कोकीन मिल जाय तो फिर तो बात ही क्या! इन सब कामों में, जो सूरज छिपने के पश्चात् होते थे, निहालसिंह मेरा साथी होता था। वह हमारे दफ्तर में "सैकिंड क्लर्क" था और ठोड़ी से नीचे दाढ़ी मुंडाता था—इस तरह कि भेद खुलने न पाए।

एक दिन निहालसिंह ने चुपके से मेरे कान में कहा, "आज वह माल हाथ लगा है कि बस...।"

मैंने पूछा, "कितने औंस होगी?"

वह कहने लगा, "कोकीन नहीं। तुम्हें तो कोकीन की लत ही पड़ गई है। किसी दिन इसके पीछे तुम जेल जाओगे, या तुम्हें लक़वा मार जायगा। सब कोकीन-बाज़ों का यही हाल होता है।"

"तो क्या कोई बढ़िया देसी शराब मंगाई है?" यदि ऐसा है तो निहालसिंह, तुमने सचमुच निहाल कर दिया। बस आज शाम को रहे।"

निहालसिंह अपनी मूँछों पर ताव देता हुआ बोला, "नहीं, यह बात नहीं है प्यारे। बस आज मेरे साथ शाम को चलना होगा। परन्तु यह फिर बतायेंगे कि कहाँ चलना होगा।"

शाम को हम ह्विस्की पीकर और "ईवनिंग-इन पैरिस" लगाकर चले। रास्ते में निहालसिंह ने मोतिये के हार भी ख़रीद लिये और इन्हें गूलर के बड़े-बड़े पत्तों में लपेट कर अपने कोट की बाहर वाली जेब में डाल लिया। बड़े बाज़ार से हम छोटे बाज़ार में हो लिये और छोटे बाज़ार से निकल कर लाल बाग़ के बीचों-बीच से होते हुए ग्वालों की गली में जा पहुंचे। वायु में गोबर की दुर्गन्ध रची हुई थी। गाय-

भैंसें डकरा रही थीं और बच्चे शोर मचा रहे थे। गवाले अश्लील गालियाँ दे रहे थे और गवालिनें दूध दुह रहीं थीं।

गवालों की गली के परे एक टूटी हुई मस्जिद थी। इस से आगे म्युनिसिपल कमेटी की एक लालटैन थी—बिजली की नहीं, वरन् मिट्टी के तेल की। उसका शीशा टूटा हुआ था और बत्ती बाहर को निकली हुई थी। वह काली सिकुड़ी हुई बत्ती किसी मृत-पशु की जिह्वा की भाँति एक ओर को बाहर लटकी हुई थी। निकट ही एक दो-मंजिला मकान था—जीर्ण-शीर्ण, टूटा-फूटा। इसके निचले आँगन में घोड़े हिनहिना रहे थे और तांगे वाले ताश खेल रहे थे। ऊपर के भाग में मैले पर्दे मटियाली सिरकियाँ और टाट के बोरे लटके हुए थे। नीचे वाली मंज़िल से ऊपर वाली मंज़िल तक पहुंचने के लिये लकड़ी का एक जीर्ण-शीर्ण ज़ीना था, जो पाँव रखते ही चीख़ने-चिल्लाने लगता था। परन्तु हम ने परवाह न की और ऊपर चढ़ते चले गये। ऊपर चढ़ कर निहालसिंह दाएँ हाथ को एक अँधेरे दालान की ओर मुड़ा। इसके अन्त में एक कोठड़ी थी। अँधेरा इतना था कि द्वार भी साफ़-साफ़ दृष्टिगोचर नहीं हो रहा था। सिहाल सिंह ने द्वार खटखटाया। द्वार खुला और फिर बन्द हो गया।

मैं बाहर अकेला रह गया।

कुछ समय के बाद—जो निःसन्देह मुझे बहुत दीर्घ प्रतीत हुआ—और जिस में हत्या, ख़ून, पिस्तौल, छुरे, समाचार-पत्रों के मोटे-मोटे शीर्षक, बड़े साहब का चेहरा, मेरी माँ का दुःखपूर्ण विस्मय, बाप की जूतियाँ तथा अन्य बहुत सी भयानक बातें मेरे मानसिक नेत्रों के सामने घूम गईं, मेरा जी चाहा कि ज़ीने से तुरन्त नीचे उतर कर भाग जाऊँ। इतने में द्वार खुला और निहालसिंह बोला, "अपनी भाभी से मिलो!"

मैं भाभी से मिलता रहा। निःसन्देह वह अत्यन्त सुन्दर, कोमलाङ्गी और लावण्यमय थी, परन्तु साथ ही अत्यन्त भावुक भी थी।

यदि निहालसिंह किसी दिन न आता तो वह रो रोकर बुरी गत बना लेती। उसे मरी पहाड़ से एक लड़का भगा कर लाया था। फिर वह एक बूढ़े स्टेशन-मास्टर के पल्ले पड़ी, जिससे उसे बहुत घृणा थी। वह वहां से भाग निकली और स्टेशन पर निहालसिंह ने उसे फांस लिया। नाम था बीराँ। सामने एक ताँगे वाला रहता था। टाट के बोरिये के पीछे से उसकी लड़की मुझे घूरा करती थी।

बीराँ ने मुझे एक दिन एक गीत सुनाया जिस में उसके देश के सनोबरों का, जङ्गली झरनों का और उनकी तीखी बर्फ़ीली हवाओं का वर्णन था "जिनके छेड़ने से झीलों की छाती पर भँवर नाचने लगते हैं।"

एक दिन मैं अकेला उसके पास गया। उसने पूछा, निहाल कहाँ है? मैं चुप हो रहा। कुछ क्षणों के पश्चात् वह रोने लगी। जब उस के आँसू सूख गये तो मैंने उसे बताया कि निहालसिंह की बदली एक दूसरे नगर में हो गई है। मैंने कहा, "यदि तुम चाहो तो मैं तुम्हें उस नगर में भिजवा सकता हूँ।"

इस बार बीराँ रोई नहीं। उसके होटों पर एक विषादपूर्ण मुस्कान उत्पन्न हुई। उसने अपने होंट इतने ज़ोर से अन्दर भींचे कि उनमें से रुधिर निकल आया। परन्तु वह रोई नहीं। मैंने रुमाल से उसका रुधिर पोंछा।

हम बहुत रात गए बातें करते रहे। नीचे घोड़े हिनहिना रहे थे। तांगे वाले शराब के नशे में मस्त होकर गालियाँ बक रहे थे। एक तांगे वाला एक पुलिसमैन से झगड़ रहा था जिस को उसने पूरा कमीशन नहीं दिया था।

मैंने बीराँ से कहा, "बीराँ, मैं अब चलता हूँ। यदि तुम चाहो तो तुम्हें निहालसिंह के पास...।"

उसने मेरे बूट के तस्मे खोल डाले और जुराबें उतार दीं और मुझे चारपाई पर बिठा दिया। फिर उसने नीचे बैठ कर मेरे पाँव अपने दोनों

हाथों में ले लिये और उन्हें अपनी छाती से लगा लिया।

× × ×

मैंने कहा, "बीराँ, मैं तुम्हें शताब्दियों से जानता हूँ। तुम्हारी हसी, तुम्हारी मुस्कान, तुम्हारे नेत्रों की चंचलता से परिचित हूँ और सदा परिचित रहूंगा। परन्तु कोई चीज़ मुझे कहती ...।"

"क्या कहती है ?"

"यही कि तुम मुझ से कुछ छिपाती हो।"

"क्या ?"

"यदि यह बता सकता तो तुम से पूछता ही क्यों ?"

वह बोली, "जीवन में मृत्यु के बाद मुझे आनन्द प्राप्त हुआ है। बस, इस आनन्द को अपने हृदय में छिपाना चाहती हूँ। तुम से छिपाना चाहती हूँ, सच। बस, और कोई बात नहीं है।"

इतने में किसी ने द्वार खटखटाया। यह तांगे वाले की लड़की थी। उसके हाथ में एक पिंजरा था, इसी बहाने मुझे देखने आई थी। मेरी ओर देखते हुए कहने लगी, "बीराँ, देखो कितनी सुन्दर चिड़िया है।"

बीराँ ने पिंजरा हाथ में ले लिया। उसमें लाल, पीले और मटियाले रँगों की एक सुन्दर सी चिड़िया थी जो बैठी हुई चुपचाप दाना चुग रही थी। बड़ी भोली-भाली और प्यारी चिड़िया थी वह !

"इसे क्या कहते हैं ?" बीराँ ने पूछा।

"चिड़िया", लड़की ने उत्तर दिया। "और क्या ?"

"टीहू, टीहू", सहसा बीराँ ज़ोर से चिल्लाई और मेरे मस्तिष्क में मानो लाल, पीले और मटियाले रंग की धुनक फैल गई। मैंने बीराँ का हाथ पकड़ लिया और काँपते हुए लहजे में कहा, "जिरिया ?" उसका मुख विवर्ण हो गया, होंट कांपने लगे, आँखें बन्द हो गईं और वह पिंजरे पर गिर पड़ी।

× × ×

मेरा विवाह होने वाला था। मैंने अपने विवाह से दो महीने पहले जिरिया को दो सौ रुपये दिये और उसे रेल में सवार करा दिया। मैंने उसे समझाते हुए कहा, "तू सीधी अपने चचा के पास चली जा। मैंने उन्हें पत्र लिख दिया है। वे तेरा सब प्रबन्ध कर देंगे। तेरा विवाह अच्छी तरह हो जाएगा। मैं भी तेरे लिये कोई अच्छा सा वर तलाश करूँगा।"

वह गाड़ी में बैठ गई और रोने लगी।

आस-पास की स्त्रियों ने पूछा, "तेरी घरवाली है ?"

मैंने कहा, "हां।"

"मैके जा रही है ?"

"हाँ।"

जिरिया रोती रही। स्त्रियाँ मुस्कराने लगीं। एक बुढ़िया बोली, "हाय, हाय, स्त्री की भी क्या ज़िन्दगानी है। माँ-बाप पराए हो जाते हैं और वह पराए मर्द पर जान छिड़कने लगती है। हाय, हाय !!"

गाड़ी चलने लगी। मैंने बुढ़िया से कहा, "इसका ज़रा ध्यान रखना।"

स्त्रियाँ मुस्कराने लगीं। एक स्त्री कहने लगी, "अजी आप इतने क्यों घबराते हैं ? हम भी तो अकेली जा रही हैं। आप चिन्ता न करें। हम इसे घर तक सुरक्षित पहुँचा देंगे।"

जिरिया ने अपना मुख आँचल में छिपा लिया और इसी तरह खिड़की की ओट में मुंह छिपाए रोती रही—यहाँ तक कि गाड़ी दृष्टि से ओझल हो गई।

× × ×

मेरी बहिन कुन्तल का विवाह हो चुका है। वह दो बच्चों की माँ है। मेरे तीन बच्चे हैं। मैं अब शराब, कोकीन आदि किसी बुरी वस्तु का प्रयोग नहीं करता। भद्र पुरुषों जैसा नागरिक जीवन व्यतीत करता हूं। दिन में दफ़्तर में काम करता हूं और शाम को सैर करने जाता

हूं। रात को छोटे बच्चे को गोद में लेकर खिलाता हूं। मैं प्रसन्न हूं, मेरी धर्मपत्नी मुझ से प्रसन्न है और मेरा ईश्वर भी मुझ से प्रसन्न है।

परसों मैं प्रसन्न चित्त दफ्तर जा रहा था कि मार्ग में मुझे एक बुर्क़ापोश स्त्री ने हाथ के इशारे से रोक लिया और वह मुझे एक गली में ले गई। गली में पहुंच कर उसने बुर्क़ा उतार दिया।

"जिरिया! यह तुम्हारी क्या हालत हो गई है?"

वह चुप खड़ी रही।

"तुम कहाँ रहती हो?"

उसने कोई उत्तर नहीं दिया।

मैंने कहा, "यहाँ कोई देख लेगा, आओ पास वाले बाग़ में चलें।" यह कहकर मैं उसे पास ही लाल बाग़ में ले गया। जिरिया ने मुझे बताया कि उसके चचा ने उससे दो सौ रुपये छीन लिए थे और उसे घर से बाहर निकाल दिया था। वह द्वार द्वार पर घूमती रही। उसके मन में एक यही अभिलाषा रही थी कि किसी तरह वह वापस मेरे पास पहुँच जाय। अब वह अपने प्यारे देश को लौटना चाहती थी। उसने कहा कि वह अब अपने माँ-बाप के पास कभी लौट कर नहीं जायगी। नगरों की गन्दी धरती में लोगों की झूठी प्रवंचनापूर्ण प्रेम-लीला ने उसकी आत्मा को कुचल डाला था। अब उसके अपने देश के पहाड़ों की उजली पवित्र धरती ही उसे पवित्र और शुद्ध कर सकती है।

उसने कहा, "एक बार तुम मुझे वहाँ पहुँचा दो। केवल एक बार। फिर मैं उस हरी भरी धरती से चिमट जाऊंगी और उस समय तक न उठूंगी जब तक वह मेरे सारे पाप चूस न ले। मुझे एक बार वहां पहुँचा दो।"

मैंने कहा, "इस समय मुझे दफ्तर पहुँचने में देर हो रही है।

कल तुम इसी समय यहीं मिलना। मैं सब प्रबन्ध कर दूंगा।

× × ×

दूसरे दिन मैंने दफ्तर से छुट्टी ली और घर से बाहर ही न निकला। जिस संसार में मैं अब रहता था उसका जिरिया के संसार से कोई सम्बन्ध ही नहीं था। उस दिन के पश्चात मुझे जिरिया भी फिर कभी दिखाई नहीं दी।

अब मस्तिष्क में उसका चित्र भी शेष नहीं हैं। सब चिन्ह मिट चुके हैं। हां, कभी कभी पिंजरे में बन्द चिड़िया की टीहू टीहू की दर्दनाक चीख़ कानों में गूंजने लगती है। मस्तिष्क में लाल, पीले और मटियाले रंगों की धुनक फैल जाती है और डूब जाती है। सोचता हूँ यह पिंजरा किसने बनाया है?

: ३ :

नुक्कड़

सब से पहले मैंने तुम्हें अपने घर की गली के नुक्कड़ पर देखा था। यद्यपि हम इकट्ठे रहा करते थे, लड़ाई झगड़ा किया करते थे, मारपीट भी हो जाया करती और सन्धि भी, परन्तु मैंने इससे पहले तुम्हें वास्तव में कभी नहीं देखा था। और जब देखा तो तुम्हारा विवाह हो चुका था और तुम्हारे नाक में हीरे की कणी जगमग-जगमग कर रही थी। तुम्हारे सँवलाए हुए मुखड़े पर गुलाब की सी मोहिनी, गुलाब का सा लावण्य आ गए थे। इससे पहले मैंने तुम्हें क्यों नहीं देखा था, तुम्हारी आँखों की इस कजलाई हुई सुन्दरता से क्यों परिचित नहीं हुवा था, तुम्हारे व्यक्तित्व की मधुर लय को क्यों नहीं सुना था, तुम्हारे शरीर की कोमलता और लोच और तुम्हारी आत्मा की कसक से मैं क्यों अपरिचित रहा था? और फिर तुम्हें देखा तो उस समय क्यों देखा जब कि यह लय और यह लोच किसी दूसरे की सम्पत्ति बन चुके थे। फिर, तुम्हें इस तरह देख कर पराएपन की अनुभूति क्यों हुई? क्यों तुम्हारे दाहिने नथने में वह जगमगाती हुई हीरे की कणी अब तक काँप रही है, तुम्हारे सँवलाए चेहरे पर गुलाब का लावण्य ऊषा काल की कोमल समीर की भांति खेल रहा है, क्यों तुम्हारी चितवन के लोच ने, उसकी कोमलता और सरलता ने एक ऐसी मीठी, पूर्ण और

स्थायी अनुभूति उत्पन्न कर दी है जो मिटाए से नहीं मिटती—मानो मैं अब भी तुम्हारी आँखों की चमक को, उनकी अलबेली छवि को देख सकता हूँ, छू सकता हूँ, चूम सकता हूं और उनके मूक शब्दों को सुन सकता हूँ। जानता हूं कि अब ऐसा न हो सकेगा। शायद यह भी नहीं जानता कि मैं यह बात जानता हूं। हाँ, इतना अवश्य जानता हूं कि तुम्हारी सेन्दूरी चूड़ियों ने और साड़ी के सरसराते हुए आँचल ने नुक्कड़ के प्रत्येक कण को अपनी लाल छवि के प्रकाश से देदीप्यमान कर दिया था और मेरी आत्मा का प्रत्येक कण समझ गया था कि उस ने आज पहली बार तुम्हें देखा है।

उस समय मैंने केवल यह चाहा था कि तुमसे पूछ लूं कि यह परायापन क्यों ? मैं तुम्हें क्यों पहली बार देख रहा हूँ, तुम मुझे क्यों नहीं पहचानतीं, तुम्हारे पाने न पाने की रोमाञ्चकारी विह्वलता से मेरी आत्मा क्यों काँप रही है। सोचा कि जब तुम फिर मिलोगी तो अपनी छाती से लगाकर यह बात पूछ लूंगा......परन्तु वह समय अब तक नहीं आया।

× × ×

प्रत्येक व्यक्ति ने तुम्हें देखा है, तुम्हें चूमा है, जब मैंने तुम्हें अपनी छाती से लगाया तो उस समय भी तुम एक दुकानदार थी, इससे अधिक नहीं। और मैं एक चरित्रहीन नागरिक, इससे कम नहीं। मेरा जीवन चौक के कोठों में व्यतीत होता था। तुम्हारी आँखों में काजल था, होटों पर सुर्ख़ी की तह और शरीर पर रेशम की सरसराहट। बालों में कोई नई सुगन्ध रची हुई थी। क्या गुप्त और रहस्यमय बातें हो रही थीं—जिनमें न कोई गुप्तता थी, न रहस्य। प्रेम की कहानियाँ, प्रेम की बातें, जिनमें प्रेम लेशमात्र भी नहीं था। मैं 'अमीर', 'दाग़', 'आतिश', और 'मजरूह' की ग़ज़लें पढ़ रहा था और तुम मेरी छाती से लिपट रही थीं। मेरी जेब में सिक्के खन-खना रहे थे और तुम उनके कारण मेरी ग़ज़लों को कड़वी गोलियों की भांति निगल रहीं थीं। हम

दोनों मग्न थे—रोगी भी और रोग भी। पेटेंट औषधियों की भांति मैं नए-नए कवित्त उगल रहा था और प्रेम का एक अलौकिक वातावरण उत्पन्न कर रहा था। और तुम्हारी आँखों का विषाद गहन होता जा रहा था। तुम्हारी उदासी की कोमलता ने, तुम्हारी असह्य थकन की विवशता ने, तुम्हारे आकुल आत्म-समर्पण ने मुझे एक अद्भुत आनन्द की अनुभूति करा दी। तुम मेरी छाती से लगी थीं और मैं अपने जलते हुए होटों से तुम्हारी जलती हुई आंखें चूम रहा था, और तुमसे टूटे हुए, लड़खड़ाते हुए, उखड़े हुए मस्त शराबी वाक्यों में अपना प्रेम प्रकट कर रहा था। मैं तुम्हारी अपेक्षा स्वयं अपने को अधिक धोखा देने का प्रयास कर रहा था। यह जानते हुए भी कि पिछले कई महीनों से मैं प्रतिदिन तुम्हारे यहाँ आता हूँ, तुमसे अपना प्रेम प्रकट करता हूँ, तुम्हारे शरीर के प्रत्येक आनन्द, तुम्हारे मन की प्रत्येक गति से भली भांति परिचित हूँ, फिर भी मैंने तुम्हें विवाह के लिए कह दिया। तुम क्यों उस समय व्याकुल हो उठीं? तुम्हारा मुखड़ा मेरी अँगुलियों के घेरे में था और मैंने तुम्हारे मुख पर वह भावना देखी जो मृत्यु अथवा सृजन के अवसर पर देखी जाती है। तुम्हें अच्छी तरह पता था कि मैं झूठ बोल रहा हूँ। परन्तु फिर भी यह विलक्षण दीप्ति क्यों? मानो मेरी नरम, गरम, व्याकुल अंगुलियों का प्रत्येक रोम प्रकाश की एक किरण बन गया था और तुम्हारा गोल २ मुखड़ा उस कुंडल के बीच में था। सहसा तुम मुझे मरियम जैसी पवित्र दिखाई देने लगीं। और तुम्हारी आँखों की वह तड़प—मानो आत्मा अंगारों पर लोट रही हो, मानो ईसा को त्रिशूल पर गाड़ दिया हो, और अंगुलियों की प्रत्येक गति जल्लाद की रक्तिम कील हो—मैंने उस समय इन आँखों से तुम्हारे भयानक एकाकीपन का अनुमान किया, तुम्हें नरक की भयानक अग्नि में झुलसते हुए देखा, तुम्हें ईसा की भांति पवित्र मृत्यु के हाथों में निष्प्राण शरीर को सौंपते हुए देखा। और सहसा मुझे ऐसा लगा मानो मैंने तुम्हें इससे पहले कभी नहीं देखा। तुम इस समय वह

वेश्या न थी जो चाँदी के कुछ सिक्कों के लिये मेरी छाती से लगी हुई थी, वरन् सात समुद्र पार की कोई राजकुमारी थी—बहुत दूर की रहने वाली, अज्ञात, परियों की रानी। यह कैसा जादू है, कैसा छलावा है ? क्यों आज मैं तुम्हें पहली बार देख रहा हूं ? और इससे पहले क्यों तुम्हें नहीं देख सका ? आश्चर्य यह है कि इतने गहरे अपनेपन के होते हुए भी आज तुम पराई थी, इतने गहरे परिचय के होते हुए भी तुम आज इतनी अपरिचित थी कि हम एक दूसरे को पहचान न सके। यह परापपन की अनुभूति क्यों ?...मेरी आत्मा अभी तक इस विचार से काँप रही है।...तुम मेरी छाती से लगी हो और ज्योति-मंडल में तुम्हारा गोल चेहरा है और मरियम की सी पवित्रता और मसीह का सा विनीत भाव तुम्हारे चेहरे पर बिखरा हुआ है। मैं विवाह की बात कर रहा हूँ और तुम कहीं दूर चली गई हो। बरसों मेरे आलिंगन में रहने के बाद भी आज तुम पराई हो—जैसे तुम्हारी अत्मा ने अपने पर समेट लिये हैं और वह उड़ने के लिये तैयार है। तुम कौन हो ? कहां जाना चाहती हो ?...और मैं क्यों आज तुम्हें पहली बार देख रहा हूं, पहली बार पहचान रहा हूँ।

× × × ×

सड़क पर वह लड़की भीख मांग रही है। उसकी गंदी बाहों पर मैल की तह चढ़ी हुई है। इन्हीं हाथों को फैला फैला कर वह भीख मांग रही है। यह लड़की सदा उसी नुक्कड़ पर बैठती है। उसके निकट वाली पटरी का फ़र्श ऊबड़-खाबड़ है। यहां एक गढ़ा सा है। गंदगी उसमें भर कर ऊपर उभर आई है और उसका एक टीला सा बन गया है, मानो यह कूड़े-करकट की क़ब्र सी है। इसे देखकर ऐसा लगता है मानो इस जगह शहर भर का गला-सड़ा माद्दा इकट्ठा हो गया है—एक पके हुए फोड़े की भांति। और यह लड़की जो यहां हर रोज़ भीख मांगती है इस शहर का गला-सड़ा माद्दा ही तो है—अंधे समाज का गंदा फोड़ा, यह मैली मटियाली बाहें, यह चुंधियाई हुई आँखें, यह

भूल में भरे हुए रस्सी जैसे बाल, नाक के नथुनों में मक्खियां घुसी हुई, और इन मक्खियों जैसी भिनभिनाहट की आवाज़ में वह कह रही है—भूखी हूं, गरीब हूं, एक पैसा बाबा।" यह लड़की युवा है, यह वृद्धा है, या बालिका है—इस बात का कुछ पता नहीं चलता। ऐसा लगता है मानो जीवन अपनी डगर पर चलते २ रुक गया हो। बस, सब कुछ थम गया है। यहां केवल एक अभिव्यक्ति है, एक भावना—और वह है भूख की। उस के मुख पर मुहासे हैं, और प्रति दिन यही मुहासे, यही मक्खियों से अटे हुए नथुने, यही मैली, गंदी, फैली हुई बाहें देखने में आती हैं। पैसा मिले या न मिले, यह सड़क की पटरी का फोड़ा प्रति दिन यहीं ज्यों का त्यों मौजूद रहता है।

मैं प्रति दिन उसे देखता हूँ। वह भी मुझे देखती है। मैं भी इस नगर का निवासी हूं, इसका 'मालिक'। मैं भिखारिन को भीख देता हूं, गालियां देता हूं, इस पर दया करता हूँ और भीख देकर असीम आनन्द प्राप्त करता हूं। मेरे मानसिक सन्तोष और आनन्द के लिये इस भिखारिन का अस्तित्व कितना आवश्यक है! यदि यह न हो तो मैं किस पर दया करूंगा, किसे एक पैसा देकर अपने हृदय की विशालता का प्रमाण दूंगा? किस से सहानुभूति जिताकर अपने अहंकार को खूराक पहुँचाऊँगा? किस का उपकार करके अपना परलोक सुधारूंगा? इसकी गरीबी, इसका असहायपन, इसका हाथ फैलाकर पैसा मांगना और पैसे के लिये मिन्नतें करना—ये सब बातें मेरे मानसिक सन्तोष और मेरे जीवन के लिये कितनी आवश्यक हैं। भगवन्! मैं तेरा किस तरह धन्यवाद करूं? तू अपने बच्चों की खुशी का कितना ध्यान रखता है।

परन्तु, आज यह भिखारिन चुपचाप है। आज इसने न तो हाथ फैला रखे हैं और न ही इसके होंट खुले हैं—इन होंटों से भीख मांगने की पुकार नहीं आ रही। भिखारिन! मुझे निराश न कर। भीख मांगो, भिखारिन, भीख मांगो! तुम ने सर्दी से ठिठुरते हुए इस बिल्ली

के बच्चे को अपनी छाती से लिपटा लिया है और चुप होकर बैठ गई हो ! इसे परे फैंक दो, अच्छी भिखारिन ! अपनी मैली, मटियाली बाहों से इसकी गर्दन मरोड़ दो। यह ख़र-ख़र करता हुवा बिल्ली का बच्चा तुम्हारे व्यक्तित्व का शत्रु है, तुम्हारे धंधे का शत्रु है, मेरे मानसिक सन्तोष और आनन्द का शत्रु है। इसे फैंक दो, पटरी की जादूगरनी।

परन्तु जादूगरनी पर आज स्वयं जादू का प्रभाव हो गया है। निश्चय ही यह वही भिखारिन नहीं है जिसे रोज़ मैं इस नुक्कड़ पर देखता था। आज मैं उसकी जगह किसी अन्य व्यक्ति को देख रहा हूं— सृष्टि का एक विलक्षण व्यक्ति, आंखों में एक विलक्षण चमक, होंटों पर एक विलक्षण मुस्कान, कलाइयों में एक विलक्षण लोचदार मुड़ाव, और छाती से लिपटा हुवा बिल्ली का बच्चा ! निःसन्देह यह वह रोज़ वाली भिखारिन नहीं है, यह वह पटरी नहीं है, वह नगर नहीं है, वह संसार ही नहीं है। ममता की इस पवित्र भावना को तूने कहां से पा लिया ? मैं आज वास्तव में तुझे पहली बार देख रहा हूँ, पहली बार तुझे पहचान रहा हूं। और तू मुझे पहचानती नहीं, ओ फटे कपड़ों वाली राजकुमारी ? तू पांव पसारे, बिल्ली के बच्चे को छाती से लिपटाए, लोक-परलोक से उदासीन, इस नुक्कड़ के पत्थरों के सिंहासन पर बैठी है और तेरी पलकों पर सात समुद्रों के मोती शोभायमान हो रहे हैं। मेरे अन्दर इतना भी साहस नहीं कि आगे बढ़कर तेरी पलकों से आंसू की एक बूँद ही चुन सकूँ। तू आज मुझे पहचानती भी नहीं है ! यह परायापन क्यों ? क्यों तूने अपने निराश्रित जीवन की नंगी-भूखी दुनियां में इस मीठी और दैवी भावना को स्थान देकर मुझे भिखारी बना दिया है ? क्या तू अपने भिखारी को भी नहीं पहचानती ?—जो हर रोज़ तुम्हारी हथेली पर एक पैसा रखकर तुम से आत्मिक आनन्द की भीख मांग लिया करता है। आज तू उसे भी नहीं पहचानती ?

× × × ×

प्राणप्रिये ! जीवन-संगिनी ! वर्षों तक मैंने तुझ से प्रेम किया है। इन में वे क्षण भी सम्मिलित हैं जिनमें समय और जीवन-मरण की सीमाएं भी मिट गई थीं। गली के नुक्कड़ वाले मकान में वे दिन भी तुझे याद होंगे जब हाथ के छू जाने मात्र से, पलकों के संकेत मात्र से, अथवा मुस्कान की एक हलकी सी लहर से जीवन-वीणा के तारों के स्वर मिल जाते थे और प्रेम की लौ अग्नि की लपट की भांति भड़क उठती थी। हमने उस अग्नि को बार-बार चखा है, इस अग्नि के स्थायी स्वाद में कोई अन्तर नहीं पाया। यह लौ सदा अधिक-ही-अधिक भड़कती रहती है, यह लगाव, यह आसक्ति शाश्वत है। प्राणेश्वरी ! तू मेरे जीवन का चरम उद्देश्य है, मैं तेरे जीवन का केन्द्र हूँ। एक ही आकर्षण है, एक ही धुरी है, एक ही तीव्रता, एक ही कसक। जैसे किसी संगीत-वाद्य के भिन्न-भिन्न तारों से एक ही लय उत्पन्न होती है, अथवा चक़माक़ के पत्थर के दो टुकड़ों से एक ही चिनगारी उठती है, उसी प्रकार हमने अपने मन, अपनी आत्मा और अपने समस्त अस्तित्व को एक दूसरे में लय करके एक ही राग को उत्पन्न किया है—क्योंकि जब शरीर और आत्मा प्रेम की भट्टी में मिलते हैं तो कुछ भी शेष नहीं रहता, केवल अग्नि ही अग्नि.........अग्नि परमात्मा है।

परन्तु क्या तुझे वह दिन भी याद है जब शाम के समय हम दोनों सोफ़े पर बैठे हुए 'दीवाने-ग़ालिब' का सचित्र संस्करण देख रहे थे। ठंड पड़ रही थी और आकाश में बादल छाये हुए थे। नौकर ने एक तार लाकर तेरे हाथों में रख दिया था। तार में केवल इतना लिखा था, "शेखर इराक़ में मारा गया है—रतन।" यह शेखर वही था जो तुझ से उस समय से प्रेम करता था जब तू प्रेम की भावना से परिचित भी न थी, और, जैसा कि तूने स्वयं मुझे एक बार बताया था, उसने एक बार सफ़ेदे के एक पेड़ के नीचे तेरे होंटों को चूमा था—तेरे जीवन का पहला अनजान चुम्बन, क्योंकि तू उस समय इतनी छोटी थी कि चुम्बन के कसकपूर्ण आनन्द से परिचित नहीं हो पाई थी

फिर तू क्यों उदास हो गई थी ? तू सोफ़े पर बैठी हुई मेरी बाहों के घेरे में बन्द थी, परन्तु फिर भी तू सहसा कहीं खोई गई। मेरी आत्मा तुझे पुकारती रह गई और तू पर फड़फड़ाती हुई उस बन्धन को तोड़ कर न जाने कहां उड़ गई। मेरी आत्मा ने तुझे लाखों आवाज़ें दीं, परन्तु तूने एक न सुनी। शायद तेरे कान बहरे हो चुके थे, और तेरी जिह्वा निश्चेष्ट। तेरा हृदय किसी पुरानी भावना से फिर ओत-प्रोत हो गया था। शायद तू उस समय इराक़ के तपते हुए मरुस्थल में जा पहुँची थी जहां रेत के जलते हुए बिस्तर पर शेखर मरा पड़ा था। शायद तू सफ़ेदे के उस पेड़ के नीचे खड़ी थी और तेरे होंट किसी अनजान चुम्बन की न पहचानी हुई विह्वलता एवं आल्हाद को पहचानने का प्रयत्न कर रहे थे। उस समय मेरी बाँहें नहीं, वरन् किसी पराए युवक की बांहें तेरे गले के चारों ओर लिपटी हुई थीं। तू उस समय मेरी आवाज़ नहीं सुन रही थी, वरन् किसी दूसरे व्यक्ति का प्रेम तेरे अन्तर में गूंज रहा था। मैंने तेरी आंखों में आंसू छलकते देखे, तेरे होंटों को किसी नई भावना से प्रभावित होकर काँपते देखा और मेरी आत्मा में यह भयानक सत्य प्रकट हुआ कि मैं तुझे नहीं पहचानता, तू मेरी प्रेयसी नहीं है, तू मेरे लिये एक अजनबी है। तेरा मुझ से कोई सम्बन्ध नहीं। उस भयानक क्षण के असीम फैलाव में मुझे अनुभव हुवा कि तुझे आज से पहले—उस क्षण से पहले—मैंने कभी नहीं देखा.........उस क्षण के गहरे, स्पष्ट, और अमिट पराएपन की अन्तिम लकीर मेरी आत्मा में अब तक खिंची हुई है।

× × × ×

यह मेरा बच्चा है—मेरा इकलौता बच्चा। इसकी आकृति, मुस्कान और तेवरी के तिल से यही प्रकट होता है कि यह मेरे जीवन-विकास की दूसरी कड़ी है। जो कड़ी पूरी हो चुकी है वह अपनी पूरी बपौती को लेकर इस नन्हे से शरीर में उतर आई है। मैं इसे भली भांति पहचानता हूं और यह मुझे। घंटों यह मेरी गोद में खेलता रहता है।

रात को यह मेरी छाती से लगकर सोता है। दफ़्तर में बैठा २ मैं कल्पना की सहायता से इसे अपनी गोद में ले लेता हूं और यह मेरे मानसिक नेत्रों के सामने ठुमक २ कर उछलता है और मैं मुस्करा पड़ता हूं, इसकी चंचलतापूर्ण-चेष्टाओं पर हँस पड़ता हूं। मेरे साथी क्लर्क मेरी इन विलक्षण चेष्टाओं को देख २ कर आश्चर्य-चकित होते हैं, मेरी ओर अंगुलियां उठाते हैं और प्रायः खिलखिला कर हँस पड़ते हैं। मूर्ख कहीं के! वे क्या जानें कि मैं अपने इकलौते बच्चे के साथ खेलने में व्यस्त हूं।......और जब शाम को मैं थका-थकाया दफ़्तर से घर की ओर पांव बढ़ाता हूं तो उसकी मोहिनी मूरत प्रतिक्षण मेरी आंखों के सामने होती है और प्रतिक्षण वह निकटतर होती जाती है—यहां तक कि मैं घर के द्वार पर पहुँच जाता हूं और उसे द्वार पर प्रतीक्षा करते हुए देखता हूं। वह आनन्दविभोर हो तालियां बजाता हुवा, "चचा आगए, चचा आगए" कहता हुआ मेरी टाँगों से लिपट जाता है और मैं उसे उठा कर ज़ोर से छाती से लिपटा लेता हूं। हां, तो तू सचमुच मेरी आत्मा का अंश है, मेरे जिगर का टुकड़ा।

एक दिन जब मैं दफ़्तर से लौटा तो मैंने देखा कि वह पत्थर के कुछ नीले-पीले टुकड़ों से खेलने में व्यस्त है। मैं ने उसे आवाज़ दी परन्तु वह खेलने में इतना व्यस्त था कि उसने मेरी आवाज़ नहीं सुनी, मुझे देखा तक नहीं। हँसते हुए, अपने आप से बातें करते हुए, वह पत्थर के उन्हीं टुकड़ों से खेलता रहा। मैंने फिर ज़ोर से आवाज़ दी। वह चौंका, हमारी आंखें मिलीं, और मैं जैसे चौंक गया—केवल एक क्षण के लिए उसने मेरी ओर इस तरह देखा मानो वह किसी अजनबी को देख रहा हो। मैं पूरे विश्वास के साथ कह सकता हूं कि उस एक क्षण के लिये मैं अपने बच्चे के लिये पूर्णतया अजनबी था। वह उस समय मुझ से अधिक पत्थर के उन टुकड़ों से घुल मिल रहा था। वह मुझ अजनबी से कुछ भयभीत सा लग रहा था, और मुझे ऐसी दृष्टि से देख रहा था मानो वह किसी व्यक्ति के बिना बुलाए उसके संसार

में टपक पड़ने पर अप्रसन्न हो रहा हो। उस समय उसकी दुनियाँ पत्थर के उन टुकड़ों तक ही सीमित थी—वही टुकड़े ही उस समय उसके सब कुछ थे। आह! वह कष्टप्रद क्षण! मैं उस भयानक क्षण को कभी नहीं भूल सकता। हम दोनों एक दूसरे के लिये अजनबी थे और जीवन के निश्चल तट पर खड़े एक दूसरे को आश्चर्य-चकित हो कर देख रहे थे।—"तू कौन है नवागन्तुक! यहां क्यों खड़ा है? जा मुझे अपने दोस्तों के साथ खेलने दे।" ओ नन्हे शिशु! तू कौन है? तू कहाँ से आया है? मेरे घर के द्वार पर पत्थर के इन टुकड़ों से क्यों खेल रहा है?" उस एक क्षण में, जो मुझे सृष्टि की भांति असीम प्रतीत हुआ, एक भयानक परापुपन की अनुभूति मेरे मन पर छा गई। पिता और पुत्र दोनों एक दूसरे से अपरिचित थे और मौन खड़े हुए एक दूसरे को तक रहे थे।

सहसा मुझे ऐसा लगा मानो मैं अकेला हूं, नितान्त अकेला। जीवन और मृत्यु, प्रेम और उदासीनता की सीमाओं को चीरता हुआ यह नंगा सत्य मुझ पर प्रकट हुआ कि मैं अकेला हूं, जीवन के नुक्कड़ पर अजनबी की भांति खड़ा हूं, और मुझे कोई नहीं पहचानता। मैंने जैसे स्वतः दोनों हाथ फैला दिये और चिल्ला कर कहा, "क्यों, मेरे नन्हे बेटे, नुक्कड़ की राजकुमारी-भिखारिन, और मेरी प्राणेश्वरी, मेरी जीवन-संगिनी! मुझे तुम सब बताओ यह पर्दा कैसा है, यह दीवार कैसी है, परापुपन की अनुभूति क्यों है?"

: ४ :

हम सब गन्दे हैं

पात्र

१. जगमोहन	—	नवयुवक, रईस का बेटा, जोशीला, बातूनी, अकर्मण्य, डरपोक।
२. रम्भा	—	जगमोहन की धर्मपत्नी, कम बोलने वाली, हँसी और बात करने के ढँग में व्यंग्य झलकता है।
३. विनोद	—	जगमोहन का मित्र।
४. अनवर	—	जगमोहन का एक और मित्र। उसकी आवाज़ भारी है।
५. मुंशीजी	—	कारिंदा, वकील, मुनीम, चाटुकार।
६. पासी	—	नए विचारों का किसान।
७. सेठजी	—	पुराने युग का रईस, भारी राजसी आवाज़।
८. छुम्मिया	—	सेठजी की चुलबुली युवा रखैल।

समय : दोपहर के बाद

स्थान : जगमोहन का ड्राइङ्ग रूम

(एक द्वार सेठ साहब की बड़ी बैठक में खुलता है, दूसरा रम्भा के कमरे में। तीसरा द्वार मिलने वालों के आने-जाने के लिए है। इस समय तीनों द्वार खुले हुए हैं। जब पर्दा उठता है तो जगमोहन, रम्भा, अनवर, विनोद चाय पीते हुए दिखाई देते हैं।)

जगमोहन—हां, तो मैं क्या कह रहा था अनवर ?

अनवर—जगमोहन भाई ! मैं तुमसे कई बार कह चुका हूँ कि मुझे तुम्हारी बातें याद नहीं रहतीं। मैं कोई तुम्हारी डायरी नहीं, रोज़नामचा नहीं, और फिर इस पर मुसीबत यह है कि तुम समझते हो कि जो वाक्य तुम्हारे मुँह से निकल गया वह ब्रह्म-वाक्य है और हमें चाहिए कि हम उसके एक-एक अक्षर को याद रखें।

रम्भा—(हँसती है)

जगमोहन—रम्भा ! इसमें हँसी की कौनसी बात है ?

रम्भा—कुछ नहीं (खिलखिलाकर हँस पड़ती है)

जगमोहन—फिर वही ठि ठि ठि ठि हँस रही हो। मुझे भी तो पता चले कि आख़िर किस बात पर हँस रही हो।

रम्भा—अनवर भाई को इनके पिताजी विवश कर रहे हैं कि ये उनका ईंटों का भट्टा संभाल लें और 'महिला-उद्धार-सभा' का काम बन्द कर दें। इस पर अनवर भाई को क्रोध आ रहा है और वह क्रोध अब आप पर उतारा जा रहा है। यही सोच कर मैं हँस रही थी। क्यों अनवर भाई ?

अनवर—तुम्हें उस चुड़ैल ज़ुबैदा ने बताया होगा।

विनोद—यह भी अच्छी रही !

अनवर—तुम चुप रहो जी विनोद !

जगमोहन—विनोद क्यों चुप रहे ? इस दुर्घटना के सम्बन्ध में तुम्हारे हर मित्र को कुछ न कुछ कहने का पूर्ण अधिकार है। परन्तु मुझे इसमें हँसी की कोई बात नहीं दिखाई देती। मैं नहीं समझ सकता कि आखिर तुम्हारे पिताजी को क्या अधिकार है कि वे तुम्हें ईंटों के भट्टे के धंधे में लगा दें। तुम समाज के एक शिक्षित व्यक्ति हो, नए विचारों के, यही नहीं बल्कि स्वतंत्र विचारों के व्यक्ति। तुम अपना जीवन देश और जाति को समर्पित कर देना चाहते हो। हिन्दुस्तान की उन लाखों करोड़ों असहाय, निरीह, दुखी स्त्रियों की सेवा में…… ।

रम्भा—'महिला-सुधार-सभा' ! (हँसती है)

जगमोहन—फिर ?

रम्भा—क्षमा कीजिये, जग, डार्लिंग; मुझे ईंटों का भट्टा याद आ रहा है। (हँसती है)

जगमोहन—ईंटों का भट्टा ? हाँ, हाँ, ईंटों का भट्टा अनवर की योग्यता को कुचल डालेगा, इसकी प्राकृतिक क्षमताओं को मसल डालेगा। संसार के किसी भी बाप को यह अधिकार नहीं है कि वह इस तरह अपने बेटे की मानसिक शक्तियों और आत्मिक उन्नति की आकांक्षाओं को कुचल दे। यह समाज का अन्याय है, घोर अन्याय ! अनर्थ !! अत्याचार !!!

विनोद—तुम्हें इसके विरुद्ध अपनी आवाज़ ऊँची करनी चाहिए, अनवर !

अनवर—तुम चुप रहो विनोद !

जगमोहन—विनोद क्यों चुप रहे ? विनोद भी तुम्हारा मित्र है। यह भी स्वतन्त्र विचारों का व्यक्ति है। वह भी एक नये समाज का निर्माण चाहता है जिसमें बाप बेटे पर अत्याचार न कर सके, जिसमें माँ-बाप अपने बेटे की इच्छा के विरुद्ध उसकी आकांक्षाओं

के हरे-भरे उद्यान को न उजाड़ सकें। मैं कहता हूँ, अन्नो, तुम इन्कार कर दो। इसी समय इन्कार कर दो। कहदो, मैं ईंटों का भट्टा नहीं चलाना चाहता।

रम्भा—(हँसकर) महिला-सुधार-सभा चाहता हूँ।

जगमोहन—रम्भा !!

रम्भा—क्षमा कीजिये ! Sorry !

जगमोहन—इन्कार कर दो, अनवर ! नहीं तो तुम्हारा जीवन नष्ट हो जाएगा। नए विचार इस अत्याचार को चुप-चाप सहने की इजाज़त नहीं देते। जीवन एक पवित्र वस्तु है। जो पिता अपने पुत्र का जीवन नष्ट करना चाहता है—जाने या बेजाने—वह अत्याचारी है। मैं तुमसे कहता हूँ अन्नो, यदि मेरा बाप मुझसे इस प्रकार की अनीति बरते तो......।

(छम्मिया गाती हुई प्रवेश करती है)

छम्मिया—नजरिया तोरी, साँवरिया ! ओह ! छोटी सरकार हैं, क्षमा कीजियेगा, मैं समझी बड़ी सरकार......।

जगमोहन—सेठ साहब बड़ी बैठक में हैं, इसी द्वार से चले जाइये।

छम्मिया—ओह ! शुक्रिया ! शुक्रिया ! (सारंगिये से) चले आओ दोनों (गाती हुई) साँवरिया नजरिया तोरी—साँवरिया...।

जगमोहन—हाँ, तो मैं कह रहा था, विनोद......

विनोद—बाप की अनीति की बात चल रही थी कि......

रम्भा—कि छम्मिया जान आ गई। (हँसती है)

जगमोहन—रम्भा ! तुम योंही बिना बात, हर समय हँसती रहती हो।

रम्भा—क्षमा करदो, जग डार्लिंग ! मैं तुम पर नहीं, छम्मिया जान की पोशाक पर हँस रही थी। कैसी भौंडी रुचि है इनकी—कंधे नंगे, छाती नंगी, ब्लाउज़ पीछे से ऊँचा कटा हुआ, नंगेपन की मूर्ति !

जगमोहन—मैं नंगेपन को बुरा नहीं समझता। सारे प्राणियों में केवल मनुष्य ही ऐसा प्राणी है जो कपड़े पहनता है। कपड़े प्रकृति-नियम के विरुद्ध हैं। मैं तो जीवन को उसके वास्तविक रूप में देखना पसन्द करता हूँ।

विनोद—अर्थात् नंगा!

जगमोहन—हाँ नंगा! नग्न अवस्था ही जीवन में वास्तविक रूप में ऊँचे चरित्र की परिचायक होगी। जब हम अपने जीवन, अपने वचनों और कार्यों, अपने समाज, अपनी अर्थ-व्यवस्था तथा अपने रीति-रिवाजों को नग्न, वास्तविक रूप में देखेंगे, उस समय संसार वास्तविक रूप में स्वतंत्र होगा। जब अन्तर और बाह्य में भेद मिट जाएगा, जब करने और कहने में भेद नहीं रहेगा, जब मनुष्य के आर्थिक और सामाजिक जीवन पर पड़े हुए सब पर्दे, कपड़े और छिलके उतर जाएंगे, तब संसार स्वतन्त्र होगा। तब जाकर कहीं संसार में वास्तविक शान्ति स्थापित होगी। नग्न-अवस्था ही जीवन की वह ठीक अवस्था होगी जो हमें उन्नति के मार्ग पर अग्रसर करेगी।

अनवर—क्या उन्नति नंगी छाती, नंगे कंधों और ऊँचे कटे हुए ब्लाउज़ से ही सम्बन्ध रखती है?

जगमोहन—मैं तो छम्मिया की प्रशंसा करता हूँ कि वह बहुत ही कम कपड़े का प्रयोग करती है। आखिर मानव-शरीर की बनावट तो वही है जिसे सारा संसार जानता है। फिर उसे छिपाने से क्या लाभ? मैं यह नहीं समझ सका कि मानव-शरीर की नग्न-अवस्था से किस तरह अनाचार फैल सकता है। इसका तो तात्पर्य यह है कि प्रकृति स्वयं अनाचारिणी है, नहीं तो नंगे कंधे, नंगी छाती और नंगी कमर देखकर आपके हृदय में भ्रष्ट विचार उत्पन्न न होते।

विनोद—प्रकृति भ्रष्टाचारिणी नहीं है।

रम्भा—प्रकृति भ्रष्टाचारिणी है, विनोद भाई, नहीं तो आप हज़रतगंज में कपड़े की दुकान न करते।

विनोद—मैं—मैं कपड़ों की दुकान करता हूँ, परन्तु इसका नग्नावस्था से क्या सम्बन्ध है ? अनाचार और भ्रष्टाचार से क्या सम्बन्ध ? वह तो मेरे पिताजी की दुकान है।

अनवर—तो ईंटों का भट्टा भी तो मेरे बाप का है।

रम्भा—और छम्मिया जान भी तो जगमोहन की नहीं, बड़े सेठ साहब की रखेल है।

(पृष्ठभूमि से छम्मिया के गाने की आवाज़ आती है)

जगमोहन—रम्भा !

रम्भा—क्षमा कर दो, जग डार्लिंग, परन्तु वास्तव में मैं तो तुम्हारे पक्ष में बात कह रही थी। आह ! यह ग़ज़ल तुमने सुनी ? छम्मिया कभी-कभी तो दिल तड़पा देती है। टुक यह द्वार तो खोल दो धीरे से।

(अब छम्मिया के गाने की आवाज़ साफ़ सुनाई देती है।)

सेठजी—द्वार बन्द कर दो, जगमोहन ! द्वार बन्द कर दो।

अनवर—द्वार बन्द कर दो !

विनोद—द्वार बन्द कर दो क्योंकि छम्मिया गा रही है।

रम्भा—छम्मिया तो नग्न-पन को पसन्द करती है।

अनवर—छम्मिया—जो वेश्या है।

जगमोहन—मुझे वेश्याएं पसन्द नहीं। परन्तु सेठ जी के प्राइवेट जीवन में मैं कोई हस्तक्षेप नहीं कर सकता। मेरा कोई अधिकार नहीं है कि मैं उनके निजी मामलों में दखल दूं। वास्तव में इस प्रकार का अधिकार किसी भी व्यक्ति को नहीं है। हमें एक-दूसरे के निजी जीवन में कोई हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। यही सच्ची स्वतंत्रता है। इसी लिये तो मैं कहता हूँ कि अनवर को वह ईंटों का भट्टा...

विनोद—फिर वही ईंटों का भट्टा।

अनवर—अरे भाई, एक बार कह दिया मैं ने तुम्हारी बातें सुन लीं। बड़े झक्की हो तुम जगमोहन ! मैं अपने बाप से अवश्य लड़ूंगा। परन्तु भाई जगमोहन, तुम्हारा जीवन-सिद्धान्त मुझे इतना सरल नहीं दीखता जितना तुम समझते हो। और न ही मुझे यह सच्चा दीखता है। क्या तुम समझते हो कि तुम्हारे पिता जी का प्राइवेट जीवन तुम्हारे जीवन पर कोई प्रभाव नहीं डालता ?

जगमोहन—बिल्कुल नहीं। तुम जानते हो मुझे वेश्याओं से—और सच तो यह है कि सारे पुराने सामाजिक ढाँचे से—कोई दिलचस्पी नहीं। मैं तो वेश्या को मिटा कर स्त्री और पुरुष दोनों को बराबर का अधिकार देना चाहता हूं। मैं तो एक ऐसा समाज चाहता हूं जहां कोई किसी पर अत्याचार न कर सके। और यह तभी हो सकता है जब सब बराबर हों। मैं तो समानता—पूर्ण समानता—के पक्ष में हूं। अनवर भाई ! तुम मेरे वचन और कर्म में कभी कोई अन्तर नहीं देखोगे। यह जीवन-सिद्धान्त मेरे जीवन, मेरे अस्तित्व का मुख्य अंग है।

रम्भा—हीयर ! हीयर !!

जगमोहन—रम्भा ! तुम यहां से चली जाओ।

रम्भा—डार्लिंग, क्षमा करदो। Sorry, परन्तु मैं तो तुम्हें शाबाश दे रही थी।

जगमोहन—हां, तो अब तुम सभी यहाँ से चले जाओ। आज शाम को हमें पिक्चर देखनी है। और लेडी वामनगीर के यहां मेरी चाय है, और इस समय साढ़े पाँच बजे हैं। रम्भा डार्लिंग...!

रम्भा—अच्छा तो अनवर भाई, आज्ञा ! और हाँ, वह ईंटों का भट्टा कहाँ है ?

अनवर—दलीप पुर में। यहां से बीस कोस पर।

रम्भा—किसी दिन मैं और जगमोहन तुमसे मिलने आएंगे वहां।

अनवर—मगर सुनिये, मैं तो वहां नहीं जा रहा...।

रम्भा—(ज़ोर से) गुड-बाई !

(मुंशी जी आते हैं)

अनवर—भाभी जी अजीब बातें करती हैं।

मुंशी जी—हुजूर ! यह पासी किसान आया है धीमा गाँव का मुखिया।

जगमोहन—तो मैं क्या करूं ? इसे सेठ साहब के पास ले जाओ।

मुंशी जी—हुजूर ! सेठ साहब तो इस समय मिल नहीं सकते। आप जानते हैं...ही ही ही ही...।

जगमोहन—ओह ! अच्छा, हां, तो यह क्या कहना चाहता है ?

मुंशी जी—दया-निधान ! यह गाँव का मुखिया है। और गाँव वाले इस बार लगान नहीं देना चाहते। ही ही ही ही......।

जगमोहन—लगान नहीं देना चाहते ?

पासी—(पूरबी भाषा में) सरकार ! अब के फसल नहीं हुई। बरसा की एक बूंद नहीं बरसी। लगान कहां से दें सरकार ? इस बार हमें माफ़ी मिल जाय, तो अगली बार सब मामला चुका देंगे सरकार।

जगमोहन—लगान कैसे माफ़ हो सकता है ? कम से कम मैं तो इस बात में कोई हस्तक्षेप नहीं कर सकता। सेठ साहब जानें।

पासी—सरकार ! आप छोटे राजा हैं। हमने आपकी प्रशंसा बहुत सुनी है। कहते हैं आप सब को समान समझते हैं, हुजूर ! सब का ख़याल रखते हैं छोटे सरकार ! गाँव में आपके धर्म और आपकी बातों का बहुत चर्चा है। सरकार, आप अत्याचार के विरुद्ध हैं। हम गरीब किसानों के आप माई-बाप हैं, सरकार !

जगमोहन—परन्तु लगान की बात और है, भाई !

मुंशी जी—यही तो मैं भी कहता था, सरकार ! परन्तु यह पासी कुछ समझता ही नहीं।

पासी—तो लगान माफ़ नहीं हो सकता, सरकार ?

मुंशी जी—तुम्हारा लगान छोड़ दें तो हमारा काम कैसे चले पासी ? (हँसता है)

पासी—आप चुप रहें जी ! मैं तो अपनी सरकार से पूछ रहा हूं। सरकार ?

जगमोहन—नहीं पासी। जीवन की एक चूल बदल देने से सारा जीवन नहीं बदल सकता। तुम्हें लगान देना होगा, हमें लगान लेना होगा—उस समय तक जब तक कि सारी व्यवस्था न बदल जाए, समाज का ढाँचा न बदल जाए, आचार-व्यवहार के नापमान न बदल जाएं।

पासी—मगर ढाँचा कौन बदलेगा, सरकार ! आप ही बदलें तो बदलें। बड़ी आशाएँ लेकर आए थे हम तो......।

जगमोहन—हम अकेले लगान माफ़ भी करदें तो इस से कुछ न होगा। इससे इतिहास का बहाव नहीं बदल सकेगा।

पासी—इतिहास का भाव ? सरकार क्या कह रहे हैं ? गेहूँ का भाव सुना था, ज्वार, बाजरे, मकई गुड़ का भाव सुना था। यह इतिहास का भाव क्या बला है, सरकार ?

मुंशी जी—चलो, पासी ! वाद-विवाद व्यर्थ है। हम दोनों इतिहास का भाव क्या जानें ? ही ही ही ही......।

पासी—बड़ी आशाएं लेकर आए थे। रामराम सरकार ! जरा गौर से देखना सरकार, दो चार दिन में इतिहास का भाव बदल जाए तो......

(विनोद और अनवर दोनों हँस पड़ते हैं)

जगमोहन—तुम हँस रहे हो और मेरा दिल रो रहा है।

अनवर—जगमोहन, अब मैं चलता हूँ।

जगमोहन—कहाँ ?

अनवर—वहीं ईंटों के भट्टे पर।

जगमोहन—तुमने अन्तिम निर्णय कर लिया ?

अनवर—हाँ। (हाथ मिलाते हुए) अच्छा भाई, आज्ञा दो।

विनोद—और मैं भी चलता हूँ।

जगमोहन—भई तुम कहाँ ?

विनोद—कपड़े की दुकान पर, नंगेपन को ढाँकने के लिये। (हँसता है)

(विनोद और अनवर चले जाते हैं, रम्भा आती है।)

रम्भा—चले गए ?

जगमोहन—हां, चले गए। अपने ऊँचे आदर्शों को छोड़ कर पुराने, गंदे, निकम्मे, अर्थ-हीन जीवन के दड़बे में फिर लौट गए।

रम्भा—(धीरे से) यहां सब गन्दे हैं, सब अर्थ-हीन, निकम्मे......।

जगमोहन—क्या कहा ? ऐं ! यह तुमने आज कैसा ब्लाउज़ पहन लिया है ?

रम्भा—सुन्दर है ना ?

जगमोहन—सुन्दर ? कन्धे नंगे, कमर पर से ऊँचा कटा हुआ, और छाती भी......

रम्भा—तुम तो जीवन को उसके वास्तविक रूप में देखना पसन्द करते हो।

जगमोहन—परन्तु यह तो नंगापन है।

रम्भा—परन्तु तुम तो नंगेपन को पसन्द करते हो।

जगमोहन—पसन्द करता हूं—दूसरी स्त्री में, अपनी स्त्री में नहीं।

रम्भा—तो यह ब्लाउज़ उतार दूँ ?

(सेठ जी आते हैं।)

सेठ जी—जगमोहन ! बेटा कहाँ चले ?

जगमोहन—जी, पिता जी, लेडी वामनगीर के यहां चाय......

सेठ जी—अरे हां, अवश्य जाओ ! और सुनो, सर वामनगीर से ईंटों के ठेके के बारे में भी बातचीत करना। सुना है वह ठेका तुम्हारे

दोस्त अनवर के बाप को मिलने वाला है। परन्तु यदि तुम प्रयत्न करो तो......

जगमोहन—बहुत अच्छा!

सेठ जी—अरे! बेटी! तुम कहाँ जा रही हो?

रम्भा—जी अभी आई।

सेठ जी—रम्भा आज वही ब्लाउज़ पहने है जो छम्मिया ने पहना हुआ था। मालूम होता है दोनों का दर्ज़ी एक है। (हँसता है) आज-कल की भले घरों की लड़कियां वेश्याएँ दिखाई देती हैं और वेश्याएं भले घरों की लड़कियां! (हंसता है)।

जगमोहन—रम्भा ब्लाउज़ बदलने गई है, पिता जी!

सेठ जी—अरे भाई, मैं तो हँसी कर रहा था। देखो, स्त्रियों की बातों में अधिक हस्तक्षेप न किया करो। रम्भा जैसे चाहे वस्त्र पहन सकती है। वह अपने वस्त्रों को तुम से अधिक अच्छी तरह समझती है।......क्या बात है मुंशी जी?

मुंशी जी—जी, वह धीमा गाँव का मुखिया आया था, लगान माफ़ कराने के लिये। कहता था वर्षा न होने के कारण फ़सल नहीं हुई।

जगमोहन—मैंने इन्कार कर दिया, पिता जी!

सेठ जी—आधा लगान माफ़ कर देते, बेटा! कभी नर्मी, कभी कड़ाई—यही रियासत का नियम होता है। अवसर देखकर काम करना चाहिए, बेटा। (पीठ थपकता है और हँसता है)।

रम्भा—(धीरे से), यहां सब गन्दे हैं, सब......

जगमोहन—क्या कहा?

रम्भा—(हँसती है) कुछ नहीं।

जगमोहन—पिता जी! आप रम्भा को समझा दीजिये। यह यूंही मौक़ा-बेमौक़ा हँसती रहती है। (क्रोध में रम्भा की ओर बढ़ता है)।

(रम्भा खिलखिला कर हँसती हुई भाग जाती है।)

: ५ :

झील से पहले, झील के बाद

यह सड़क श्रीनगर से गुलमर्ग को जाती है। इसके दोनों ओर शमशाद के सुन्दर वृक्ष खड़े हुए हैं। यह सड़क धान के खेतों के बीच में से गुज़रती है। सड़क के दोनों ओर मन्थर-गति वाली पतली २ नदियां खेतों को सींचती हुई बहती हैं। खेतों के किनारे जहां पानी खड़ा है या चलता फिरता थम सा गया है वहां कमल और मक्खन-प्याले खिले हुए हैं—सफेद, गुलाबी, पीले। कहीं-कहीं चिनारों के तले गड़रिये गायें भेड़ें चरा रहे हैं। चार-चार स्त्रियाँ मिलकर धान कूट रही हैं और गीत गाती जा रही हैं। एक स्त्री सिर पर मटकी लिए पानी भरने जा रही है। मोटर को देख कर यूंही अकारण हँस पड़ती है। उसके मोतियों जैसे श्वेत, चमकीले दांत बहुत देर तक आंखों में और तत्पश्चात् कल्पना में जगमगाते रहते हैं।

जो सड़क टंगमर्ग से गुलमर्ग को जाती है वह केवल तीन मील लम्बी है। इस सड़क पर अंग्रेज़ पुरुष और स्त्रियाँ सुन्दर घोड़ों पर सवार दिखाई पड़ते हैं। उनके पीछे २ भूरी रंगत वाले काश्मीरी हातू हाँपते दौड़ते चले जाते हैं। किसी के हाथ में टोकरी है, किसी के हाथ में थरमास तो किसी की गर्दन पर किसी मेम साहब का बच्चा सवार है। मज़दूर अपनी पीठ पर ढाई मन का बिस्तर उठाए झुके हुए चढ़ाई चढ़ते चले जाते हैं। वे पंचायत वालों के वे आदर्श वाक्य नहीं

पढ़ सकते जो टंगमर्ग 'आतशक सूज़ाक' की दवाइयों के विज्ञापनों की भांति स्थान-स्थान पर लिखे हुए हैं—"मज़दूरी में इज़्ज़त है।" "मज़दूरी से जी मत चुराओ।" "मज़दूरी करना सीखो।" इस सड़क के दोनों ओर चील और देवदार के ऊँचे २ वृक्ष हैं जिनके पांव में सफेद छतरियां और खुम्बें उगी हुई हैं, बनफ़शे के फूल हैं, खंडी की घास है और किसी देवदार पर मधुमक्खियों के छत्ते—और सारा जङ्गल उनकी मद्धम गुंजार से गूंजता प्रतीत होता है। इन छत्तों के मधु में जंगली पुष्पों का माधुर्य होता है और पौष्टिक विटामिन जिसको तैयार करते समय हाथों से स्पर्ष नहीं किया जाता।

दो नन्हे २ काश्मीरी बालक इस सड़क पर चलते हुए दिखाई देते हैं। वह गुलमर्ग से थके थके पगों से आ रहे हैं। कदाचित् घर पहुँच कर माता-पिता भी क्रोधित हों, कदाचित् भोजन न मिले, चपत ही मिलें। सड़क के नीचे बहुत दूर तक फ़िरोज़ नाला प्रवाहित है जिसके नीले जल में श्वेत-श्वेत झाग मिली हुई है—नीला जल जैसे इन काश्मीरी बालकों की आंखें, श्वेत-श्वेत, जैसे मोटरों की ओर देख कर अकारण हँस पड़ने वाली कशमीरन।

दस-बारह कशमीरी लड़कियां प्याली जैसी आकृति की टोकरियों में जंगल से लकड़ियां बीन कर ला रही हैं। इन टोकरियों में वे टंगमर्ग के यात्रियों और क्षय रोग के रोगियों के लिए लकड़ियां चुन कर ला रही हैं। इन में कई लड़कियां क्षय-रोगियों की भांति खांस रही हैं, क्योंकि लकड़ियां उठाने के लिए शरीर झुका कर चलना पड़ता है। इन लड़कियों की टांगें बाल्यकाल ही से बेडौल हो जाती हैं। चाल में बेढंगापन, कपोलों में गढ़े, और छातियों में सलवटें पड़ जाती हैं। यह लड़कियां कुमार अवस्था को कभी प्राप्त नहीं होती। पहले तो ये केवल लड़कियां होती हैं, फिर एकदम माँएँ बन जाती हैं। यौवन क्या है, रस क्या है, वन में मधुमक्खी पुष्पों का मधु क्यों संचित करती हैं, कमल क्यों मुस्कराते हैं, मक्खन-प्यालों की पीली २ पंखड़ियां ठहरे हुए

जल पर क्यों विकम्पित रहती हैं—उन्हें इन सब बातों का ज्ञान कहां?

जो सड़क नौ हज़ार फुट की ऊँचाई पर गुलमर्ग की घाटी के प्याले के चारों ओर एक सुनहरी फीते की भांति घूमती जाती है, उसे सर्कुलर रोड कहते हैं। यहां से सारी कश्मीर घाटी दिखाई देती है—सहस्रों मील का विस्तृत मैदान, चारों ओर ऊँची २ पर्वत मालाओं से घिरा हुआ। इसे देख कर स्पष्ट रूप से पता चलता है कि आज से हज़ारों वर्ष पूर्व जबकि मनुष्य का जन्म नहीं हुआ था, इन पर्वतों ने एक नीली झील को घेर रखा था। चारों ओर बर्फ के ग्लेशियर होंगे और बीच में यह झील, जिसके चिह्न अब डल, वुलर और मानसबल की झीलों में मिलते हैं। कभी २ यही प्रतीत होता है कि अब भी वही पुरानी झील है, वही हिमाच्छादित पर्वत-श्रेणियाँ हैं और सूर्य की प्रथम किरण के साथ मैं ही वह प्रथम व्यक्ति हूँ जो इस रहस्यपूर्ण अलौकिक दृश्य को देख रहा हूँ। फिर उस झील का पानी सहसा कहीं विलीन हो जाता है और घाटी की वनस्पति और उसके उद्यान और उसके गांव और शहर आंखों के आगे फैलते जाते हैं। देवदारों का सन्नाटा, फ़िरोज़ नाले के कोलाहल में घुला हुआ लगता है। और जीवन हज़ारों वर्ष आगे की ओर लौट आता है।

इस सड़क पर मेरी भेंट एक आयरिश लड़की से होती है। नाम है लीरा ओ-कॉनर (Lira-O-Connor)। लीरा की आंखें न नीली है, न हरी, न भूरी बल्कि इन तीनों रंगों से मिलता-जुलता हुआ कोई और रंग। लीरा की आंखों में एक अद्भुत आकर्षण है जैसे ये सदा सपने ही देखा करती है। लीरा के केशों का रंग प्लाटिनम जैसा है—कोमल रेशमी और महीन केश। इन पर उसने एक सुनहरा रूमाल बांध रखा है। वह आराम से बैठी देवदारों की छाया में इस घाटी का स्कैच बना रही है—जहां वृक्षों की फुंगियों का एक जाल सा बना हुआ है और जिसके छोर पर नदी के पानी की एक लकीर खिंच गई है।

"यहाँ खड़े २ क्या कर रहे हो ? अपना रास्ता लो।" उसने मेरी ओर देख कर कहा।

मैंने अविचलित भाव से कहा—"यहां हरा रंग अधिक गहरा है। फूलों की क्यारियों और देवदार के वृक्षों के जाल का संपात ठीक नहीं है। विशेषतया यहां तो......"

"बैठ जाओ। मैं अभी ठीक करती हूँ। क्या तुम्हें वाटर-कलर का शौक़ है ?"

"मुझे वाटर-कलर से प्रेम है, यूँ समझिए कि अभी प्रेम हुआ है।"

लीरा मुस्कराई और पौन घन्टे तक निश्चेष्ट बैठी स्कैच् बनाती रही।

"मुझे भूख लगी है और मेरे पास केवल यह दो-चार बिस्कुट ही हैं।" लीरा ने एक बिस्कुट होठों के बीच में रखते हुए कहा।

"परन्तु" मैंने कहा "मेरे पास यह भुना हुआ मुर्ग है इस थर्मास में और कुछ चपातियाँ भी हैं। यदि तुम्हें भारतीय भोजन की ओर से अरुचि न हो तो......"

"कदापि नहीं, बल्कि मैं तो...... ।"

वह बड़ी रुचि से खाने लगी। फिर बोली "इसमें Chillies बहुत अधिक हैं। न जाने तुम लोग मिर्चें इतनी क्यों पसंद करते हो।"

"यह खाने के स्वाद में वृद्धि कर देती हैं। भारतीयों की जहां अन्य सब इन्द्रियां मर चुकी हैं वहां चखने की शक्ति अभी तक बनी हुई है बल्कि निरन्तर भूखा रहने से और अधिक तीक्ष्ण हो गई है। इसलिये लाल मिर्चें......।"

"न जाने तुम लोगों में यह क्या आदत है......" उसने अपने प्लाटिनमी बालों को झटक कर कहा, "किसी पढ़े लिखे हिन्दुस्तानी से बातें करो, वह हिर-फिर कर राजनीति पर आ जाता है। मैं लाल मिर्चों की बात कर रही हूँ, तुम अपने देश की राजनीति का ज़िक्र ले बैठे हो। न जाने क्या बात है......"

उसके होंट क्रोध से तिरछे हो गए। मैंने कहा "चलो, लाल मिर्चों के ज़िक्र को जाने दो। आओ, लाल होंटों की बातें करें। उन गुलाब के फूलों की जो तुम्हारे कपोलों पर खिले हुए हैं। उन चन्द्र किरणों की जिन से तुम्हारे केश बने हुए हैं। उन स्वप्नों की जो तुम्हारे नयनों की पुतलियों में कांप रहे हैं, जैसे किसी झरने की सोई हुई सतह पर तरनारी के विस्मित विकम्पित पुष्प।"

दूसरे दिन सन्ध्या के समय गुलमर्ग के बाज़ार में लीरा ओ-कॉनर घोड़े पर सवार चली जा रही थी। मैं ने उसे देखा, उसने मुझे, परन्तु वह मुझे पहचान न सकी—"पूर्व-पूर्व है और पश्चिम-पश्चिम।"

जो सड़क गुलमर्ग की वादी के बीचों-बीच जाती है वह गाल्फ़-कोर्स (Golf Course) को बीच में से काटती है। इस सड़क के दोनों ओर अंग्रेज़ स्त्री पुरुष गाल्फ़ खेलते दिखाई देते हैं और काश्मीरी हातू गाल्फ़ के सामान के थैले और छड़ियाँ उठाए उनके पीछे २ भागते दिखाई पड़ते हैं। इस सड़क पर गुलमर्ग का क्लब है और आगे चल कर ठीक मध्य में एक ऊँचे स्थान पर इम्पीरियल बैंक और नीडोज़ होटल। जागीरदारों के युग में और इस से पूर्व जो महत्व धर्मशालाओं और पूजा के पवित्र स्थानों को प्राप्त था, इस महाजनी युग में वही महत्व बैंक और होटल को प्राप्त है। नये युग के नये द्योतक यही हैं।

इस सड़क पर अंग्रेज़ और अंग्रेज़-नुमा हिन्दुस्तानी घोड़े दौड़ाते फिरते हैं। कश्मीरी नौकर लाल शलग़म और प्याज़ के गट्ठे उठाए हुए दिखाई देते हैं। वे अण्डों की टोकरियाँ, मटन, मटर और फल उठाए हुए ले जा रहे हैं। परन्तु यह वस्तुएँ उनके भोग के लिये नहीं हैं। साहब लोगों के बच्चों ने हैट लगा रखे हैं और मूल्यवान ऊनी स्वेटर पहन रखे हैं। मेम साहब लोगों ने कार्ड मख़मल की पतलूनें पहन रखी हैं जिन्हें गुलमर्ग के कश्मीरी दर्ज़ियों ने सिया है। परन्तु ये स्वयं इन पतलूनों को नहीं पहन सकते। यह लोग केवल मज़दूरी कर सकते हैं जैसा कि पञ्चायत का आदेश है—"मज़दूरी में इज़्ज़त है,"

"मज़दूरी में इज़्ज़त है", "मज़दूरी में इज़्ज़त है।"

इस सड़क पर एक हातू बैठा हुआ है। उसके साथ एक जूते गांठने वाला है और एक भिखारी। हातू पीली पीली पकी हुई हाड़ियों की एक टोकरी सामने रखे बैठा है। यह हाड़ियां वह अपने खेत की मींड पर उगे हुए हाड़ी के वृक्ष से उतार कर लाया है। उसके खेत में जो अनाज था उसे ज़मीदार, बनिये और सरकार ने आपस में बाँट लिया। अब दो तीन हाड़ियों और सेबों के वृक्ष शेष रह गए हैं। वह उनके फल यहाँ गुलमर्ग में लाकर बेचता है जिस से कि वह साहब लोगों को हाड़ी और सेब खिला कर अपनी स्त्री और बच्चों के लिए कुछ थोड़े से चावल मोल ले सके। भिखारी आलती-पालती मारे निर्लज्जता से पैसा मांग रहा है। जूते गांठने वाला एक ऐसे जूते की मरम्मत कर रहा है जिसका मूल्य पचास रुपये से कम न होगा। स्वयं उसके पांव नंगे हैं। तलुओं में बिवाइयाँ फूट आई हैं और एक स्थान से तो रक्त बह रहा है। परन्तु जूतों का तो खैर मूल्य होता है, भला इस रक्त का क्या मूल्य होगा!

एक वृद्धा अंग्रेज़ स्त्री अपनी रंगीन छतरी घुमा २ कर अपने साथ वाली स्त्री से कह रही थी—"माई डीयर जब वह हिन्दुस्तानी हमारे कमरे में घुस आया तो मुझे कितना भय लगा। मैं तो भयभीत होकर दूसरे कम्पार्टमैंट में अपने पति के पास चली आई..."

आज बहुत दिनों पश्चात् फिर सर्कुलर रोड पर सैर करने निकला हूँ। यह वन मौन और निस्तब्ध है। कश्मीर की घाटी पर सूर्य अस्त हो रहा है और बढ़ते हुए अंधकार और घटते हुए प्रकाश की एक शतरंज सी बिछती जा रही है। यह वन क्यों मौन है? इस घाटी का भाग्य क्यों निद्राग्रस्त है। यह वन अपने बेटे बेटियों के लिये क्यों नहीं बोलता। इस वन का मधु, इसके अखरोट, इसके सेब, अण्डे, लकड़ी, इसका रेशम, इसका समस्त लावण्य और सुन्दरता, इसकी कोई भी वस्तु इसके बेटों के लिये नहीं है। यह कैसा व्यंग्य है। यह वन क्यों मौन

है? यह क्यों नहीं कहता—मज़दूरी न करो। कार्ड की पतलूनें पहनो। सेब खाओ, खूबानी और अखरोट खाओ। मज़दूरी करने से इन्कार कर दो। घोड़े की सवारी करो। दनदनाते फिरो। यह धरती तुम्हारी है। यह आकाश तुम्हारा है। और यदि यह सब कुछ नहीं है तो आओ इस सारी घाटी को एक झील बना दें—पानी से भरी हुई झील—झील जिसमें टंगमर्ग और गुलमर्ग सब समा जाएँ, जिसके पानियों में मानव अत्याचार और क्रूरता के सब नारकीय घरौंदे नष्ट हो जाएँ। बस चारों ओर वही पुरानी झील हो—हज़ारों, लाखों वर्षों पहले की झील और उसके चारों ओर वही बर्फ़ के ग्लेशियर और हिमाच्छादित पर्वत खड़े हों, ताकि जब आकाश के अन्तस्तल से सूर्य की किरण उदय होकर झील की सतह पर उतरे तो हर्षोन्मत्त होकर चिल्ला उठे—"धन्यवाद है कि अभी मानव का जन्म नहीं हुआ।"

: ६ :

फूल वाला

फूल बेचने वाले के बेटे ने 'मैट्रिक' पास कर ली तो उसके बाप ने उसे एक साइकिल दी और नौकरी तलाश करने के लिए उसे इस तरह दुनियां में छोड़ दिया जिस तरह मध्य-युग का उपन्यास-लेखक अपनी कथा के हीरो को उसकी प्रेयसी की तलाश में किसी असीम, भयानक मरुस्थल में छोड़ देता था। और हुआ भी ऐसा ही। बेचारे लड़के के टख़ने साइकिल चलाते २ घायल हो गए, होंटों पर पपड़ियां जम गईं। उसका फूल-सा चेहरा कुम्हला गया, परन्तु नौकरी न मिली, पर न मिली।

अन्त में हार कर लड़के ने अपने बूढ़े बाप से कहा, "अब्बा, नौकरी मिलनी बहुत कठिन। मामूली से मामूली नौकरी के लिये आजकल बड़े-बड़े लोग मारे-मारे फिरते हैं। बताओ, मैं ग़रीब क्या करूँ ?"

बूढ़े बाप ने चिलम पर से राख उड़ाई और रुक-रुक कर बोला, "करना...क्या है...दुकान पर बैठ जा...फूल बेचने वाले का बेटा भी...फूल बेचने वाला है। इसलिये तू भी...फूल बेच कर रोटी कमा। मौलवी ठीक कहता था कि इस लड़के को अंग्रेज़ी क्यों पढ़ाते हो,... लम्बे २ बाल रखेगा और औरतों की तरह मांग निकालेगा। सुन... कल से ये अंग्रेज़ी बाल कटा दे और हार बना २ कर बेच। सुना तू ने ?"

इस घटना के पाँच वर्ष बाद फूल बेचने वाला बूढ़ा परलोक सिधार गया।

बूढ़े बाप के मरने के बाद लड़के ने अपनी दुकान अनारकली के सिरे पर करली। अंग्रेज़ी शिक्षा ने उसे नवीनता का प्रेमी बना दिया था। उसने हार और गजरों के नए २ नमूने तैयार किये और मशहूर फ़िल्म स्टारों पर उनके नाम रखे—'गौहरे-आबदार,' 'कञ्जन-अदा,' 'गुले-गार्बो', 'सुलोचना-हार', आदि। उसने और भी अनेकों सुन्दर और प्रियदर्शी नमूने बनाए जो पढ़े-लिखे लोगों में बहुत पसन्द किये गए। परिणाम यह हुआ कि उसकी दुकान चमक उठी। अब अपनी सहायता के लिये उसने दो-तीन नौकर भी रख लिये। फिर दुकान में उसने रेडियो भी लगा दिया जो उन दिनों चला-चला था। कुछ दिनों के बाद उसने समाचार-पत्रों में इश्तिहार भी देने आरम्भ कर दिये। कुछेक इश्तिहार इन शब्दों में थे :—

"नर्गिस का सीज़न आ गया। हमारी दुकान पर पधार कर नर्गिसी हारों के सुन्दर २ डिज़ाइन पहन कर नर्गिसी सीज़न मनाइये।"

"ग्रेटा गार्बो की नई पिक्चर के उपलक्ष में गुले-गार्बो के गजरे पहनिये और पहनाइये।"

"दुकान में पर्दे का विशेष प्रबन्ध है।"

"प्रकृति की सुन्दरतम भेंट से अपने प्राकृतिक सौन्दर्य को और भी शोभायमान कीजिये।"

फूल बेचने वाले के अनथक और लगातार परिश्रम का एक परिणाम बहुत अच्छा निकला और वह यह था कि हार और गजरे आदि पहनने की प्राचीन भारतीय प्रथा शिक्षित वर्ग में पुनः प्रचलित हो गई। पहले तो त्योहारों पर भी बहुत कम लोग फूल-मालाएँ पहनते थे, परन्तु अब क्लर्क, बाबू, मुन्शी, इत्यादि लोग दफ़्तर तक में फूल ले-ले कर जाने लगे। स्याही से गंदी रहने वाली मेज़ें और क़लमदान फूलों से सज उठे। दफ़्तर फूलों की सुगन्ध से महक उठे।

कालिज के विद्यार्थी तो हारों पर इतने लट्टू हुए कि फूलों के हार भी अपनी टाई और पतलून के रंग के अनुसार चुनने लगे। स्त्रियों के सम्बन्ध में तो क्या कहें—उनका और फूलों का मेल तो हर तरह आंखों को प्यारा लगता है। फिर उन दिनों तो उनमें फूलों के हारों और गजरों के प्रयोग के लिये एक होड़ सी लग गई थी। यदि एक कोमलांगी 'नर्गिस' बनी हुई जा रही है तो दूसरी 'मोतिया' की मूर्ति। एक केसर का तख़्ता बनी हुई है तो दूसरी धान का खेत। नारियां फूलों की भीनी २ सुगन्ध से लोगों के हृदयों को मोहने लगीं।

होने को तो यह सब कुछ हुआ, परन्तु भारत की इस प्राचीन प्रथा को पुनर्जीवित करने और चारों ओर आनन्द की लहरें दौड़ाने वाले का अपना दिल न खिला। उसका दिल सदा बुझा-बुझा सा रहता था। वह सोचता रहता था—यदि मैं फूल न बेचता और पढ़ता रहता तो अब तक कम से कम बी. ए. पास कर ही लेता और फिर तो कहीं न कहीं नौकरी मिल ही जाती। फिर मेरा विवाह भी किसी शिक्षित, सुघड़ और सुन्दर लड़की से हो जाता। परन्तु अब...अब तो ...। यह सोच कर वह लम्बे २ साँस भरने लगता और उसके मन में विचार उत्पन्न होते, कि अब उसका जीवन फूलों की दुकान पर गजरे बेच २ कर और रेडियो सुन २ कर नष्ट हो गया है। उसे अपना जीवन किसी खण्डहर की भांति लगने लगता। पढ़ी-लिखी सभ्य लड़की तो उसके समाज में दीपक हाथ में लेकर ढूँढ़ने से भी नहीं मिल सकती थी। जो लोग अपनी लड़कियों को स्कूलों और कालिजों में पढ़ाते थे, निश्चय ही उन में से कोई भी आदमी अपनी लड़की का विवाह एक फूल बेचने वाले के साथ करना कभी पसन्द नहीं करेगा। वह शिक्षित समाज के लिये एक 'अछूत' था, 'हरिजन'। चाहे कुछ भी हो वह अपना जीवन एक उजड्ड और फूहड़ बीवी के साथ बिताने के लिये कदापि तैयार न था—ऐसी बीवी जो न तो साड़ी पहनने का ठीक ढंग जानती हो और न ही चूल्हे-चौके के अतिरिक्त संसार की किसी अन्य

बात में रुचि रखती हो। वह एक 'लड़की' से विवाह करना चाहता था, न कि किसी बावर्चन से।

वह अपनी बूढ़ी माँ का बहुत सन्मान करता था और साथ ही अपने छोटे भाई से बहुत प्यार करता था। और यद्यपि वह सिल्क की कमीज़ें पहनता था जिन पर लम्बी २ धारियां होती थीं और जो इत्र-फुलेल से सुवासित रहती थीं, पर वह शराब, सिग्रेट और वेश्याओं से बहुत घृणा करता था। सिनेमा-थियेटर देखते रहने पर भी उसके आचार-व्यवहार पर बुरा प्रभाव नहीं पड़ा था। इस बात पर उसके मित्र प्रायः विस्मय प्रकट किया करते थे—आख़िर एक फूल बेचने वाला कैसे सदाचारी और शरीफ़ रह सकता है?

उसकी बूढ़ी माँ को भी यही सन्देह था। वैसे तो वह अपने बेटे पर जान छिड़कती थी, किन्तु उसके मन में यह डर लगा रहता था कि कहीं उसका मैट्रिक पास बेटा आवारा न हो जाए। जो लड़का फूल बेचता हो और सिनेमा देखता हो उसके लिये शरीफ़ रहना बहुत मुश्किल है। और आख़िर कब तक? इसीलिये बूढ़ी माँ उसके विवाह पर बहुत ज़ोर देती थी। परन्तु युवक फूल बेचने वाला इस बात के लिये राज़ी नहीं होता था। उसके युवक, अनुभव-हीन, परन्तु सरस एवं रसिक हृदय ने एक पढ़ी-लिखी, सुघड़, सभ्य, सुन्दर लड़की से विवाह करने का निश्चय किया हुआ था। वह ऐसी किसी लड़की को अपनी कल्पना-शक्ति के सहारे अपने हृदय-मन्दिर में बिठाए हुए था और उस की पूजा करता था।

इसी बात के ऊपर माँ-बेटे में झगड़ा रहता था। माँ चाहती थी कि उसके घर में एक मीठी, नरम-स्वभाव की, किसी गाँव की लड़की बहू बन कर आए। उसने अपने ही कुटुम्ब की एक लड़की पसन्द भी कर रखी थी। परन्तु लड़का एक चंचल, तीतरी की तलाश में था। उसकी दुकान पर आने वाली तीतरियों जैसी। परन्तु ये तीतरियां उस के फूलों पर बैठना कब पसन्द कर सकती थीं? क्या वह अपने समाज

में एक अछूत का सा दर्जा नहीं रखता था ?—बेचारा केवलमात्र फूल बेचने वाला !

एक शनिवार की शाम की बात है कि उस दिन 'निशात' सिनेमा में विख्यात लेखक विक्टर ह्य गो की अमर कृति 'ला-मिज़राबल्ज़' का फ़िल्म दिखाया जाना था और फूल वाला युवक जल्दी-जल्दी दुकान बन्द करके वहाँ जाने की तैयारी कर रहा था कि इतने में एक छोटी 'मौरिस' कार उसकी दुकान के आगे आकर रुकी। उसमें एक बूढ़ी महिला और एक युवा लड़की बैठी हुई थीं। फूल बेचने वाला दुकान की सीढ़ियां उतरकर मोटर के समीप गया और बूढ़ी महिला से पूछा, "मेम साहब, क्या आज्ञा है ?" इस पर लड़की ने कार का द्वार खोलते हुए कहा, "हमें कुछ हार और गजरे चाहिएँ।" फूल वाला उन्हें दुकान के अन्दर ले गया।

लड़की ने बहुत से हार और गजरे खरीदे, और कुछेक गुलदस्ते, और चलते समय कहने लगी, "कल हमारे यहाँ एक डान्स है। बॉल रूम को सजाना होगा। कल अपने आदमियों को लेकर चार बजे आकर दो घण्टे में कमरे की सजावट पूरी कर दो। ठीक है ?"

फूल बेचने वाले ने उत्तर में सिर हिला दिया।

जब वह मोटर में बैठ चुकी तो फूल वाले ने फिर झुक कर सलाम किया और अँग्रेज़ी में लड़की से पूछा, "सरकार, आपका पता क्या है ?"

लड़की की आँखों में आश्चर्य की एक हल्की-सी झलक उत्पन्न हुई और होंटों पर एक हल्की सी मुस्कान दौड़ गई। उसने गर्दन को एक ओर झटका कर कहा, "नम्बर टैन, फ्लैश रोड, प्लीज़।"

फूल बेचने वाले ने चलती हुई कार को फिर झुक कर सलाम किया और धीरे से कहा, "नम्बर टैन, फ्लैश रोड, प्लीज़।"

इस घटना के तीन चार दिन बाद बूढ़ी मां को महसूस हुआ कि उसका बेटा असाधारण तौर पर उदास है। यही नहीं कि वह भोजन

कम खाने लगा था, बल्कि खाना खाते-खाते वह कई बार कई क्षणों तक किसी ओर टिकटिकी लगाकर शून्य दृष्टि से देखने लगता था। एक कौर मुँह में होता और दूसरा हाथ में, और वह मुंह चलाना बन्द करके कुछ सोचने लग जाता; फिर कुछ याद आ जाने पर एक ठंडी सांस लेकर जल्दी-जल्दी कौर उठाने लगता, और जल्दी-जल्दी उन्हें खाने लगता। कभी वह चम्पा, चमेली एवं मोगरे के चाँदनी जैसे सुन्दर और सुकोमल फूलों को रुपहली तारों में पिरोते हुए सहसा रुक जाता, फिर अपने आप मुस्करा पड़ता और फिर तुरन्त ही उदास हो जाता। उसकी मोटी-मोटी आँखों में आँसू छलक आते और जब उसकी माँ उससे पूछती, "बेटा, क्या बात है ?" तो वह इस आतुरता पूर्ण प्रश्न के उत्तर में एक खिसियानी-सी हंसी हंस देता और कह देता, "कुछ भी नहीं अम्माँ !" और अम्माँ दिल में सोचती, अवश्य ही किसी लड़की ने इसके मन को मोह लिया है।......मेरे अल्लाह ! वह कौन है ?...... मेरे बेटे को यह क्या हो गया है ?

बेचारे फूल वाले को स्वयं पता नहीं था कि उसे क्या हो गया है। वह हर रोज़ सैंकड़ों सुन्दर युवतियों को देखता था। सैंकड़ों कोमलांगियों को उसने अपने हाथों से गजरे पहनाये थे। उसने कितनी ही चंचल निगाहों के वार सहे थे और सैंकड़ों मुस्कराते होठों से शहद जैसी मीठी बोली सुनी थी। परन्तु किसी की भी सुडौल बाहुओं ने उसे प्रभावित नहीं किया था। रंग-बिरंगी साड़ियों के सुन्दर रंग इन्द्र-धनुष की भांति उसके हृदय-व्योम में क्षण भर के लिये अपनी छटा दिखाकर विलीन हो जाते थे। परन्तु अब सहसा यह क्या हो गया था !... जब बॉल-रूम को सजाते समय वह भी उसके समीप आकर एक क्षण मात्र के लिए खड़ी हो गई थी तो उसकी आंखें क्यों झपक गई थीं और क्यों उसका साँस क्षण भर के लिये रुक गया था ? जब छत वाले फ़ानूस को लम्बे-लम्बे हारों से सजाते समय उसकी अँगुली उसके हाथों से अनायास छू गई थी तो उसकी रगों में बहता

हुआ रुधिर क्यों धधकती हुई ज्वाला बन गया था ? और...जब... उसे बॉल-रूम सजाते देखकर वह एक दम पयानो की ओर चली गई थी तो वह क्यों विह्वल, व्याकुल, अधीर हो उठा था ? और यह कैसी आश्चर्यजनक बात थी कि जब वह पयानो बजाने लगी तो उसे ऐसा लगा मानो किसी ने उसके अपने हृदय के सुरों पर अँगुलियां रख दी हैं और उनमें से एक रंगीन परन्तु वेदनापूर्ण रागिनी पैदा होगई है।

इस बात का ठीक अनुमान लगाना तो कठिन है कि लड़की के मन पर फूल वाले के प्रेम ने क्या प्रभाव उत्पन्न किया, परन्तु यह बात अवश्य है कि वह अब बहुधा उसकी दुकान पर आया करती थी—फूलों के आवेज़े ख़रीदने के लिये और गजरे पसन्द करने के लिये। परन्तु यह तो इतनी साधारण-सी बात थी कि जिसे कोई भी महत्व नहीं दिया जा सकता था। कालिज की कितनी ही लड़कियां उसकी दुकान पर हर रोज़ आया करती थीं। परन्तु इसका यह मतलब कैसे लिया जा सकता है कि वे सब उससे प्रेम करती थीं ? फूलों से प्रेम करने का यह तो ढंग नहीं हो सकता कि उद्यान के उजड्ड माली से प्रेम की पींगें बढ़ाई जायं। भला ऐसी मूर्खता कौन करेगा ? और फिर स्त्री-जाति तो ऐसे मामलों में सदा पुरुषों की अपेक्षा अधिक समझदारी से काम लेती हैं। यूं तो फूलवाला भी कोई मूर्ख न था। परन्तु न जाने अब उसे क्या होगया था। उसकी समझ पर यह कैसा पर्दा पड़ गया था कि जब वह लड़की सफेद साड़ी बांधे उसकी दुकान में दाख़िल होती तो मारे खुशी के उसका दिल ज़ोर २ से धड़कने लगता और वह समझता कि वह हल्की सी मुस्कान जो उस लड़की के होटों पर कभी २ खेल जाती थी, केवल उसी के लिये थी। उसकी कोमल, लोचदार, कलाइयों में पड़ी हुई चूड़ियों की खनखनाहट उसी के कानों के लिये पैदा हुई थी। और सफ़ेद रेशमी साड़ी से छुपे हुए कानों लगे गुलाब के लाल २ आवेज़े शायद उसी की ललचाई हुई दृष्टि के लिये पहने जाते थे।...उसे कभी २ यह विश्वास होने लगता कि वह निश्चित रूप से

उससे प्यार करती है। कभी २ किसी अंधेरी रात में, जब उसे कोई देख न सके, वह उसकी कोठी के चारों ओर चक्कर लगाता और पश्चिम दिशा के एक कमरे में प्रकाश देखकर उसका दिल नाचने लगता। जब कभी एक छरेरी-सी छाया उस प्रकाश में एक ओर से होकर दूसरी ओर को जाती तो उसके हृदय की धड़कन सहसा तेज़ होजाती और वह बिजली के खम्भे का सहारा लेने की आवश्यकता अनुभव करता। फिर वह देर तक खिड़की की ओर टिकटिकी लगाकर देखता रहता, यहाँ तक कि प्रकाश बुझ जाता और उसके मन में अन्धेरा सा छा जाता। फिर वह उस मुसाफ़िर की तरह घबरा कर जो अपनी राह भूल गया है, अपने घर की ओर चल पड़ता।

अम्माँ बेचारी हर घड़ी कुढ़ती—हाय, अल्लाह, मेरे लाल को क्या होगया है? दिन-रात यह किस चिन्ता में निमग्न रहता है। कहीं किसी की नज़र तो नहीं लग गई? कोई प्रेत...फिर वह एकदम अपने मुँह पर हाथ रख लेती और सिर झुकाकर चादर काढ़ने लगती।

इसी प्रकार छः महीने व्यतीत होगये।

एक शाम को वही मोटर जो आई तो फूल वाले ने देखा कि उसमें आज केवल बूढ़ी महिला बैठी है। उसने महिला को सदा की भांति झुककर सलाम किया तो महिला मुस्करा कर बोली, "कल दिन को बहुत से फूल और हार चाहिएँ, और रात को कोठी भी सज...।"

"बहुत अच्छा सरकार," फूल वाले ने बीच में ही बात काट कर कहा और एक तीखी, वेगपूर्ण दृष्टि मोटर की ख़ाली सीट पर डाली।

बूढ़ी महिला ने फिर मुस्करा कर कहा, "कल मिस हरमज़ जी की शादी है ना। बहुत से फूल और हार चाहिएँ।"

मोटर चल दी। बेचारा फूल वाला सिर झुकाए खड़ा का खड़ा रह गया।

दूसरे दिन फूल वाले को ऐसा लगा जैसे उसे हल्का-हल्का ज्वर है। उसका सिर घूम रहा था। परन्तु उसे आज तो बहुत काम करना

था। वह बहुत सवेरे उठा और दुकान पर काम करने चला गया। आज वह बड़ी फुर्ती के साथ काम कर रहा था। उसकी प्रेयसी का विवाह जो था। उसने आज ऐसे ऐसे सुन्दर हार, गजरे आदि तैयार किये जैसे आज से पहले कभी नहीं किये थे। आज उसकी हृदयेश्वरी की शादी थी। उसने फूलों को ज़री के तारों में पिरोकर कोमल चादरें बनाईं, सुन्दर गुलदस्ते और कलियों के चन्दन हार तैयार किये और मोतिये के अधखिले फूलों से एक सुन्दर मुकुट बनाया। आज उसके हृदय की रानी का विवाह जो था!

फूल वाले ने कोठी का कोना-कोना फूलों से सजा दिया। आज वह अत्यन्त व्यस्तता के साथ कार्य कर रहा था और कभी इधर, कभी उधर दौड़ता हुआ अपने नौकरों को आज्ञाएँ दे रहा था। उसके कार्य ने आज एक कला का रूप धारण कर लिया था और वह कला भी आज पूर्णता को पहुँच गई थी।

बूढ़ी महिला मुस्कराती हुई इधर से उधर निकल जाती और एक सफ़ेद दाढ़ी वाला, गोरी रंगत का व्यक्ति पहियों वाली कुर्सी में बैठा हुआ कुर्सी का हैंडल घुमाकर उसे इधर से उधर और उधर से इधर धकेलता हुआ विवाह-सम्बन्धी सारे काम की व्यवस्था कर रहा था। एक कमरे में उसने अपनी प्रेयसी को भी देखा था। वह झुकी हुई बैठी थी और अपने छोटे भाई के साथ धीरे-धीरे बातें कर रही थी। भला उसे देखकर वह घबराकर क्यों खड़ी हो गई थी। एक क्षणभर के लिए, केवल एक बार, फूल वाले ने उसे उपालम्भ भरी आँखों से देखा और अपने काम में लग गया। क्या उस समय लड़की के कोमल, लावण्यमय होंट नर्गिस जैसे पीले नहीं पड़ गए थे? क्या उसकी आँखों ने अपना दोष स्वीकार नहीं कर लिया था और उसकी अपराधी दृष्टि को फूल वाले ने नहीं देख लिया था? हो सकता है कि यह उसका केवल भ्रम ही हो—क्योंकि दूसरे ही क्षण वह अपने भाई के साथ बातें करने में पूर्ववत् व्यस्त हो गई थी।

काम करते-करते शाम हो गई। आकाश में तारे निकल आए। कोठी बिजली के प्रकाश से जगमगाने लगी। आज सवेरे से फूल वाला भूखा था। भूखा ?......नहीं, उसे भूख लगी ही न थी। उसका काम अब समाप्त हो गया था, कोठी सज चुकी थी। अब बैंड भी बजना प्रारम्भ हो गया था। फूल वाला कोठी के उद्यान के एक कोने में बैठ कर सोचने लगा कि वह अब किधर जाए। उसे चारों ओर अन्धकार ही अन्धकार दिखाई दे रहा था। उसका दिल बैठा जा रहा था। वह जाने से पहले केवल एक बार अपने हृदय की रानी को देख लेना चाहता था। उसने एक नीले, रेशमी रूमाल में मोतियों का वह अनुपम मुकुट लपेट रखा था। काश ! वह अपने हाथों से मुकुट अपनी प्रेयसी को पहना सकता ! और फिर वह उसके चरणों में गिर जाता... मूर्ख फूल वाला !

रात को ९ बजे फ़्लैश रोड से मोटरों का जलूस चलना प्रारम्भ हुआ। आगे-आगे नौशे की कार थी—फूलों से सजी हुई। उसमें दूल्हा-दुल्हन दोनों बैठे थे। इस कार के पीछे बीस-तीस अन्य कारें हार्न बजाती हुईं चली आ रही थीं। फ़्लैश रोड से ट्रिंगटन रोड तक तो लोगों की बहुत भीड़ थी। अट्टहास, हार्नों की कठोर चीत्कार, मोटरों के एञ्जिनों की गड़गड़ाहट और आवारा कुत्तों का भौंकना ..। राम-राम करके जब ट्रिंगटन रोड निकल ली तो मोटरों ने तेज़ दौड़ना प्रारम्भ किया। जब फ़ौप रोड आ गई तो दूल्हा की कार खुशी के मारे हवा होने लगी। यहाँ एक स्वप्नमय-सा अन्धेरा था। बिजली के खम्भे भी दूर-दूर थे और दोनों ओर ऊँचे-ऊँचे पेड़ खड़े थे।

सहसा दूल्हा की कार के सामने एक व्यक्ति दौड़ता हुआ दृष्टिगोचर हुआ। उसके दोनों बाहु खुले हुए थे। वह सीधा तीर की तरह मोटर की ओर ही दौड़ता हुआ आ रहा था। ड्राइवर ने ज़ोर से हार्न बजाया। उसने मोटर को एक ओर करना चाहा और ब्रेक भी ज़ोर से दबाई। परन्तु ये सब बातें होने में देर हो गई—बहुत देर। वह

पागल मोटर के नीचे आ चुका था। उसकी छाती और बाएँ हाथ से रुधिर का फ़ौवारा फूट रहा था।

दुल्हन एक हृदय-विदारक चीत्कार करके बेहोश हो गई।

दूल्हा तथा अन्य मोटरों में बैठे हुए व्यक्ति क्या कर सकते थे? वे उस पागल घायल को उठाकर तुरन्त हस्पताल में ले गए। वहाँ उसे तुरन्त आपरेशन के कमरे में ले जाया गया। बाहर के कमरे में सब लोग बैठे हुए सोचने लगे, हाय, बेचारे को बहुत चोट आई है। यह क्यों मोटर के नीचे आ गया? कौन है यह? क्या यह बच जाएगा या नहीं? अन्त में बहुत देर के बाद डाक्टर अन्दर से आया और नौशे से कहने लगा, "घायल के बचने की कोई आशा नहीं। वह अब कुछ ही क्षणों का मेहमान है। वह तुम्हारी मिसेज़ को बुला रहा है।"

फूल वाला मेज़ पर लेटा पड़ा था। छाती पर पट्टी बंधी हुई थी जो लहू से लाल हो चुकी थी। लड़की को देखकर उसके पीले, विवर्ण मुख पर एक विवश-सी मुस्कान प्रकट हुई। उसने लड़की की ओर अपना दायाँ हाथा बढ़ाया। आह! उसकी कांपती हुई अंगुलियों ने उसी मोतिये के मुकुट को थाम रखा था। मुकुट लहू से भरा हुआ था। फूल वाले ने अपने लहू के साथ होली खेली थी! किस लिए? क्या इसी भेंट के लिए?......मूर्ख फूल वाला!

लड़की ने फूल वाले की ओर देखा। इतने में फूल वाले का सिर उसकी छाती पर झुक गया। लड़की ने दोनों हाथ बढ़ाकर मुकुट को अपने बाहुओं में थाम लिया—मानो वह किसी शिशु को अपने हाथों में थाम रही हो। फूल वाले का हाथ धीरे से मेज़ पर गिर गया। उसने एक बार अपने अस्तित्व की—अपनी आत्मा की—पूरी शक्ति के साथ लड़की की ओर देखा और फिर आँखें बन्द कर लीं। शायद वह कुछ सोच रहा था। उसके होंटों पर एक क्षीण-सी मुस्कान प्रकट हुई। यह प्रभात-दीप की झिलमिलाती लौ थी।

कुछ ही क्षणों में फूल वाले का उखड़ा हुआ साँस क्षीण पड़ गया।

डाक्टर नाड़ी पर हाथ रखे हुए था। फूल वाले के होंट कांपे, हल्की-हल्की एक-दो हिचकियाँ आईं और......लौ सदा के लिए बुझ गई।

लड़की रोने लगी।

"यह कौन था ?" डाक्टर ने धीरे से पूछा।

परन्तु कोई भी उसका नाम न जानता था। दूल्हा रोती हुई दुल्हन को अपने हाथों में थामकर बाहर ले गया।

डाक्टर ने अपने कन्धों को धीरे से हिलाया और नर्स से बोला, "दूसरा मरीज़ लाओ।"

संसार के इस भरे हस्पताल में यही कुछ होता है। जब एक मरीज़ चला जाता है तो दूसरा तुरन्त उसकी जगह आ जाता है।

इस दुर्घटना के कई दिन पश्चात् फूल वाले का छोटा भाई उसी दुकान पर अपनी तोतली भाषा में गजरे और हार बेच रहा था और एक छोटी-सी लड़की अपने बाप की अंगुली पकड़े हुए उसे अत्यन्त लुभावने ढंग से विवश कर रही थी कि वह उसे नन्हे फूल वाले की दुकान से चम्बेली के फूलों का एक सुन्दर हार ले दे।

लगते ही उसके शरीर से बड़ी २ लपटें उठ खड़ी होंगी। उसके पैर डगमगाए और उसने बसन्तासिंह का हाथ पकड़ लिया। और फिर दोनों देर तक मार्ग की उड़ती हुई धूल को देखते रहे।

बसन्तासिंह ने अपनी छिदरी दाढ़ी कुरेदते हुए पूछा—"तुमसे हमीदा ने क्या कहा?"

मोहन ने कहा—"चली गई।"

"नहीं मानी?"

"नहीं", कहने लगी—"यह घर तो मुझे अजनबी लगता है। इसके श्वासों में विष भर गया है। यह वायु मानो मेरा रक्त चूसना चाहती है। अब मैं यहाँ नहीं रह सकती।"

बसन्तासिंह ने मोहन का हाथ दृढ़ता से पकड़ लिया। उसने अपने अन्तर में उमड़ती हुई आह को बड़ी कठोरता से दबा दिया। रुक-रुक कर बोला—"लौट चलें...अभी ढलवाल में नूर मोहम्मद के यहाँ बहुत से लोग एकत्र हैं। उन्हें बचाने का प्रबंध करना है।"

मोहन ने कहा—"मुझे नींद आरही है।"

बसन्तासिंह ने कहा—"पैदल चलोगे तो नींद दूर हो जायगी।

वह सड़क से हट कर मैदान की ओर हो लिये। यहाँ खेत नहीं थे परन्तु कटीली थोर की झाड़ियाँ उगी हुई थीं। झुण्ड सूर्य की उष्णता से तपे हुए थे और उनके पास से गुज़रते हुए भट्ठी की सी आँच लगती थी। बगूले चक्कर खाते हुए चले आ रहे थे। गर्मी से हाँपते हुए सटले मोहन और बसन्तासिंह के पैरों की चाप सुनकर धरती से कुदक कर झुण्डों में छिप जाते। कहीं २ शीशम के तनों से लगी हुई गर्मी से हांपती हुई गिलहरियाँ अकस्मात् बिदक कर ऊपर की टहनियों की ओर भाग जातीं। अचानक एक बहुत बड़ा साँप सामने से सर २ करता हुआ रास्ता काट गया। मोहन और बसन्तासिंह के पग एक क्षण के लिए रुके, फिर आगे बढ़ गए।

मोहन बोला—"अब मुझसे चला नहीं जाता।"

बसन्तासिंह बोला—नहर के किनारे पुल के नीचे बैठ जायेंगे। दम लेकर आगे चलेंगे परन्तु अधिक देर नहीं रुकेंगे क्योंकि चौकी पर लोग ढलवाल की ओर क़ाफ़ले की ख़बर लेकर आते होंगे। हमें शीघ्र पहुँचना चाहिये, तनिक तेज़ चलो। यदि बहुत थक गए हो तो मैं तुम्हें उठा लूँ ?"

अब मोहन ठीक चलने लगा।

नहर के किनारे वे दोनों रुक गए। चारों दिशाओं में दृष्टि दौड़ाई परन्तु कोई दिखाई नहीं दिया। सपाट धरती थी, सपाट आकाश था। कोई चील भी आकाश में न तैर रही थी। नहर का पानी किनारे के सरकण्डों में चक्कर काटता हुआ धीरे २ बह रहा था। बसन्तासिंह पुल की ओर ध्यान से देखकर बोला—"क़ाफ़ले के कुछ लोग इधर से भी गुज़रे हैं।"

सहसा मोहन ने निकट के शीशम के झुण्ड के नीचे देखकर कहा, —"वह क्या है ?"

शीशम के झुण्ड के नीचे कुछ लाशें पड़ी थीं। किसी ने क़ब्र बनाने का प्रयत्न किया था। फिर इसे बेकार समझ कर इन लाशों पर मिट्टी डाल दी थी। मिट्टी और घास फूँस और कीकर की एक बड़ी सी डाल उनके ऊपर पड़ी थी। मोहन और बसन्तासिंह भाग कर उधर गए और डाल हटा कर और घास फूँस अलग करके लाशों को देखने लगे।

पहली लाश के हाथ में एक मज़बूत लाठी थी। उसके पाँव में एक मज़बूत जूता था और उसके मैले तहमद में एक पोटली बंधी थी। मोहन ने पोटली खोल कर देखी। चने थे, सूखे चने। बस और कुछ नहीं था। छाती से मिट्टी हटाई तो वहाँ एक गहरा घाव था। आगे से मिट्टी हटाई तो कुछ न मिला—सिर ग़ायब था।

मोहन ने कहा—मुझे तो पीरू तेली की लाश लगती है।

"नहीं," बसन्तासिंह ने कहा, "मेरे विचार में फ़ज्जा कुम्हार है।"

मोहन उस लाश को परे करके दूसरी लाश देखने लगा। पाँव

नंगे थे और स्त्री के। वह हरे रंग की शलवार पहने हुए थी। कोई सात साल की लड़की थी। ऊपर का होंठ दाँतों तले आ गया था। आखें बन्द थीं। कानों में सुनहरी बालियाँ थीं। शरीर पर कहीं घाव का चिह्न न था।

मोहन ने कहा—"यह तो खुदाबख्श की बेटी है, एक दिन जब मैं साठीपुर से लौट रहा था तो यह दोपहर की कड़कड़ाती हुई धूप में भैंसों को पानी पिला रही थी। मैंने इससे पूछा था "तुम्हारे पास लस्सी है ?" इसने नहर के किनारे मटका दबा रखा था। सारी की सारी लस्सी मैं पी गया। यह खड़ी देखती रही और मुस्कराती रही। मैंने उससे कहा "मैं तुम्हारी सारी लस्सी पी गया हूँ।" इसने उत्तर दिया—"कोई बात नहीं, तुम अपने गाँव वाले हो। मैं कल तुम्हारे घर आकर यह मटकी भर लाऊँगी।"

मोहन ने पूछा—"परन्तु यह मरी कैसे ?"

बसन्तासिंह ने लड़की के मुख पर दुपट्टा डाल दिया और मोहन की ओर भेद भरी दृष्टि डाल कर कठोरता से कहने लगा—"यह न पूछो तो अच्छा है।"

तीसरी लाश पर से मिट्टी हटाई तो कुछ पुस्तकें नीचे सरक गईं। एक दुबला पतला हाथ इन पुस्तकों को थामे हुए था। मोहन पुस्तकों के पन्ने पलटने लगा। पन्ने एक दूसरे से अलग न होते थे, रक्त में भीगकर एक दूसरे से चिपक गए थे।

मोहन ने कहा—"यह भारतवर्ष का भूगोल है।"

बसन्तासिंह ने कहा—"इसमें पंजाब विभाजन का नक़शा कहीं नहीं है। महमूद ग़ज़नवी से लेकर लार्ड वेवल तक कोई पंजाब को विभाजित करने का साहस न कर सका।"

मोहन बोला—"यह दूसरी पुस्तक भारत का इतिहास है परन्तु इसमें केवल एक ही पत्थर और घात के युग का वर्णन है। इस पत्थर

और घात के युग का वर्णन नहीं है जो बीसवीं शताब्दी में पुनः उदय हुआ है।"

मोहन ने तीसरी पुस्तक उलटी—"यह विज्ञान की पुस्तक है, यह ड्राइङ्ग-बुक है, यह नोट-बुक है... यह...यह क्या है?"

बसन्तासिंह ने देखा कि लड़के ने दूसरे हाथ से एक पोटली को ज़ोर से छाती से लगा रखा है। पोटली खोल कर देखी—उसमें एक शलवार थी, एक धारीदार कमीज़ और एक जवाहरलाल नेहरू की नई पुस्तक Discovery of India। तीनों चीज़ें रक्त-रञ्जित थीं।

बसन्तासिंह से कहा—"पन्द्रह अगस्त के उल्लास में इसने नये कपड़े सिलवाये होंगे और विचार करो कि किस-किस यत्न से इसने इस पुस्तक को लेने के लिए पैसे जोड़े होंगे।"

मोहन ने विकम्पित हाथों से इस किताब को उठाया। बोला—"भाई, जवाहरलाल जी भारत को समझते तो कदाचित् वह इतनी भारी भूल न करते। वे कदाचित किताबों के अधिक निकट रहे हैं, और साधारण जनता से बहुत दूर......कदाचित इसी कारण इस लड़के की हत्या हुई। इसके साथ यह पुस्तकें भी घायल हो गईं, यह इतिहास, यह भूगोल, यह विज्ञान, मानव के विद्या और ज्ञान के कोष आज यूं मिट्टी में मिला दिये गए। सरल बालक का निस्तेज मुख मुझे अपनी मृत्यु का शोक मनाता हुआ प्रतीत नहीं होता। वह तो विद्या, ज्ञान, साहित्य, दर्शन-शास्त्र और बुद्धिवाद की मृत्यु का शोक मना रहा है।"

बसन्तासिंह लड़के को नई लट्ठे की शलवार पहनाने लगा। मोहन ने कहा—'क्या कर रहे हो?"

"मैं इसे इसकी नई शलवार पहनाऊँगा, इसकी रक्त में रँगी धारीदार कमीज़ पहनाऊँगा और इसके हाथ में Discovery of India दे कर इसे नई देहली ले जाऊँगा, जवाहरलाल जी के पास।"

मोहन एक अत्यन्त कटु हँसी हँस कर बोला—"नई देहली तो अभी बहुत दूर है, पहले तो इसे निकट के गाँव के स्कूल में ले जाओ

और जाटों के लड़कों से पूछो कि इन पुस्तकों को रक्त में कितने रंगा है। फिर लुधियाने के बाज़ारों और स्कूलों और कालिजों के लड़कों से पूछो कि इस लड़के को, इन पुस्तकों को, पहचानते हो? ज्ञान के संरक्षको! जब तुम्हारा कोष लुट रहा था उस समय तुम कहाँ थे, हड़तालों के जलूसों में आगे २ चलने वालो, तुम ने भी अपनी पुस्तकों पर छुरी चलाई है। हिन्दू विद्यार्थी, सिक्ख विद्यार्थी और मुस्लिम विद्यार्थी बनकर विज्ञान, साहित्य और दर्शन-शास्त्र के प्रति छल किया है।

मोहन सहसा वह किताब उठाए खड़ा हो गया। बसन्तासिंह भी खड़ा हो गया।

बसन्तासिंह ने कहा—"मित्र, तुम भूल रहे हो। क़ाफ़ले को पहुँचाने वाले हमारे साथियों में पाँच विद्यार्थी भी थे।"

"पाँच हज़ार में से पाँच या पाँच लाख में से पाँच......पाँच कम पाँच लाख को क्या धार्मिक द्वेष-भाव का काला सर्प नहीं डस गया है?" मोहन ने उत्तेजित हो कर पूछा।

बसन्तासिंह लड़के को कमीज़ पहनाने लगा—वह कुछ सोच रहा था और सोच कर उत्तर देने वाला ही था कि पुल पर से पग-ध्वनियाँ सुनाई दीं। दोनों मित्रों ने मुड़ कर देखा—चार पाँच आदमी भागे-भागे उनकी ओर आ रहे थे। उनके आगे-आगे कलवन्तसिंह और गोपलाल थे।

बसन्तासिंह ने पूछा—"क्या है कलवन्त?" कलवन्त बसन्तासिंह का छोटा भाई था।

क़ाफ़ले पर आक्रमण हो गया। जगजीत मारा गया। जाट बहुत उत्तेजित थे। कलवन्तसिंह रुक गया और मोहन की ओर देख कर बोला—"दस बारह शरणार्थी मारे गए। वे लोग हमीदा को उठा कर ले गए।"

मोहन काँपने लगा।

बसन्तासिंह के गले की रगें तन गईं। उसका मुख लाल हो गया। उसने धीरे से पूछा—"तुम उनको पहचानते हो?"

कलवन्त ने कहा—"हाँ, अपने ही गाँव के लोग हैं, मोती और फेरू और शमशेरसिंह और माधो। उन्होंने गाँव के हिन्दुओं और सिक्खों को भड़काया है। उन्हें हमारे भी विरुद्ध कर दिया है। वे लोग अब ढलवाल पर भी आक्रमण करने जा रहे हैं—नूरमोहम्मद नम्बरदार के घर।"

बसन्तासिंह ने कहा—"तुम कितने आदमी हो?"

कलवन्त ने कहा—"इस समय जाना मौत के मुँह में जाना है।"

बसन्तासिंह ने कहा—"मेरे साथ कौन आता है? मैं गाँव जा रहा हूँ।"

कलवन्तसिंह ने उसे पकड़ लिया, विनय से बोला—"वे तुम्हें मार डालेंगे। इस समय मत जाओ, तुम्हें वाहगुरु की सौगन्ध।"

बसन्तासिंह ने अपने को छुड़ा कर बड़ी कठोरता से कहा—"इस समय मेरे साथ कौन आता है? बोलो।"

कलवन्त और उसके चारों साथी मौन खड़े रहे। मोहन और बसन्तासिंह गाँव की ओर चले, परन्तु वे लोग वहीं खड़े रहे। बसन्तासिंह और मोहन बहुत दूर निकल गए, परन्तु वे लोग फिर भी वहीं खड़े रहे। बहुत दूर जा कर मोहन ने मुड़ कर देखा तो बसन्तासिंह बोला—"चले आओ, वे लोग मर चुके हैं। वे नहीं आएंगे।"

फिर बसन्तासिंह और मोहन दौड़ते हुए गाँव की ओर बढ़ गए। गाँव की चौहद्दी पर पहुँच कर वे रुक गए और एक दूसरे की ओर देखने लगे।

मोहन ने कहा—"तुम्हारे पास रिवाल्वर है?"

"हाँ।"

"मेरे पास भी है," मोहन ने कहा।

"आगे बढ़ो" बसन्तासिंह ने कहा। मोहन आगे बढ़ने लगा।

बसन्तासिंह के घर पर कोई नहीं मिला। द्वार बन्द थे। चारों ओर सन्नाटा था। तेली के घर का द्वार टूटा पड़ा था। सामने आँगन में टूटी-फूटी हाँडियाँ दिखाई दे रही थीं। आगे बढ़े तो दाता हलवाई दिखाई दिया। वह एक गँडासे पर सान धर रहा था।

मोहन ने कहा "तुम भी, दाताराम ?.........पौनी चलाते चलाते गँडासे पर आ गए। जय हिन्दू धर्म की।"

दाताराम लज्जित होकर बोला—"सब लोग लूट रहे हैं, मैंने सोचा मैं क्यों पीछे रहूं।"

बसन्तासिंह ने गँडासा उसके हाथ से छीनकर ज़ोर से परे को फेंक दिया। "तेलियों के मुहल्ले में तुम्हारा घर है। जीवन भर वे तुम्हारी रेवड़ियाँ खाकर तुम्हारा धन्धा चलाते रहे। लज्जा नहीं आती ?"

दाताराम ने चिल्लाकर कहा—"लज्जा के लिए मैं ही रह गया हूँ ? मोती से कहो, माधो से कहो, शमशेर से कहो, गाँव के नवयुवकों से बातें करो तो बात भी है। एक बुड्ढे हलवाई का गँडासा छीनकर बड़े योद्धा बनते हो।"

परन्तु बसन्ता और मोहन आगे जा चुके थे।

बड़ के वृक्ष के नीचे, तालाब के किनारे, जहाँ एक खम्बे पर डाक का लाल डब्बा टँगा था और जहाँ पर दो छकड़े खड़े थे वहाँ पर महाराज पहलवान और झब्बू सुनार, फ़ज्जे कुम्हार के घर से बड़ी-बड़ी गठरियाँ बाँधकर निकाल रहे थे। मोहन और बसन्तासिंह को देखकर ठिठक गए। मोहन ने महाराज पहलवान को गले से पकड़कर कहा। "बताओ वह लोग हमीदा को पकड़कर किधर ले गए हैं ?"

महाराज ने ज़ोर से मोहन का हाथ झटककर टकोला संभाल लिया। बसन्तासिंह ने रिवाल्वर उसके सामने करके कहा—"शीघ्रता से बताओ। हमें देर हो रही है।"

महाराज के मुँह से झाग निकलने लगे परन्तु वह कुछ कर न सकता था। झब्बू सुनार ने कम्पित स्वर में कहा—"वे लोग कहते

थे, वे सब माधो के घर एकत्रित होंगे। वहां पर दावत करेंगे। हमीदा की सारे गाँव में दावत करेंगे। वहाँ पर...... ।"

सहसा वह चुप हो गया। उसका सिर झुक गया।

मोहन क्रोध से काँपने लगा। बसन्तासिंह ने कहा "तुम हमारे साथ चलते हो माधो के घर ?"

महाराज और झब्बू दोनों ने सर इन्कार में हिलाया। झब्बू बोला—"माधो के पास राइफ़ल है। शमशेर के पास रिवाल्वर है। वे लोग तुम्हें भी मार डालेंगे, मैंने सुना है...... ।"

मोहन और बसन्तासिंह दोनों आगे बढ़ गए। पीपल वाले शिवाले पर बहुत से लोग एकत्रित थे क्योंकि सामने माधो का घर था। यहाँ बहुत से लोग तलवारें और गँडासे और टकवे और आरे लिए इकट्ठे थे। माधो के घर से कभी-कभी चीत्कार उठती थी तो बाहर से ये लोग पाशविक प्रसन्नता से चिल्लाना शुरू कर देते थे। एक आदमी ढोल लिए खड़ा था। वह प्रत्येक चीत्कार पर ज़ोर-ज़ोर से ढोल बजाने लगता था। और दो-चार आदमी टकवे उठाकर उछलने, कूदते, नाचने लगते थे।

बसन्तासिंह और मोहन को सामने से आते देखकर वे लोग सहसा चुप हो गए। ढोल वाले ने ढोल बजाना बन्द कर दिया। नाचने वालों के पैर सहमकर रुक गए। कई लोगों ने तलवारें सूँत लीं और गँडासे सँभाल लिए। भीड़ के जो लोग तितर-बितर हो गए थे वे एक जत्थे में इकट्ठे हो गए और मोहन और बसन्तासिंह को घूरने लगे।

मोहन और बसन्तासिंह शिवाले के सामने जाकर रुक गये। उन की पीठ की ओर माधो का घर था जहाँ से चीत्कारें उठ रही थीं। सामने भीड़ थी। बसन्तासिंह के गाँव के किसान उसके अपने भाई-बन्धु और सम्बन्धी, हिन्दु और सिख, आठ सौ साल से मुसलमानों के साथ इस गाँव में भाई-चारे की डोर में बंधे रहते चले आये थे। परन्तु अब सोलह अगस्त १९४७ की तीसरी पहर एक चेहरा भी ऐसा न था जिसे

बसन्तासिंह अपना भाई-बंधु या सम्बन्धी कह सकता।

माधो के घर से फिर चीत्कारें उठीं। बसन्तासिंह ने बड़े कटु स्वर में कहा—"अब ढोल बजाओ, अब रुक क्यों गये। अन्दर वही हमीदा ही तो है जिसे तुमने गोद में खिलाया है। चाचा रल्दू! तुम नाचते-नाचते क्यों रुक गये। अन्दर तुम्हारी बेटी ही तो है जिसे हमीदा बेटी कहते कहते तुम्हारी जिह्वा न थकती थी। वही हमीदा बेटी जो बचपन में तुम्हारी जेब में रखी हुई रेवड़ी मुँह से निकाल कर खा जाया करती थी। तुम्हारी हमीदा बानो जो लुधियाने में पढ़ती थी और तुम उसके विवाह पर दहेज स्वयं देना चाहते थे। यह उसी हमीदा का विवाह कर रहे हो तुम?"

माधो के मकान से फिर चीत्कारें उठीं। मोहन ने कहा—"मैं अन्दर जाता हूँ।"

बसन्तासिंह ने कहा—'ठहरो'। फिर भीड़ की ओर मुड़ कर वह बोला—"सुना है तुम हमारी जान लेना चाहते हो।"

भीड़ मौन थी।

बसन्तासिंह ने रिवाल्वर खोलकर भीड़ के सामने फेंक दिया। मोहन ने भी अपना रिवाल्वर शिवाले की ओर फेंक दिया। बोला—"बसन्तासिंह, मैं अन्दर जाता हूँ। तुम इन लोगों को समझाओ।"

"ठहरो" बसन्तासिंह ने कहा "वह लोग इस समय...ठहरो मैं तुम्हारे साथ अन्दर चलता हूँ।"

"परन्तु" मोहन यह कहते कहते अन्दर चला गया "मोती पर मेरा प्रभाव है मैं अन्दर जाता हूँ।"

भीड़ पत्थर की भाँति निश्चल खड़ी रही।

अन्दर से द्वार खटखटाने का शब्द सुनाई दिया। फिर किसी ने द्वार खोला। फिर किसी ने गोली चलाई। फिर एक स्त्री की तीव्र चीत्कार सुनाई दी और फिर निस्तब्धता छा गई। बसन्तासिंह ने मुड़ कर भीड़ की ओर देखा और कहा—"अच्छा अब में अन्दर

जाता हूँ"। वह अन्दर जाने के लिए मुड़ा।

भीड़ में से एक आदमी बोला, "अन्दर मत जाओ, उन लोगों ने शराब पी रखी है वे तुम्हें भी मार डालेंगे।" दूसरा आदमी बोला, यह रिवाल्वर लेते जाओ बसन्तासिंह, और उसने रिवाल्वर बसन्तासिंह की ओर फेंका।

बसन्तासिंह ने रिवाल्वर वहीं धरती पर पड़ा रहने दिया। उसने रिवाल्वर को पाँव से ठोकर लगाई और भीड़ की ओर देखकर बोला—"यह रिवाल्वर तुम्हारे जैसे डरपोकों के लिए है" और अन्दर चला गया।

अन्दर से द्वार खटखटाने का शब्द सुनाई दिया। फिर किसी ने द्वार खोला। फिर किसी के धब से गिरने की आवाज़ आई। फिर द्वार बन्द हो गया। और फिर पूर्ण निस्तब्धता छा गई।

भीड़ में लोगों की साँस रुक गई। दिल ज़ोर-ज़ोर से धड़कने लगे। गँडासे हाथों से गिर गये।

बहुत देर के पश्चात् द्वार खुला और बसन्तासिंह धीरे-धीरे बाहर आया। उसके दाहिने कंधे पर मोहन की लाश थी बायें कंधे पर हमीदा की और दोनों लाशों से रक्त बह रहा था। वह माधो के घर के बड़े द्वार पर रुक गया।

सामने भीड़ पत्थर की भाँति निर्जीव खड़ी थी।

बसन्तासिंह ने उदास स्वर में कहा—"मेरे संबंधियो और नातेदारो, बड़े बूढ़ो, तुमने मेरे वर्षों के परिश्रम पर पानी फेर दिया। तुमने पुरानी दुनिया के चक्कर में आकर नई दुनिया को दस साल पीछे धकेल दिया। अब मैं गाँव की चौपाल में जाता हूँ और अपने पथ-भ्रष्ट साथियों की राह देखता हूँ क्योंकि आज सन्ध्या से पहले पहले हमें ढलवाल पहुँच कर नूर मोहम्मद नम्बरदार के यहाँ एकत्रित हुए लोगों को बचाना है। इस काम में मेरी सहायता कौन करेगा?"

लोग चुपचाप खड़े रहे। कोई अपने स्थान से नहीं हिला। बसन्ता

सिंह दोनों लाशों को उठाये, सिर झुकाये धीरे धीरे वहां से चला गया। चौपाल में पहुँचकर उसने चारों ओर देखा, वहाँ कोई आदमी न था। यह चौपाल उसके परिश्रम का फल और उसकी आशाओं का केन्द्र थी। यहाँ उसने किसानों से बड़ी बड़ी लड़ाइयाँ लड़ी थीं। कई बार हार भी खाई थी परन्तु ऐसी हार कभी न खाई थी।

बसन्तासिंह चौपाल के खुले आँगन में बढ़ता गया जहां एक लाल रङ्ग का झंडा लहरा रहा था। बसन्तासिंह उस झंडे के नीचे जा खड़ा हुआ, अकेला हमीदा और मोहन की लाशें उठाये। वह 'इन्टरनेशनल' गा रहा था।

वह देर तक चौपाल में खड़ा गाता रहा और देर तक कोई न आया। और उसके पाँव अँगारे की तरह तप कर लाल हो गये और हमीदा और मोहन का रक्त और उसका पसीना घुल मिलकर सूखी मिट्टी में समाता गया। और उसकी अकेली आवाज़ चारों ओर दोपहर के सन्नाटे में गूँजती रही और हवा में झंडा लहराता रहा।

कुछ देर के बाद बसन्ता सिंह ने देखा कि निहत्थे किसान एक-एक, दो-दो की टोलियों में, सिर झुकाए, चौपाल के अन्दर आ रहे हैं।

: ८ :

जगन्नाथ

"भाई साहब ! वे अलीगढ़ के पक्के काले रंग के लोहे के ट्रंक आपने भी बहुधा देखे होंगे, और शायद ख़रीदे भी होंगे—वे जिन के पीछे की ओर 'कारख़ाना जगन्नाथ खतरी' लिखा होता है और उस ठप्पे के चारों ओर एक सफ़ेद गोल दायरा खिंचा हुआ होता है। देखे हैं ना आपने ? बस समझ लीजिये ट्रंकों में यही असली माल है और इससे बढ़िया लोहे के संदूक केवल गोडरेज वाले ही बनाते हैं। नहीं तो हिन्दुस्तान में लाला जगन्नाथ खतरी के कारख़ाने का कोई मुक़ाबला नहीं कर सकता......हाँ भूतनाथ तेल की बात अलग है। परन्तु इस समय तो मैं लोहे के ट्रंकों की बात कर रहा था। समझे आप, अलीगढ़ दो चीज़ों के लिये मशहूर है—एक तो मुस्लिम युनिवर्सिटी के लिए और दूसरे, राम आपका भला करे, यही मेरे कारख़ाने के लिए। बड़े २ आला कारीगर मेरे कारख़ाने में काम करते हैं, जनाब !"

लाला जगन्नाथ खतरी इसी तरह, इसी अन्दाज़ में, अपनी सीट पर फुसकड़ा मार कर बैठे हुए एक हाथ से अपनी मूछों को ठीक करते हुए और दूसरे हाथ को अपनी सफ़ेद धोती की तहों में छुपाते हुए, रेलगाड़ी के डब्बे से बाहर देखते हुए, बातें करते जाते हैं। यह उनकी बहुत पुरानी आदत है। कहते हैं कि मैं अपनी कम्पनी का स्वयं चलता फिरता विज्ञापन क्यों न बनूं ? लोग रेल-गाड़ियों में सहस्रों रुपये ख़र्च

करके अपने विज्ञापन देते हैं। हम एक पैसा बिना खर्च किये ही अपने कारखाने का विज्ञापन दे रहे हैं। और इसमें बुराई ही क्या है? अब इन रेलवे वालों को देख लो, क्या ये अपनी रेल का विज्ञापन स्वयं नहीं देते? तुम स्वयं ही देख लो। यह देखो, डब्बे में विज्ञापन लगा हुआ।"

मुसाफ़िरों की आंखें एक बड़े से पोस्टर पर जम गईं जो डब्बे के अन्दर एक लकड़ी के चौखटे के अन्दर लगा हुआ था। यह जगन्नाथ पुरी के मन्दिर का चित्र था, जिस के दर्शनों के लिये लाखों हिन्दू जगन्नाथ पुरी जाते हैं। जगन्नाथ की स्तुति सारे भारत भर में की जाती है। जगन्नाथ देवता के दोनों हाथ पाँव कटे हुए हैं। मूर्तियों और चित्रों में उनकी यही आकृति दिखाई जाती है। इसी महान् देवता के विशाल मन्दिर का वह चित्र था जिसे रेलवे वालों ने चौखटे में जड़ कर इस डब्बे में लगाया हुआ था। चित्र के नीचे लिखा हुआ था "भारत का भ्रमण कीजिये।"

"देखा आपने" लाला जगन्नाथ खतरी बोल उठे, "रेलवे वाले जगन्नाथ पुरी के मन्दिर का चित्र लोगों को दिखाते हैं ताकि लोगों के ठट्ठ के ठट्ठ रेलों में चढ़ कर पुरी जायें। नहीं तो यह रेल कोई हिन्दू थोड़े ही हैं। ही ही ही...।"

लाला जगन्नाथ खतरी अपने मैले दाँत निकाल कर हँसे। मुझे उनके मुंह से एक बहुत बुरे प्रकार की दुर्गन्ध आई। उनकी हँसी भी मानों गन्दगी से भरी हुई थी। ऐसा लगा जैसे डब्बे में किसी ने गन्दगी उछाल दी हो। मंजन का कोई नुस्ख़ा इस नारकीय मुख के लिये लाभकारी न हो सकता था। ऐसा प्रतीत होता था जैसे यह दुर्गन्ध उनके शरीर में से नहीं वरन् उनकी आत्मा के कण कण में से फूट रही थी। वैसे मैं रिश्ते में उनका भानजा हूँ। मगर यह और बात है......।

लाला जगन्नाथ का क़द नाटा और शरीर मोटा है। इनके मुख का

रंग इनके कारखाने के ट्रंकों की भाँति काला है। लाला जी की खाल भी लोहे की चादरों के समान कठोर, कड़ी, गठीली और काली है। सुना है युवावस्था में बहुत व्यायाम करते थे, लेकिन अब बातें बहुत करते हैं। सिर घुटा हुआ है, चिंदिया के बाल बहुत छिदरे हैं। मूँछें बिल्कुल सफ़ेद हो गई हैं और मुख पर ऐसी लगती हैं जैसे किसी ने काले ट्रंक में सफ़ेद ताला लगा दिया हो। हाँ, लाला जी के मुँह का ताला हर समय खुला रहता है—ये हर समय बातें करते रहते हैं। बातें न करें तो राल टपकाते रहते हैं। और इन दोनों कामों के साथ-साथ तीसरा काम खाने-पीने का भी चलता रहता है। मैं सोचता हूँ, वह दिन जबकि ये बात नहीं करेंगे, इनकी मौत के बाद ही आयेगा। ईश्वर न करे कि ये कभी मरें। मैं तो इनके कारखाने में जनरल-मैनेजर हूँ और फिर इनका भानजा हूँ और इनके चरणों की कृपा से सारा कारख़ाना चल रहा है।

लाला जगन्नाथ अपने एक साथी मुसाफ़िर से बात-चीत का रास्ता निकालते हुए बोले, "यह मेरा भानजा है। (मेरी ओर इशारा करते हुए) साहब, यह दिन भर सूट डाटे रहता है। मैं इसे कुछ कहता नहीं हूँ क्योंकि यह अभी जवान है। पहले, सुना है, यह कहानियाँ लिखता था। आजकल ट्रंक बेचता है। इसलिए मैं इसे तनिक ढील देता हूँ, ताकि यह काम सीख जाये और कहानियाँ लिखना भूल जाये। साहब, अंग्रेज़ों ने तो हमारे लौंडों का सत्यानाश कर दिया है। इससे पहले हमारे यहाँ कौन कहानियाँ लिखता था। एक गुसाईं तुलसीदास की रामायण थी, सो वह तो पुराना इतिहास है और फिर वह धर्म की किताब है। अब यह नये छोकरे क्या लिखेंगे जी? मैं इसे लखनऊ लिये जा रहा हूँ ताकि व्यापार के ओर-छोर का इसे कुछ पता चले और ठीक ढंग से काम करने लगे। अरे साहब, यह गाड़ी तो बहुत तेज़ जा रही है। तूफ़ान-मेल है ना! मगर साहब, आजकल तो ड्राइवर ज़रा आराम से गाड़ी चलायें तो अच्छा है।

"क्यों ?" एक मुसाफ़िर ने पूछा। उसने कुछ देर पहले अपना नाम राम दुलारे बताया था। वह राजस्थान का रहने वाला था, कलकत्ते में कारोबार करता था और जब वहां बम पड़े तो वहां से भाग कर देहली चला आया था। अब अपने किसी काम से लखनऊ जा रहा था। दोनों कल्लों में उसने पान दबा रखे थे। यह इस लिये कि उसके दोनों गाल अन्दर को धंसे हुए थे। यदि दोनों कल्लों में पान दबाकर उन्हें वह कृत्रिम रूप से न उभारता तो निश्चय ही वह बिल्कुल बूढ़ा लगता। पान की कृपा से उसका मुँह भरा-भरा सा दिखाई देता था।

"राम दुलारे जी" ला० जगन्नाथ रान खुजाते हुए बोले, "इस कांग्रेस ने लुटिया डुबो दी। इस युद्ध-काल में जबकि शत्रु सर पर चढ़ा आ रहा है, अपने देश में ही इसने लड़ाई का समाँ बाँध कर रख दिया। कांग्रेस वाले कहते हैं कि आज़ादी दो, स्वराज्य ! हुँह, साहब, हमें तो आजकल दनादन ठेके मिल रहे हैं। और ये लोग सरकार से लड़ने की ठान रहे हैं। आप को पता है ना, जो लोग सरकार को तंग करते हैं उनका क्या परिणाम होता है ?

"जेल में बन्द कर दिये जाते हैं" मौलवी करम अली ने अंगुलियां चटख़ाते हुए कहा।"

"लेकिन मौलवी जी, कांग्रेस तो अब जेल में पड़ी है। अब बदमाश लोगों ने रेलों को उखाड़ना शुरू कर दिया है।"

"हैं !" राम दुलारे जी ने ज़रा घबरा कर पूछा।

"जी हां, साहब ! आप क्या समझते हैं ?" लाला जगन्नाथ ने बड़े भेद-भरे लहजे में कहा। "इस लाइन पर भी कई बार गड़बड़ होते २ रह गई।"

एक और मुसाफ़िर ने पूछा, "लखनऊ कितनी दूर है जी ?"

"अभी तो चार स्टेशन शेष रहते हैं। पहले ओखला आएगा...

फिर संडीला . ...फिर बीजीपुर का गाँव..... और फिर बीनानगर और उसके बाद लखनऊ।"

"हाय लखनऊ!" एक लखनवी चीख़ा।

"अलीगढ़! बस अलीगढ़!" हाय, दुनियाँ में यदि कोई स्थान है तो अलीगढ़। वहाँ की दो चीज़ें मशहूर हैं... .।"

ला० जगन्नाथ खतरी की बात समाप्त भी न होने पाई थी कि एक पंजाबी, जो एक कोने में टाँगें फैलाए तीन आदमियों की जगह घेरे पड़ा था, वहीं से दहाड़ा, "हाय लाहौर! मैं कुर्बान! लाहौर बस लाहौर ही है।"

मौलवी करमअली ने खाँसकर कहा, "कुछ भी हो हिन्दुस्तान का मुसलमान इस तहरीक से अलग है। वह इस तहरीक पर लानत भेजता है। यह सब हिन्दू की चालाकी है। वह हिन्दुस्तान पर अपनी हुकूमत क़ायम करना चाहता है।"

"परन्तु, मौलवी साहब, देश भर में हाहाकार मचा हुआ है, गिरफ़्तारियाँ हो रही हैं, मशीनगनें चल रही हैं, बिहार में हवाई जहाज़ों से गोले बरसाकर लोगों के समूहों को तितर-बितर किया जा रहा है। आख़िर यह क्या हो रहा है?"

"स्वतंत्रता के लिये लड़ने वालों को इस समय अंग्रेज़ों का साथ देना चाहिये था", एक खद्दर-धारी सिगार पीते हुए बोला। "देश को इस समय स्वतंत्रता की इतनी आवश्यकता नहीं है जितनी फ़ैसिज़्म का मुक़ाबला करने की। हमारे देश के नेताओं ने इस बात के महत्व को नहीं समझा। परिणाम यह है कि शत्रु सिर पर आन पहुँचा है। भला कोई पूछे—यह क्या मूर्खता है।"

जब खद्दर-धारी सिगार अपनी बात समाप्त कर चुका तो एक खद्दर-धारी पाइप, जो सिगार के समीप ही बैठा था, कहने लगा, "सच कहते हैं आप। यह जनता की लड़ाई है, सारे हिन्दुस्तान की लड़ाई है। इस समय हमें फ़ैसिज़्म का मुक़ाबला करना चाहिये।"

"ये स्वराज्य वाले मूर्ख हैं।"

खद्दर-धारी सिगार बोला, "मैं तो कहूँगा वे देश-द्रोही हैं।"

ला० जगन्नाथ खतरी बोले, "आप ठीक कहते हैं। देखिये, इस लड़ाई से हिन्दुस्तान को कितना लाभ पहुँचा है। मेरे कारख़ाने में पहले की अपेक्षा तीन गुना माल तैयार होता है। और अब हमारा माल दिसावर तक जाता है। मेरे कारख़ाने का माल! अरे! वह देखिये वह परे ऊपर वाली सीट पर जो ट्रंक रखा है, वह मेरे ही कारख़ाने का तो बना हुआ है। यह लो, बातों-बातों में संडीला भी निकल गया। अब शायद बीजीपुर आएगा, क्यों?" लाला जी मेरी पसलियों में चुटकी लेकर बोले। फिर मौलवी करमअली से कहने लगे, "बीजीपुर में मेरे इस भानजे का घर है। वहीं इसके मां-बाप, भाई-बहिन रहते हैं। वहीं इसकी 'वो' भी रहती है जिससे यह प्रेम करता है। ही ही ही...... ।"

मौलवी करमअली ने अपनी जेब से रूमाल निकालते हुए कहा, "बीजीपुर बड़ा ख़ूबसूरत गाँव है।"

"आपको भी पसन्द है?" मैंने ख़ुश होकर कहा।

"मौलवी साहब ने उत्तर दिया, "हाँ, वहाँ हमारे निकट-सम्बन्धी रहते हैं। सैयदों के वहाँ कई घर हैं।"

'मेरा भानजा पहले फ़साने लिखता था, मौलवी जी," जगन्नाथ जी ने मौलवी जी पर रोब कसने के लिये कहा। "कांग्रेस में काम करता था, कविता लिखता था। बड़ी कठिनाई से इस काम पर लगाया है।"

"कांग्रेस पर लानत!" खद्दर धारी पाइप बोला। "रैडिकल पार्टी ज़िन्दाबाद!"

सिगार ने जलकर कहा, "साले गवर्नमैंट से रुपये खाते हैं। तेरह हज़ार रुपये इन्हें हर महीने मिलता है। फिर तुम किस मुँह से इन स्वराज्य वालों को गाली देते हो?"

"समाजवाद बिल्कुल धोखे की टट्टी है!" मौलवी साहब ने अपनी सफ़ेद दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए कहा। इस्लाम जीता-जागता समाजवाद है।"

रामदुलारे हँसा।

ला. जगन्नाथ बोले, "सारा फ़तूर इन स्वराज्य वालों का है। लड़ाई के समाप्त होने तक ये क्यों नहीं शान्ति से बैठ जाते? इस लौंडे के भी पहले ऐसे ही ऊट-पटांग विचार थे। कांग्रेस में काम करता था यह। अब जाकर कहीं मैंने इसे आदमी बनाया है। हरे राम! हरे राम! रामदुलारे जी, देखना कहीं मेरे ट्रंक की ज़ंजीर तो ढीली नहीं हो गई? कम्बख़्त यह गाड़ी तो हवा हो रही है।"

ड्यौढ़े दर्जे का डब्बा न तो तीसरे-दर्जे जैसी मज़बूती रखता है और न पहले, दूसरे दर्जों जैसा ऐश्वर्य। इस की स्थिति बिल्कुल ऐसी होती है जैसी समाज में मध्यम वर्ग की—अर्थात् ग़रीबी और अमीरी की सारी बुराइयाँ इसमें होती हैं। मैंने चारों ओर आँखें दौड़ाईं। कहीं सहारा न पाकर मैंने सर खिड़की से बाहर निकाल लिया और अपने गाँव की सीमा की प्रतीक्षा करने लगा।

मेरी कल्पना में गाँव के हरे-भरे खेत घूमने लगे। आम के पेड़ों के नीचे मोर नाचने लगे। वायु में आम के बौर की सुगन्ध भरी हुई थी। कानों में कोयल अपने मधुर राग अलाप रही थी और प्रियतमा के पायलों की झंकार और पनघट पर लजीली निगाहों और मुक्त अट्टहास का सम्मिश्रण और चौपाल में बूढ़े लोगों की बातें। सैयद और पंडित, खतरी और कायस्थ, कमीन और खेतीहर, सीधे-सादे, नितान्त स्वार्थ-हीन न सही, परन्तु आपस में इतना स्नेह कि एक दूसरे के लिये जान देने को तैयार। दूर से सराय का मीनार दिखाई देगा, फिर गाँव के खेत घूमते हुए दिखाई देंगे। साँवले-सलोने बच्चे हाथों में गुलेल लिये, चीख़ते-चिल्लाते हुए, गाड़ी के निकट आ जायेंगे। मुझे देखकर 'मन्नू चाचा, मन्नू चाचा' का शोर मचायेंगे। गाड़ी पनघट के सामने

से निकलेगी। सम्भव है कि 'वह' भी......

गाँव की सीमा अभी नहीं आई थी, परन्तु, गाड़ी की गति धीमी होने लगी। फिर एञ्जन ज़ोर से सीटी बजाने लगा। फिर गाड़ी रुक-रुक कर चलने लगी।

"क्या हुआ ?"

"क्या हुआ ?"

"क्या बीजीपुर गाँव आ गया ?"

"नहीं तो," मैंने क्रोध में उत्तर दिया।

सब लोग बाहर झांक रहे थे। एक आदमी गाड़ी के आखिरी डब्बे की ओर भागा हुआ जा रहा था।

"क्या बात है ?" सब ने बारी-बारी पूछा।

उसने कहा, "पता नहीं। शायद कोई गाय इंजन के नीचे...!"

"गाय ! हाय, हाय !" लाला जगन्नाथ और रामदुलारे ने एकदम कहा, "बड़ा पाप हुआ ! राम राम !! गाड़ी में चढ़ने का यही तो दोष है। पुराने समय में लोग इसीलिये रेलगाड़ियों में नहीं वरन् बैल गाड़ियों में बैठते थे।"

फिर एक आदमी रेल के पिछले डब्बों की ओर दौड़ता हुआ निकल गया।

"क्या बात है जी ?" सब ने पूछा। "एक मेम का हार्ट-फेल हो गया है।"

"अरे, अरे ! पूअर गर्ल !" खद्दर-धारी पाइप ने कहा।

फिर बहुत से लोग डब्बों में से निकल पड़े। जितनी मुँह, उतनी बातें।

"एक मुसलमान गवाला गाड़ी के नीचे आ गया है।"

"अनिल्ला व अनाअलिया राजऊन !" मौलवी करम अली ने कहा।

"जी एक बकरी कट गई है। गवाला या गाय नहीं।"

"नहीं जी, ज़नाने डब्बे में एक बदमाश घुस गया और बल पूर्वक......।"

"सचमुच ? ही ही ही...।" न जाने लाला जगन्नाथ को हँसी किस बात पर आ रही थी।

"एक जेब-कतरा चलती रेल में से कूद पड़ा था।"

"नहीं जी, बच्चा गिर पड़ा था। ज़ंजीर खींची गई थी।"

"बीजीपुर यहां से कितनी दूर है ?" मैंने पूछा।

"लो, इन्हे अपना गाँव देखने की पड़ी हुई है।" लाला जगन्नाथ ने कहा।

उन्होंने एक क्षण रुक कर कुछ ऊँचे स्वर से कहा, "देख, मैं तुम से कहे देता हूँ। मैं तुझे सीधा लखनऊ ले जाऊँगा। पहले बिज़नस करके फिर घर जाने दूंगा... ।"

इतने में गार्ड सामने से निकला। उसने बताया कि आगे रेल की पटरी पर से एक मालगाड़ी उतर गई है। किसी ने शरारत की थी। आठ डब्बे उलट कर टुकड़े-टुकड़े हो गये।"

"कब ?"

"कल रात को। लाइन अब तक ठीक नहीं हुई है।"

"यह किस की शरारत हो सकती है ?"

"इन स्वराज्य वालों के अतिरिक्त और कौन हो सकता है ? लफ़ंगे !"

"सब कांग्रेस का दोष है !" लाला जगन्नाथ ने कहा।

गार्ड ने सहसा मुड़कर कहा, "नहीं पुलिस वाले बड़ी तीव्र पूछ-ताछ कर रहे हैं। उन्होंने बीजीपुर के गाँव वालों को दोषी ठहराया है।

मेरा कलेजा धक् से रह गया।

"लौंडे ! तू तो स्वराज्य वालों के साथ काम कर चुका है ?" मौलवी ने मेरी ओर संदेह-युक्त दृष्टि से देखते हुए कहा।

मैंने सिर झुका लिया।

सहसा गाड़ी फिर धीरे-धीरे चलने लगी।

टूटे हुए डब्बे गाड़ी के दोनों ओर दृष्टिगोचर हुए। फिर अपने गाँव की चौहद्दी, फिर सराय का मीनार जो एक गहरे स्याह धूएँ में लिपटा हुआ था। खेतों में न मोर थे, न कोयल, न ही स्टेशन के निकट बच्चे खेल रहे थे। कोई भी तो हमारे स्वागत के लिये नहीं आया था। गाड़ी आगे बढ़ती गई। सारे गाँव में आग लगी हुई थी। छप्पर जले हुए थे। पनघट पर कुत्ते खड़े थे और आश्चर्य तथा क्रोध से चिल्ला रहे थे। कहीं आदमी का निशान न था। घरों से लपटें और धूएँ के बादल से उठ रहे थे। बस।

बीजीपुर के स्टेशन पर पुलिस वालों का एक भारी समूह था। वे हर खिड़की के सामने खड़े थे और बड़े रोब से पूछते थे—"यहाँ कोई बीजीपुर का मुसाफ़िर उतरेगा?"

ला० जगन्नाथ ने मेरा हाथ पकड़ लिया। करम अली बोले, "लड़के, तूने तो स्वराज्य वालों के साथ काम किया है। इस समय तू भी घर लिया जाएगा और तेरे गोली मार दी जाएगी।"

"लानत है इन फ़िसादियों पर।" सिगार सुलगने लगा।

"हम मुसलमान इस झगड़े में शामिल नहीं हैं।" मौलवी साहब ने ज़ोर से कहा।

"ये स्वराज्य वाले देश-द्रोही हैं! यह जनता की लड़ाई है।" पाइप चहका।

"कोई उतरना चाहता है बीजीपुर के स्टेशन पर?" एक पुलिस वाले ने मेरी खिड़की के बिल्कुल निकट आकर पूछा। उसने मुझे घूरकर देखा और कहा, "क्या तुम बीजीपुर के रहने वाले हो?"

"जी नहीं," लाला जगन्नाथ ने तुरन्त उत्तर दिया। "यह लड़का तो रहता है ना, सन्तरी जी, अलीगढ़ में। आपने हमारे कारख़ाने का नाम अवश्य सुना होगा—'लाला जगन्नाथ खतरी, लोहे के ट्रंक बनाने वाले।' ऐहै, यह लीजिए, यह ताज़ा मौसमी खाइए। ख़ास देहली से

मँगवाई है । वाह; वाह ! रामदुलारे जी, आप भी चखिए । ऐंहैं ! क्या मौसमी है । सन्तरी जी, हम तो ट्रंक बनाते हैं । हमारे ट्रंक तो फ़ौज में भी जाते हैं । भला इन फ़िसादियों से हमारा क्या सम्बन्ध ?"

गाड़ी चल दी ।

मेरे आँसू रोकने से भी न रुके ।

"अब रोते हो ?" ला० जगन्नाथ ने क्रोध से कहा । "पहले दंगा-फ़िसाद शुरू करते हो, बाद में जब सरकार बन्दूक चलाती है तो रोते हो ।"

एक भिखारी लड़के ने डब्बे में घुसकर गाना शुरू किया, "सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्ताँ हमारा !" मैंने अपने आँसू पोंछ डाले । सहसा मेरी आँखें पोस्टर पर पड़ीं और वहीं जम कर रह गईं ।

"हिन्दुस्तान की सैर कीजिए । पुरी देखिए ।"

हिन्दुस्तान सारे जहान से अच्छा है, और हिन्दुस्तान में पुरी है जहाँ हिन्दुस्तान का सब से बड़ा देवता 'जगन्नाथ' रहता है ।

सहसा मेरे होंटों पर एक कटु मुस्कान फैल गई ।

"हैं ! अभी रो रहा था और अभी मुस्कराने लगा । क्या बात है बेटे ?" ला० जगन्नाथ ने कहा ।

"जी, कोई बात नहीं," मैंने फिर गम्भीर होकर उत्तर दिया ।

गाड़ी लखनऊ स्टेशन की लाल बत्तियों तक पहुँच गई थी । लखनऊ उतरने वाले मुसाफ़िर खुश हो रहे थे और अपना २ सामान बाँध रहे थे ।

गाड़ी से उतरे तो फिर वही पोस्टर सामने था—वही जगन्नाथ देवता का चित्र—यह मन्दिर जो हिन्दुस्तान में है और यह देवता जिसके हाथ-पाँव कटे हुए हैं ।

। ६ ।

टूटे हुए तारे

रात की थकन से उसके कंधे अभी तक बोझल थे। आँखों पर नशे के उतार का बोझ था और त्रेट नामक स्थान के डाक-बंगले में पी गई बीयर का कसैला स्वाद उसके होंटों पर अभी तक छाया हुआ था। वह बार २ जिह्वा को अपने होंटों पर फेर कर उनके फीके स्वाद को दूर करने का प्रयास कर रहा था। यद्यपि उसकी आँखें मुंदी सी थीं, परन्तु उसे पहाड़ों के मोड़ इस तरह याद थे जैसे वर्णमाला के अक्षर। और वह बड़ी फुर्ती और तत्परता के साथ अपनी मोटर को उन ख़तरनाक मोड़ों से पार लिये जा रहा था। उस मोटर में केवल दो सीटें थीं—एक उसके लिये और दूसरी सम्भवतः किसी अस्थायी संगिनी के लिये।

कहीं २ ये मोड़ बहुत ख़तरनाक हो जाते थे। एक ओर गगन-चुम्बी चोटियाँ और दूसरी ओर पाताल तक पहुँचने वाले खड्ड। इन खाइयों की तह में सुदूर पर जेहलम के नीले पानी और सफेद झाग की एक पतली सी लकीर दिखाई देती थी। सच पूछिये तो इन्हीं मोड़ों पर से मोटर तेज़ चलाने का आनन्द है। सारे शरीर में एक फुरेरी सी आ जाती है। प्रातः समीर बर्फ़ीली और तीव्र थी, परन्तु सुखद। उसमें जैगन की, जो चारों ओर उगी हुई थी, सुगन्ध वायु में भरी हुई थी। कैसी अनोखी महक थी वह—विलक्षण, बेनाम सी।

वह अपनी अर्ध-मुकुलित आँखों की पलकों की छाया में पिछली

रात के बीते हुए कसकपूर्ण क्षणों को वापस बुलाएगा।...बीयर की रंगत में डूबते हुए सूरज का सोना पिघला हुआ था...उसके कसैलेपन में एक विलक्षण सा मज़ा था।...रात की भीगी हुई निस्तब्धता में दूर कहीं एक बुलबुल गा रही थी...बुलबुल ने अपने संगीत में निस्तब्धता को और आवाज़ को इस प्रकार मिला दिया था कि दोनों एक दूसरे की गूंज मालूम होते थे। वह इस बात का पता नहीं लगा सका था कि वह संगीत कब प्रारम्भ होता था और निस्तब्धता कब प्रारम्भ होती थी।...चाँदनी रात में सेब के फूल खिले हुए थे और निहालो के होंट मुस्करा रहे थे—वे होंट जो बार २ चूमे जाने पर भी अबोध लगते थे। ऐसा लगता था कि संसार की कोई भी वस्तु उसे नहीं छू सकती।...कैसी विलक्षण सी अनुभूति थी...और अब तो वह डाक-बंगला भी मीलों पीछे रह गया था।...रात के एकान्त में निहालो का सौन्दर्य अलौकिक और अमर, अनन्त और असीम प्रतीत होता था। उसके मधुर होंट, उसकी हरिणी जैसी आँखें, और कोमल, नरम, घने काले केश—जैसे रात की भीगी हुई निस्तब्धता। उन बालों में सेब के कुछेक चटकते हुए मुकुल ऐसे लग रहे थे जैसे रात की गहन निस्तब्धता में बुलबुल की चहक।...वह यह पता नहीं लगा सका कि यह निस्तब्धता कहाँ प्रारम्भ होती है और यह संगीत कहाँ।...परन्तु अब तो वह डाक-बंगला बहुत पीछे रह गया था, और इस समय किसी परिस्तानी क़िले जैसा लग रहा था।

मोड़ों को पार करते हुए कार दौड़ती चली जा रही थी और उसकी कल्पना में निहालो के होंट, जैगन की महक, बुलबुल का संगीत और बीयर का सुनहरी रंग चाँदी के तार जैसी चमकती हुई सड़क में उलझते गए। नीचे जेहलम का पानी आदि-युग का गीत गाने लगा और वातावरण में सेब के लाखों फूल आँखें खोलकर चहचहाने लगे। और उसने सोचा कि वह भी क्यों न एक पक्षी की भांति उस घाटी के ऊपर से अपनी मोटर को उड़ा ले जाए। इस विचार के आते ही उसके

शरीर में एक झुरझुरी सी आई और उसकी अधखिली आँखें पूरी तरह से भी ज्यादा खुल गईं।

मार्ग में एक झरने के समीप उसने अपनी कार ठहरा ली। वह देर तक हाथ-पाँव धोता रहा, आँखों पर छींटे मारता रहा और साथ ही एक पहाड़ी गीत गुनगुनाता रहा। धीरे २ उसकी आँखों का खुमार उतरता गया और बीयर का कसैला स्वाद भी। अब उसे तीव्र भूख और प्यास लगी। उसने थर्मास में से चाय प्याले में उंडेल ली और ठंडे टोस्ट पर मक्खन लगाकर खाने लगा। अब उसके शरीर में गर्मी, शक्ति और स्फूर्ति का संचार होने लगा। कंधों की थकान भी धीरे २ जाती रही। अब वह वहाँ से निकलने वाली मोटरों, लारियों और लोगों को दिलचस्पी और कुतूहल के साथ देखने लगा। उसमें राजस्थान के मारवाड़ी भी थे जो अपनी भारी-भरकम धर्म-पत्नियों को पहलगाम की सैर कराने इस सुन्दर घाटी में लाए थे। एक कार में एक योरोपियन था जो एक हाथ से कार चला रहा था और दूसरा हाथ अपनी संगिनी की कमर के गिर्द लपेटे हुए था। एक लारी में बीमार से क्लर्क और उनकी अधमरी धर्मपत्नियाँ बैठी हुई थीं और उनके असंख्य बच्चे लॉरी की खिड़कियों के निकट खड़े हुए बेहद शोर मचा रहे थे। एक लारी को सिख ड्राइवर चला रहा था और उसकी पगड़ी ढीली हो गई थी और उसकी आँखें ऊंघती हुई सी लग रही थीं।

इस लारी में बैठे हुए लोग, जिनमें पंजाब के कुछ पहलवान भी सम्मिलित थे, बहुत आनन्द-विभोर हो रहे थे। इस आनन्द के मुख्य कारण सम्भवतः कश्मीर की नाशपातियाँ, वहाँ की सुन्दरियों का कोमलपन और लावण्य थे। एक लारी में कुछ बुर्क़ापोश स्त्रियाँ बैठी थीं जिन में से कुछेक ने नक़ाब उलट दिये थे। एक कुरूप स्त्री ने जिसने बहुत सुन्दर बुर्क़ा पहना हुआ था, ज़ोर से पान की पीक सड़क पर फैंकी और उसकी छींटें झरने के आस-पास आ पड़ीं। वह सरक कर परे बैठ गया। तीन हाजू अपने घुटे हुए सरों पर छोटी २ टोपियाँ पहने

हुए नमक के बड़े २ डले कंधों पर उठाए चले जा रहे थे। उनके नथुने फूले हुए थे और गल्ले लाल हो रहे थे। उनके चपटे पाँव में घास की चप्पलें थीं। दो गूजरियाँ, युवा, सांवली, सलोनी, गदराई हुई—जैसे रसीली जामुन—तेज़ी से पांव बढ़ाती हुई निकल गईं। एक ड्राइवर ने अपनी लारी झरने के पास ठहरा ली। और एञ्जिन और पहिये ठंडे करने लगा। लारी में बैठे एक मोटे सेठ का मोटा कुत्ता उसकी ओर देखकर भौंकने लगा। "टॉमी, शट-अप, टॉमी, शट अप" मोटे सेठ ने कई बार कहा, परन्तु कुत्ता न माना और लारी के मोड़ से ओझल हो जाने तक उसके भौंकने की आवाज़ आती रही।

अब सूर्य प्रातः और दोपहर के बीच की स्थिति में आगया था, अतः अब उसने चलने का विचार किया। उसने सोचा कि आज वह चोमेल के बंगले में ठहरेगा। गढ़ी तो आज वह किसी भी तरह नहीं पहुँच सकता था। उसने पीने के लिए अपनी ओक में झरने का स्वच्छ शुद्ध जल भरा, परन्तु फिर रुक गया। चुपके २ एक युवती उसके समीप आ गई थी, युवा-सी और कुछ फूली हुई सी। उसने नीले फूलों वाली सूसी की एक भारी सलवार पहन रखी थी। उसे युवती की काली कमीज़ पर उसकी छातियों के गोल उभार दिखाई दिये। ओक का पानी ओक में से गिर गया। युवती झरने में से ओक भर-भर कर पानी पीने लगी। उसके होंट और गाल गीले हो गये और कानों के समीप बल खाई हुई लट भी। फिर सहसा दोनों की आंखें मिलीं। युवती मुस्कराकर अपनी आंखों पर ठंडे पानी के छींटे मारने लगी।

उसने युवती से पूछा, तुम कहाँ जा रही हो?"

युवती ने कहा, "मैं नक्कर में अपने मैके गई थी। अब बुलन्द कोट अपने पति के पास जा रही हूँ।"

"बुलन्दकोट किधर है?"

"यहां से सात आठ कोस तक तो इसी सड़क पर जाना होगा। उसके बाद जंगल में से एक रास्ता पहाड़ी के ऊपर चढ़ता है।

वह रास्ता हमारे बुलन्दकोट को जाता है। बहुत ऊँची और ठंडी जगह है!"

तो फिर तुम वहां क्यों रहती हो? यहां देखो कितना सुहावना मौसम है और उस झरने का पानी कितना ठंडा और मीठा है।"

युवती ने हँस कर कहा—"हम बकरवाल लोग हैं। हम भेड़ों, बकरियों और गायों के रेवड़ के रेवड़ पालते हैं। आजकल उन ऊँचे-ऊँचे प्रान्तों पर बहुत नरम-नरम, हरी-हरी, बढ़िया घास होती है जो बर्फ़ के पिघलने के बाद उगती है। इस बारीक, नरम और हरी दूब को हमारे पशु बड़े चाव से खाते हैं। और झरने तो वहाँ इससे भी अधिक ठंडे और मीठे हैं।"

उसने बात को पलटते हुए कहा, "क्या तुम ने कभी मोटर की सवारी की है?"

"हाँ, एक बार लारी में की थी—जब मेरी शादी हुई थी।"

"कितना समय हुआ?"

"दो साल हो गए।"

वह अपना सामान बाँधने लगा। युवती की नाक पर पानी की बूंदें अभी तक लटक रही थीं, और गीली लट दाहिने गाल से चिपक गई थी। उसने कहा, "तुम्हारी नाक पर पानी की बूँदें हैं।" और फिर दोनों खिलखिला कर हँस पड़े। दो बूंदें, दो साल, दो गोलाइयां। और उसने धीरे से कहा, "आओ, तुम मेरी मोटर में बैठ जाओ। कम से कम आठ कोस तक तो मैं तुम्हें कार में ले जा सकता हूँ।"

यह कहकर उसने युवती का हाथ पकड़ लिया। वह हिचकिचाई, परन्तु मोटर का द्वार खुला हुआ था। उसने उसे मोटर में धकेल दिया, और फिर यह मोटर भी तो दो आदमियों के लिये ही बनाई गई थी—एक पुरुष और सम्भवतः एक स्त्री। उसने, जैसे अपने आप, अपना हाथ उसकी कमर पर रख दिया। युवती के शरीर में एक हलकी-सी झुरझुरी पैदा हुई—जैसे सोए हुए समुद्र की लहरें सहसा जाग उठें।

मोटर भागती गई और उसका हर साँस गरम होता गया। आग और समुद्र जिन में बुलन्दकोट की ऊँचाइयाँ डूब कर रह जाती हैं और समय मिट जाता है......

जब वह चोमेल के डाक-बंगले पर पहुँचा तो चारों ओर शाम की उदासी-सी छाई हुई थी। सामने का पहाड़ किसी विराट क़िले की दीवार जैसा लगता था और वृक्षों की चोटियाँ क़िले के पहरेदारों की बन्दूक़ें। अब वह फिर अकेला रह गया था। उसे अपने आप से, क़िले की दीवारों से, पहरेदारों की बन्दूक़ों से और वातावरण की गहन निस्तब्धता से भय लगने लगा। फिर वह अपने आप से भी डरने लगा और उस अन्धकार से जो उसकी आत्मा में छाया हुआ था—रात के गहरे सायों की भांति। उसे ऐसा लगा जैसे वह अपनी उदासी की कीचड़ में स्वतः और भी अधिक धंसता जा रहा है। उसने डाक-बंगले के बैरे को पुकार कर कहा, "ह्वाइट-हार्स की एक बोतल खोल दो।" और दस रुपये का नोट बैरे के हाथ में थमा दिया। अमूल्य प्राणों की तुलना में दस रुपये का क्या मूल्य था? बोतल सामने देख कर उसने सोचा—अब मैं बच जाऊँगा। और इस कीचड़ में से निकल जाऊँगा। उसने बोतल को ज़ोर से पकड़ लिया—कहीं वह उस से अपने को छुड़ाकर न भाग जाए। उसने बैरे को फिर आवाज़ दी।

"जी सरकार!"

"एक मुर्ग़ी भून लो। देखो दुबली-पतली न हो।"

"बहुत अच्छा सरकार!"

"और हाँ देखो," उसने बैरे के हाथ में पाँच रुपये का नोट देकर कहा, "एक...ले आओ। देखो दुबली-पतली न हो। तुम्हें इनाम मिलेगा।"

बैरे की बाँछें खिल उठीं। आँखें चमकने लगीं। गर्दन की रगें क़साई की तरह तन गईं। उसने आनन्द-विभोर होकर कहा, "हुज़ूर चिन्ता न करें। ऐसा बढ़िया चूज़ा लाऊँगा कि बस...।"

"जाओ, जाओ, जल्दी करो," उसने कहा और बोतल को ग्लास में उंडेलना शुरू किया।

डाक बंगले के बाग़ में बैये और रूने बारी-बारी बोल रहे थे। बैये कहते "पीं-पीं-पीं।" रूने कहते "ट्री-री री।" फिर दोनों चुप हो जाते, और सहसा किसी पेड़ पर कोई अदृश्य पक्षी पर फड़फड़ाने लगता। फिर रूने बोल उठते, 'ट्री-री-री,' और बैये कहते "पीं-पीं-पीं।" वह पीता गया और उसके मन में एकाकीपन का बोझ और रिक्तता बढ़ती गई। डाक-बंगले में उस समय कोई न था। उसने सोचा, वह इसी समय गैरेज में जाकर अपनी प्यारी मोटर से लिपट जाए और आंसू बहा-बहा कर कहे, "मैं अकेला हूँ, मेरी प्यारी, मैं अकेला हूँ। मुझे तुम से प्रेम है।" 'ट्री-री-री' 'जी-जी-जी' 'पीं-पीं-पीं'—वह जिये या पिये?...... बोतल ख़ाली हो गई और वह मेज़ पर सिर टेकने को था कि सहसा किसी ने उसके कन्धों को हिलाया। बैरा उसके पास खड़ा था और उसके समीप एक स्त्री खड़ी थी।

"तुम कौन हो?" उसने हकलाते हुए पूछा।

"मेरा नाम ज़ुबैदा है," स्त्री ने कांपती हुई आवाज़ में कहा।

"वह कुर्सी का सहारा लेकर उठा और कमरे के अन्दर जाने के लिए मुड़ा। बैरे ने उसे सहारा देना चाहा, परन्तु उसने बैरे को झिड़क कर कहा, "हट जाओ, मैं स्वयं कमरे मे चला जाऊँगा।" चारों ओर अन्धकार ही अन्धकार छाया हुआ था केवल कमरे के कोने में एक छोटा सा लैम्प जल रहा था—चारों ओर अन्धकार के समुद्र के बीच में प्रकाश-स्तम्भ! वह उस प्रकाश-स्तम्भ की ओर बढ़ता गया। शायद वह अब भी बच जाए। सहसा उसने द्वार बन्द होने की आवाज़ सुनी और वह रुक गया। बैरे ने स्त्री को अन्दर धकेल कर द्वार बाहर से बन्द कर दिया था। स्त्री द्वार से लगकर खड़ी हो गई।

"आओ, आओ," उसने स्त्री की ओर हाथ हिलाते हुए, झूमते हुए, कहा। "इधर आओ, रौशनी इधर है।"

स्त्री, सहमी हुई, धीरे २ उसके समीप आ गई थी। उसके केशों में ठीक बीचों-बीच सीधी माँग निकली हुई थी—चाँदी के तार की भांति—और उसने दोनों ओर बालों में सजावट के लिए सित्था लगाया हुआ था। सित्थे का मोम बालों पर लैम्प की रौशनी पड़ने से बार-बार चमक उठता था। उसके कानों में चाँदी की एक-एक बाली लटक रही थी।

उसने स्त्री के कन्धे पर झुक कर भेद के लहजे में कहा, "क्यों ? क्या तुम उदास हो ? तुम्हारा क्या नाम है ?

"ज़ुबैदा," उसने उदासीन भाव से कहा।

"शुबैदा..... शुबैदा," उसने हँसकर कहा, "शुबैदा...... हुँ ! क्या बढ़िया नाम है !" फिर उसने उसके चमकीले बालों पर हाथ फेरते हुए कहा, "यह क्या है शुबैदा...प्यारी शु...शु...शुबैदा ?"

"यह सित्था है, यह मोम और जंगली जैगन से बनता है। इससे बाल सुन्दर......"

"शुन्दर...... ? शुन्दर.... शुबैदा......आ......आ।" उस ने हँसी और हिचकी के साथ कहा, "तुम बहुत शुन्दर हो......शुबैदा !" फिर वह ज़ुबैदा के साफ़ और गुलाबी गालों पर अंगुलियां फेरने लगा। फिर वह हट कर खड़ा हो गया और अंगुली से उसकी ओर इशारा करके कहने लगा, "तुम......तुम..... शुबैदा ? .....नहीं ......तुम मेरी माँ हो ! ही-हीं-ही।"

वह उसके और निकट चला गया।

स्त्री ने सहसा उसके हाथ को ज़ोर से झटक दिया, जैसे उसे किसी साँप ने डस लिया हो।

"हाँ......हाँ," वह चिल्लाकर बोला, "शुबैदा माँ है......शुबैदा मेरी बहिन है। शु .... शुबैदा .... मैं......मैं पापी हूँ..... शुबैदा ......तुम यहाँ क्यों आई .... ऐं ?"

"मैं ग़रीब हूँ," ज़ुबैदा ने धीरे से कहा।

"ग़रीब ? ही-ही-ही......मैं भी ग़रीब हूँ।"

"मेरा बच्चा बीमार है। नन्हा जरी, मेरा बेटा जरी। डागदार (डाक्टर) ने कहा है कि उसे नमोनिया हो गया है। वह चार रुपये फ़ीस मांगता है। बैरे ने मुझे केवल तीन रुपये दिये हैं। खुदा के लिये मुझे एक रुपया और दे दो।"

"नमोनिया ? ही ही ही...उसे...ख़...ख़...खैराती हस्पताल में पहुँचा दो ना . नमोनिया...नन्हा जरी...।"

"यहां एक ही तो हस्पताल है", स्त्री ने उदास लहजे में कहा, "और वह भी खैराती.. मेरे अल्लाह मैं क्या करूं ? मैं तुम्हारे पाँव पड़ती हूँ। खुदा के लिये मुझे एक रुपया और दे देना...केवल एक रुपया।"

"बस बस, चिन्ता मत करो...न...न...नन्हीं शुबैदा।" वह उस की गर्दन से लिपट कर कहने लगा, "मैं तुम पर मरता हूँ। सुन्दर शुबैदा। मैं अकेला हूँ...मैं अकेला हूं...मुझे तुम से प्रेम है, मुझे बचाओ शुबैदा," उसने उसके कन्धे पर सर रख दिया और फूट २ कर रोने लगा।

वह सोया पड़ा था। स्त्री के गले से उसके हाथ लिपटे हुए थे—जैसे व्हाइट-हार्स की बोतल के गले पर उसकी अंगुलियाँ। लैम्प की मद्धम रौशनी झिलमिला रही थी। काली रात के सन्नाटे में रूने और बैये अभी तक बहस किये जा रहे थे—'जी—जी—जी, 'पी—पी—पी।' परन्तु इस समय उन्हें सुनने वाला कोई न था।

जब वह जागा तो खुमार उतर चुका था। रौशनी बुझ गई थी, अंधकार की छाया लुप्त हो चुकी थी। बैये और रूने चुप हो चुके थे। प्रभात का हल्का सा प्रकाश चारों ओर छन रहा था। वह अभी तक उसके समीप मदहोश पड़ी थी, नंगी। सिरथे से अलंकृत बाल इस समय अस्त-व्यस्त थे और सफ़ेद गर्दन पर कहीं २ लाल २ निशान पड़ गए थे। उसने अध-खिली आंखों से उसे सर से पाँव तक देखा—

सुडौल, लोचदार, साँचे में ढला हुआ शरीर। वह धीरे २ उसके पिंडे पर अंगुलियाँ फेरने लगा। स्त्री के सारे शरीर में एक कंपकपी सी पैदा हुई—जैसे सोये हुए समुद्र की लहरें जाग उठें। उसके होंटों से एक आह सी निकली और उसने धीरे से उसी मदहोशी की स्थिति में कहा; "जरें! नन्हें जरें! प्यारे बेटे.... ।" और फिर उसके अर्ध-मुकुलित होंट इस तरह आपस में मिले जैसे माँ बेटे को चूम रही हो। नन्हा जरी! सहसा वह चौंक पड़ा। बीती हुई रात की हल्की सी छायाएं उसकी आँखों के सामने आती गईं नन्हा जरी...नमोनिया... डागदार...। वह कांपने लगा। तीन रुपये...चार रुपये...केवल एक रुपया और। उसने तुरन्त अपने हाथों को गर्दन से हटा लिया। नन्हा जरी...और उसे ऐसा लगने लगा मानो वह मानवता के साथ बलात्कार कर रहा है। और वह तुरन्त, एक झटके के साथ, बिस्तर पर से उछल कर धरती पर खड़ा हो गया और फटी-फटी आँखों से उस स्त्री की ओर तकने लगा। वह अब जाग गई थी और नंगी पड़ी थी और सारी रात उसकी बग़ल में पड़ी रही थी।

वह चिल्लाकर कहने लगा, "छुपा लो, छुपा लो। अपने आपको इस कम्बल में...भाग जाओ, चलो जाओ मेरे सामने से...क्यों इस तरह आकुल, आतुर नेत्रों से मेरी ओर देख रही हो। सुनती नहीं हो क्या? मैं कहता हूं, उठो, इसी क्षण उठ खड़ी हो...यह लो, यह लो एक रुपया, दो रुपये, तीन रुपये, चार रुपये...ये सब लो और इसी दम भाग जाओ, भागो यहां से! भागो!!"

उसने कम्बल उढ़ा कर और कपड़े उसके हाथ में देकर उसे कमरे से बाहर निकाल दिया।

फिर बहुत देर तक वह बिस्तर पर अपना सिर पकड़े बैठा रहा। हृदय और मस्तिष्क को एक उलझन ने मकड़ी के जाले की भांति घेर रखा था। वह बार २ चिन्ताग्रस्त हो उठता था और ठीक २ सोच न पाता था। बार २ अपने उलझे हुए लम्बे २ बालों में वह अपनी

अंगुलियां फेर कर उस मकड़ी के जाले को दूर करने का प्रयास करता रहा। अन्त में जब बैरे ने आकर कहा, "सरकार, स्नानागार में गरम पानी रखा है," तो वह अनमना सा उठा और स्नानागार की ओर चल दिया। तबीयत बैठ सी गई थी और मुँह का कड़ुवा व कसैला स्वाद होश आने पर भी दूर न हुआ था। कन्धे बोझल थे। नहा कर और कपड़े पहन कर वह बरामदे में आ बैठा और मेज़ पर कुहनियाँ टेक कर प्रातराश की प्रतीक्षा करने लगा और अपने आपको कोसने लगा। समझदार बैरे ने प्रातराश में बीयर की बोतल उपस्थित करदी। बीयर ने उसकी विचार-धारा को धीरे २ बदल दिया। धीरे २ उसकी तबीयत स्वस्थ और उल्लसित होने लगी। वह सीटियाँ बजाने लगा। और फिर कोई गीत गुनगुनाने लगा। बीती हुई अनेको रातों के सुन्दर क्षण फिर से कल्पना के नेत्रों के सामने जागने लगे। सित्थे से चमकते हुए बाल ...काली कमीज़ पर छातियों के उभरे हुए वृत्त, निहालो का अलौकिक सौन्दर्य, बुलबुल का मधुर संगीत, पपीहे की पी-पी, चाँदनी में हँसते हुए सेब के फूल। सहसा किसी रास्ते के झरने का ठंडा, मीठा पानी उसकी आँखों के सामने प्रसन्नता से उछलने और उबल-उबल कई अट्टहास करने लगा। उसे अपनी कार याद आई जो गैरेज में खड़ी हुई उसकी प्रतीक्षा कर रही थी। वह खड़ा होगया, बैरे को इनाम दिया और उससे पूछा, "गढ़ी का बंगला यहाँ से कितने मील होगा?" बैरे उत्तर दिया, "एक सौ दस मील सरकार!"

वह कार में बैठ कर चल दिया। थोड़ी दूरी पर ही एक मोड़ काटते हुए उसे एक नीले रङ्ग की कार मिली जो बंगले की ओर जा रही थी। एक भारी शरीर और दोहरी ठोड़ी वाला व्यक्ति जिसने काले फुंदने वाली रूमी टोपी पहन रखी थी, कार चला रहा था। उसकी बग़ल में एक युवती बैठी हुई थी, नीली भारी सूसी की शलवार, काली क़मीज़ पर छातियों का उभार, और आँखों में पुराने अपराधी की सी शुष्क उदासी। वह दिल ही दिल में मुस्कराया। भेद! वह भेद जिसे

वह नहीं समझ सका था! ग़रीब स्त्रियों ने अपने काल्पनिक सतीत्व के लिये पहाड़ों पर बुलन्दकोट बना लिये थे। परन्तु वास्तव में बात यह थी कि उनकी सुसराल और मैके एक निर्झर से दूसरे निर्झर तक और एक डाक-बंगले से दूसरे डाक-बंगले तक सीमित थे। उसने दया-सिन्धु, कृपा-सागर भगवान् का लाख-लाख धन्यवाद किया जिस ने इन लोगों को ग़रीब बनाकर दूसरे लोगों के लिये सुन्दर आकर्षक रातों का प्रबन्ध कर दिया था। ज़ुबैदा, भुना हुआ मुर्ग़, ह्वाइट-हार्स। उसे गढ़ी का डाक-बंगला एक परिस्तानी क़िला नज़र आने लगा और उसने अपनी कार की गति तीव्र कर दी।

मोटर के आगे और पीछे चीड़ और देवदार के घने और हरे-भरे जङ्गलों के बीच में से चाँदी के तार की भाँति चमकती हुई पक्की सड़क दौड़ती जा रही थी—एक झरने से दूसरे तक, एक डाक-बँगले से दूसरे डाक-बँगले तक, और एक अमीर की जेब से दूसरे अमीर की जेब तक। यह वही चाँदी का तार है जिसने मानव के हृदय को अन्धकार से परिपूर्ण कर दिया है, स्त्रियों के सतीत्व ख़ाक में मिला दिये हैं और समाज की आत्मा को आतशक की भयङ्कर अग्नि में झुलस दिया है।

: १० :

पराजय के बाद

पात्र (क़स्बे के लोग)

मेयर	बिरयाँ क़स्बे का मेयर, वृद्ध, लोक-प्रिय।
मादाम	मेयर की पत्नी
डाक्टर	मेयर का मित्र
जॉन	मेयर का नौकर
एनी	मेयर की नौकरानी
हारेत	कोयले की खान में काम करने वाला मज़दूर
लोयज़ा	हारेत की पत्नी
जॉर्ज बॉरल	क़स्बे का सब से धनी व्यापारी

पात्र (क़स्बे पर आक्रमण करने वाले लोग)

कैप्टिन थाइलर	शत्रु की सेना का एक अफ़सर
कर्नल शैफ़्ट	शत्रु सेना का प्रधान अफ़सर, प्रथम महायुद्ध के समय में शिक्षा पाया हुआ।
कैप्टिन विलियम	युवा अफ़सर, मशीन की भांति काम करने वाला, अनुशासन का कट्टर अनुयायी।
मेजर	फ़ौजी एञ्जीनियर
लैफ्टीनैन्ट रौशर, रसनबर्ग और श्राइटल	तीनों युवा सैनिक हैं। युद्ध प्रथम बार देखा है।

[पराजय के बाद का कथानक मैं ने जॉन स्टाइनबैक के प्रसिद्ध उपन्यास 'मून इज़ डाउन' 'Moon is Down' से लिया है। यह उपन्यास उन गिनती के उपन्यासों में से है जिनके सृजन की प्रेरणा द्वितीय महायुद्ध से मिली है और जिनको पश्चिमी आलोचकों ने उच्च साहित्यिक कोटि के उपन्यास माना है। 'मून इज़ डाउन' में लेखक ने अस्थायी बातों से बच कर युद्ध की मूल समस्या पर बहस की है और मानवीय भावना की उन गहराइयों तक पहुँच जाना चाहा है जो हमें केवल उपचेतना में उभरती दिखाई पड़ती हैं।

इस नाटक में घटनाओं और पात्रों का क्रम लगभग वही है जो आप उपन्यास में पाएंगे। 'लगभग' इसलिए कि कुछ स्थानों पर थोड़ा बहुत परिवर्तन करना अनिवार्य था—नाटकीय और कलात्मक दृष्टि-कोणों से। इसे लिखते समय मेरी कोशिश यही रही है कि उपन्यास की आत्मा और उसका केन्द्रिय उद्देश्य इस नाटक में पूर्णतया उजागर रहे।

जो घटना इस नाटक में प्रस्तुत की गई है वह समुद्र तट के समीप एक छोटे से फ्रांसीसी क़स्बे में घटी है जिस पर शत्रु ने आक्रमण करके अधिकार कर लिया है। इस क़स्बे का नाम बिरयाँ हैं। परन्तु इस नाटक में यह नाम इतने महत्व का नहीं है। यह क़स्बा, इसके वासी, इसके पात्र, हमारे आपके देश के भी हो सकते हैं और हो सकता है कि यह नाटक जिसे आप इस समय केवल मनोरंजन के लिए पढ़ रहे हैं, कभी आपके क़स्बे या शहर में भी सचमुच ही खेला जाए।

ऐसे छोटे से फ्रांसीसी क़स्बे के शान्तिपूर्ण जीवन में दीर्घकाल से ऐसी घटना देखने में नहीं आई थी। लोग विस्मय से किंकर्तव्य-विमूढ़ हो गए हैं और सोच नहीं सकते कि यह सब कुछ क्यों और कैसे हुआ। यहाँ सीधे-सादे लोग बसते हैं—व्यापारी, छोटे-मोटे ज़मीदार, ग्रामीण और मज़दूर जो राजनीति की उलझनों से परिचित नहीं हैं। यहाँ पुलिस के कुछ सिपाही थे और कुछ सैनिक जिनमें से

कुछ तो मारे गए और शेष बन्दी बना लिए गए। शत्रु के पाँचवें दस्ते ने क़स्बे पर अधिकार करने में बहुत सहायता की है।

इस क़स्बे में कोयले की एक खान है जिसमें फ्राँसीसी मज़दूर काम करते हैं। शत्रु अत्याचारी नहीं, बल का प्रयोग करना नहीं चाहता; वह केवल यह चाहता है कि इस खान से कोयला निकलता रहे, फ्रांसीसी मज़दूर काम करते रहें, और कोयला फ्रांसीसी जहाज़ों पर लद कर शत्रु के देश पहुँचता रहे। बस यही एक साधारण सा सवाल है जिसने सबको परेशान कर दिया है—शत्रु के सैनिकों को, मेयर को, क़स्बे के डाक्टर और खान में काम करने वाले मज़दूरों को। इस नाटक में इसी साधारण से सवाल पर बहस की गई है।

यह नाटक मेयर के निवास-स्थान में आरम्भ होता है और वहीं समाप्त होता है। मेयर के निवास-स्थान में कदाचित क़स्बे की पराजित आत्मा का वास है। चारों ओर निस्तब्धता है। पराजय हो चुकी है। शत्रु का कमान्डर मेयर से मिलने आ रहा है। इस मकान के ड्राइंग-रूम में क़स्बे का डाक्टर और मेयर का नौकर जॉन उसके आने की प्रतीक्षा में हैं।

डाक्टर—(दियासलाई से सिग्रेट सुलगाता है) कर्नल ने किस समय आने को कहा था, जॉन?

जॉन—जी, पूरे ग्यारह बजे।

डाक्टर—मेयर कहाँ हैं?

जॉन—जी, वस्त्र बदल रहे हैं। मादाम का विचार है, डाक्टर, कि मेयर को शत्रु के कमान्डर से मिलते समय अच्छे वस्त्र पहनने चाहियें और मादाम...हुम . मेयर के कानों में उगे हुए बालों के गुच्छे भी कैंची से काट रही हैं।

डाक्टर—पूरे ग्यारह बजे हैं (दीवार पर लगे क्लॉक को देखकर) हुम.. बस वे अब आया ही चाहते हैं। यह जाति समय की बड़ी पाबन्द है।

जॉन—और मादाम मेयर की वनी भवें भी काट रही हैं, कैंची से। परन्तु मेयर का विचार है कि इससे उन्हें बहुत कष्ट हो रहा है। और मादाम मेयर को वह सूट पहना रही हैं जो उन्होंने मेयर निर्वाचित होने के दिन पहना था।

डाक्टर—(गंभीरता से) मादाम की सुघड़ता क़स्बे भर में प्रसिद्ध है। वे मेयर को, अपने पति को, शत्रु के सामने इस रूप में......(रुक कर) जॉन, यह कैसी आवाज़ है ?

जॉन—शत्रु का बैंड है, पार्क में विजय की धुन सुना रहा है। (डाक्टर कुछ क्षण इस धुन को सुनता है)।

डाक्टर—ग्यारह बजने वाले हैं। अब मेयर तैयार हो कर आ जाएँ तो अच्छा हो। यह जाति समय की बहुत पाबन्द है। प्रति सैकिन्ड का हिसाब रखती है।

जॉन—आपने ठीक फ़र्माया, यह लोग मशीन के पुर्ज़ों की भांति काम करते हैं। (पग-ध्वनि) लीजिए, मेयर और मादाम पधार रहे हैं।

मेयर, मादाम—गुड मार्निंग डाक्टर !

डाक्टर—गुड मार्निंग !

मेयर—कर्नल शॉफ़्ट नहीं आए ?

डाक्टर—(क्लॉक की ओर देखकर) ग्यारह बजने में अभी दो मिनट शेष हैं।

मादाम—जॉन, तुम कमरे के बाहर घन्टी के समीप खड़े रहना। कदाचित तुम्हारी आवश्यकता पड़े।

जॉन—बहुत अच्छा मादाम।

मादाम—और सुनो। झुक कर और पर्दे से कान लगा कर हमारी बातें न सुनना। मुझे यह असभ्य हरकत पसन्द नहीं है।

जॉन—बहुत अच्छा मादाम (द्वार की ओर बढ़ता है)।

मादाम—और सुनो, जब तुम से कर्नल शाफ़्ट को सिग्रेट पेश करने के लिए कहा जाए तो अपने बूट के तले पर माचिस न रगड़ना

बल्कि डिबिया पर लगे हुए मसाले पर।

जॉन—जो आज्ञा मादाम!

(जॉन आदरपूर्वक झुकता है और फिर कमरे के बाहर चला जाता है। डाक्टर हँसता है।)

मादाम—आपकी क्या राय है डाक्टर? हमें कर्नल शाफ़्ट को सिग्रेट के अतिरिक्त शराब भी पेश करनी चाहिए। बात यह है कि हमारे यहाँ दीर्घकाल से ऐसी घटना नहीं घटी और मुझे मालूम नहीं ऐसे अवसर पर उचित शिष्टता क्या होगी........और फिर शत्रु ने हमारे देश पर अधिकार कर लिया है। और हमारे सैनिक आहत हुए हैं ..फिर भी युद्ध का...

मेयर—(विचलित भाव से) युद्ध का...

मुझे तो कुछ पता नहीं। हाँ इतना अनुभव अवश्य करता हूँ कि यह युद्ध अनोखा युद्ध है। हमें ठीक प्रकार लड़ने का अवसर ही न मिला और शत्रु हमारे घर पर अधिकार कर बैठा। डाक्टर, ऐसी स्थिति में क्या शत्रु को शराब पेश करनी चाहिए?

मादाम—मेरे विचार में तो कोई आपत्ति नहीं। हमें नीति से काम लेना चाहिए। शत्रु ने हमें पराजित किया है। हमें उसके साथ अच्छा व्यवहार करना पड़ेगा।

डाक्टर—मुझे जॉन ने बताया है कि उसे आपकी नौकरानी एनी बता रही थी कि उसे आपके पड़ोसी की बावर्चिन बता रही थी कि कस्बे का तम्बाकू बेचने वाला बता रहा था जब शत्रु तट वाली सड़क पर से क़स्बे की ओर आ रहा था तो हमारे सैनिकों ने उनको रोकने की चेष्टा की। सैनिक केवल पचास थे। उनमें से आठ मर गए, दस पहाड़ों में जा छिपे, और शेष बन्दी बना लिए गए। वास्तव में हमारे सैनिकों के पास केवल पिस्तौल थे और शत्रु के पास मशीनगनें। हमारे सैनिक मिस्टर बारल के भोज में गए हुए थे और जब वे वापस लौटे तो उन्हें ज्ञात हुआ कि किसी ने

सैनिक बारूदखाने और मैगज़ीन को डाइनामाइट से उड़ा दिया है। अब वे बेचारे खाली पिस्तौल से क्या लड़ते ?

मेयर—मिस्टर बारल ? तुम्हारा मतलब जार्ज बारल, हमारे बिसाती से है ?

डाक्टर—हाँ, हाँ, वही जार्ज बारल।

मेयर—जार्ज बारल बहुत अच्छा आदमी है।

डाक्टर—(व्यंगपूर्वक) बहुत नेक और शरीफ़।

मेयर—मुझे याद है उस ने हस्पताल के निर्माण में कितनी सहायता की थी।

डाक्टर—(व्यंग से) जार्ज बारल की उदारता ने हमारे नगर को बहुत लाभ पहुंचाया है।

जॉन—(अन्दर आकर) कर्नल शाफ्ट !

(एक अफ़सर प्रवेश करता है—शत्रु का सैनिक अफ़सर, स्थूलकाय, बड़ी २ मूंछें, कोमल स्वर)

कैप्टेन थाइलर—गुड मार्निङ्ग।

मेयर—आप कर्नल शाफ़्ट हैं ? (आगे बढ़ता है)

कैप्टेन थाइलर—नहीं मैं कैप्टेन थाइलर हूं। कर्नल साहब अभी आते हैं। क्षमा कीजिएगा। मैं आप लोगों की तलाशी लेना चाहता हूँ (हंस कर) कोई हथियार...क्षमा कीजिए, यह सैनिक नियम है। बातें करता जाता है और तलाशी लेता जाता है। मादाम, मैं विवश हूं...जी हाँ आप भी...सब ठीक है, सब ठीक है (इधर उधर देखकर) इस कष्ट के लिए क्षमा चाहता हूं (हंसता है और द्वार की ओर बढ़ता है) वे अभी आते हैं। यह लीजिये कर्नल शाफ्ट (सैल्यूट करता है) (कर्नल शाफ्ट, आँखों में एक विकल और विषादपूर्ण चमक, व्यवहार में घमन्ड)

कर्नल शैफ्ट—गुड मार्निङ्ग।

मेयर—गुड मार्निङ्ग।

डाक्टर—आहुम (खाँसता है)

मादाम—पधारिये।

कर्नल—(प्रसन्नता पूर्वक) आप वस्तुतः इस क़स्बे के मेयर हैं और आप मादाम (हंस कर) इस क़स्बे की मलिका (आदरपूर्वक झुकता है) और आप (डाक्टर की ओर प्रश्न-सूचक ढंग से संकेत करता है)

मेयर—यह हमारे क़स्बे के डाक्टर हैं और उसके इतिहासज्ञ भी।

कर्नल—डाक्टर आपके क़स्बे के इतिहास में अब एक और पन्ना लिखा जाएगा।

डाक्टर—(पूर्ण विश्वास से) एक नहीं बल्कि कई एक।

जॉन—(द्वार पर) जार्ज बारल।

(जार्ज बारल अन्दर प्रवेश करता है। छोटा क़द, छोटी गर्दन, स्थूल काय, बारीक पतली आवाज़)

मेयर—(हाथ मिलाते हुए) हैलो जार्ज!

बारल—क्षमा कीजिए, तनिक देर हो गई।

मेयर—देर ?

बारल—हाँ, मुझे वास्तव में कर्नल के साथ ही आना चाहिए था।

मेयर—(परेशान होकर) कर्नल के साथ ?

कर्नल—(मेयर को संबोधित करके) इन्हें जानते तो होंगे ? यह...

डाक्टर—(बात काटते हुए) यह हमारे मित्र जार्ज बारल हैं। हमारे नेक मित्र जार्ज बारल जिन्होंने इस क़स्बे पर अधिकार करने के लिए शत्रु का मार्ग साफ़ किया। हमारे देश-भक्त मित्र जार्ज बारल जिन्होंने शत्रु के आक्रमण के दिन हमारे सैनिक मैगज़ीन को डाइनामाइट से उड़ा दिया जिस से हमारे सैनिक शत्रु का सामना न कर सकें। हमारे प्रिय आत्मीय मित्र जिन्होंने शत्रु को वह सूची बना कर दी जिस से शत्रु को पता चला है कि क़स्बे में किस किस के पास हथियार हैं और कितनी संख्या में। (मेयर से, क्रुद्ध स्वर

में) मेयर, आप नहीं जानते इन्हें ? यह हैं हमारे नेक मैनेजर सेठ जार्ज बारल।

जार्ज बारल—मैं..., मैं..., मैं..., मेरे विचार आपसे सर्वथा भिन्न हैं। मैं अपने अन्तःकरण और अपने विश्वासों के अनुसार काम करता हूँ।

मेयर—(अत्यन्त परेशानी और विस्मय के साथ) जार्ज बारल! यह सत्य नहीं है! मेरे मित्र! यह सत्य नहीं है। (उसके कोट का कालर पकड़ कर) हम दोनों सदैव मिलकर एक साथ काम करते रहे हैं। तुमने मेरी पत्नी और बाल-बच्चों के साथ बैठकर खाना खाया है। एक मेज़ पर बैठकर शराब पी है। हम दोनों ने मिलकर शहर का हस्पताल बनाया है। उसका सुन्दर पार्क, तैरने का तालाब, किण्डर-गार्टन स्कूल। सचमुच यह सब कुछ सत्य नहीं है।

(जार्ज बारल की ओर देखता है जिसका मुख कानों तक लाल हो गया है) (चिल्लाकर) जार्ज...(अपने आपसे) जार्ज... (क्रोध से) कर्नल शाफ्ट, मैं इस व्यक्ति के सामने किसी प्रकार की वार्ता करने को तैयार नहीं हूं। (विराम) जार्ज बारल, तुम तुरन्त कमरे से बाहर निकल जाओ, निकल जाओ।

बारल—मैं कर्नल के साथ हूं।

मेयर—(कर्नल से) मैं मिस्टर जार्ज बारल के सामने किसी प्रकार की वार्ता करना नहीं चाहता हूं, कर्नल!

(विराम)

कर्नल—मिस्टर बारल, कमरे से बाहर चले जाइये।

बारल—परन्तु मैंने भी काम किया है। मैंने भी इस क़स्बे को जीतने में सहायता दी है, क्या हुआ यदि मैं सैनिक वेष-भूषा में नहीं हूँ।

कर्नल—मिस्टर बारल, क्या आपका दर्जा मुझ से भी बड़ा है?

बारल—यह मैंने कब कहा।

कर्नल—मैं तुम्हें आज्ञा देता हूँ, इस कमरे से बाहर निकल जाओ।

बारल—बहुत अच्छा, यद्यपि मैं इस व्यवहार को पसन्द नहीं करता।
(तेज़ तेज़ पग उठाता हुए जार्ज बारल कमरे से बाहर निकल जाता है)

डाक्टर—(व्यंग से) आज मेरे इतिहास में एक बड़े सुन्दर अध्याय का श्रीगणेश हुआ है।

कर्नल—(खांस कर) आ-हुम।

मेयर—फ़रमाइये, मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूं? आप बैठ जाइए ना इस कुर्सी पर।

कर्नल—धन्यवाद! (सब लोग कुर्सियों और सोफ़ों पर बैठ जाते हैं) मेयर साहब, युद्ध की विवशताओं को एक ओर रख कर मैं आपसे मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करना चाहता हूँ। मैं एक फौजी एन्जीनियर हूँ। मेरा काम यह है कि इस खान का कोयला अपने देश को भेजता रहूं। आप पूर्ववत मेयर रहिये। क़स्बे के आंतरिक प्रबन्ध में मैं हस्तक्षेप नहीं करूँगा।

मेयर—आस-पास के प्रदेश से प्रतिरोध का कोई समाचार प्राप्त हुआ?

कर्नल—तार टैलीफ़ोन आदि तो हमने पहले ही काट डाले थे। हमारी योजना के अनुसार सब काम बहुत सुविधा पूर्वक होगया। हर स्थान पर हमारा अधिकार हो गया है। प्रतिरोध हुआ, परन्तु विफल। हमारी योजना सम्पूर्ण थी।

मेयर—परन्तु लोगों ने प्रतिरोध किया।

कर्नल—हाँ, थोड़ा सा रक्त-पात हुआ। परन्तु हमने शीघ्र ही स्थिति पर क़ाबू पा लिया। यह उन लोगों का मूर्खतापूर्ण कार्य था। मशीन-गनों के सामने निःशस्त्र लोग क्या कर सकते हैं?

मेयर—वस्तुतः वे मूर्ख थे परन्तु उन्होंने प्रतिरोध तो किया?

कर्नल—मुझे उनकी मूर्खता पर खेद है।

मेयर—हाँ यह एक मूर्खता होगी। आपको खेद भी होगा। परन्तु ध्यान दीजिये कि उन्होंने प्रतिरोध अवश्य किया।

कर्नल—(तनिक कटुता से) मुझे कोयला चाहिये। मैं और अधिक

प्रतिरोध नहीं चाहता, रक्तपात नहीं चाहता। इसमें आप ही की हानि है। भली प्रकार सोच-विचार कर लीजिए। मेरी योजना यह है कि आप हमारी सहायता करें। सबसे पहला योग यह होगा कि मैं और मेरा स्टाफ़ आपके यहाँ अतिथि बन कर रहेगा।

मेयर—यह मकान बहुत छोटा है। आपको यहाँ कष्ट होगा। आप किसी दूसरे स्थान पर...

कर्नल—नहीं, नहीं, यह बात नहीं है। मैं आपके यहाँ रहूँगा तो तनिक सुविधा होगी।

मेयर—लोग समझेंगे कि मेयर और कर्नल में कोई समझौता हुआ है।

कर्नल—इससे काम में तनिक आसानी हो जाती है और फिर समय २ पर आप से परामर्श, मंत्रणा भी होती रहेगी।

मेयर—(घबरा कर) मैं कोई परामर्श नहीं दे सकता। मुझे कुछ नहीं मालूम कि मुझे क्या करना चाहिए?

कर्नल—आप मेयर हैं। इस क़स्बे के स्वामी हैं। हम सदा वही करते हैं जो हमारा स्वामी कहता है।

मेयर—(भोलेपन से) हमारे यहाँ स्वामी वही करता है जो नगर-वासी कहते हैं। कर्नल साहब, हमारे जीवन की व्यवस्था आपसे सर्वथा भिन्न है। मुझे कुछ पता नहीं क़स्बे के लोग क्या चाहते हैं।

डाक्टर—मेयर की आत्मा इस क़स्बे में घुली हुई है। मेयर नहीं जानता वह क्या करे, जब तक क़स्बे के लोग—

कर्नल—(बात काटते हुए) मेयर स्वयं सोचकर निर्णय कर सकता है। उसे दूसरों से पूछने की क्या आवश्यकता है?

डाक्टर—मेयर अपने लिए सोच सकता है, दूसरों के लिए नहीं। यह प्रथा आपके यहाँ प्रचलित होगी, हमारे यहाँ नहीं।

मेयर—यदि मैं आपको यहाँ स्थान देने से इन्कार करदूँ तो...

कर्नल—(सिर हिलाकर) मुझे खेद है। मैं आपको ऐसा करने की अनुमति न दूँगा।

(बाहर से कोलाहल सुनाई देता है)

मेयर—तो फिर आप मुझसे पूछते ही क्यों हैं—बेकार तमाशा।

(कोलाहल बन्द हो जाता है)

डाक्टर—यह कैसा कोलाहल है ?

जॉन—(प्रवेश करता है) हुजूर एनी बहुत बिगड़ रही है। (कर्नल की ओर संकेत करके) आपके सिपाही मकान के बाहर खड़े हैं और मकान के अन्दर भी मौजूद हैं। एनी उन्हें बिल्कुल पसन्द नहीं करती।

कर्नल—साधारण बात है। मेरी गारद मेरे साथ आई है। (मेयर से) यह एनी कौन है ?

मादाम—हमारी बावर्चन है।

जॉन—(मेयर से) और हुजूर एनी ने क्रोध में आकर खौलता हुआ गर्म पानी उन सिपाहियों पर फैंक दिया है और वे लोग चिल्ला रहे हैं।

कर्नल—किसी को चोट तो नहीं आई ?

जॉन—जी, चोट तो नहीं आई किन्तु दो एक का मुँह झुलस गया है। एक सिपाही के गंजे सिर पर छाला पड़ गया है और एक सिपाही को एनी ने काट खाया है, जो उसे गालियाँ दे रहा था।

कर्नल—मेरे विचार में एनी को बन्दी बना लिया जाये।

मेयर—तो फिर आपको भोजन नहीं मिलेगा। एनी बहुत कुशल बावर्चन है और अत्यन्त स्वादिष्ट भोजन बनाती है।

मादाम—(उठकर बाहर जाते हुए) मैं देखती हूं सिपाही कहीं एनी से झगड़ा न कर बैठें।

कर्नल—(कुछ सोचकर) कैप्टेन थाइलर, सिपाहियों को आदेश दो कि मकान के हॉल और पोर्च से बाहर चले जांय।

कैप्टेन थाइलर—बहुत अच्छा (बाहर चला जाता है)।

डाक्टर—(कर्नल को सिगरेट पेश करते हुए) मेरे इतिहास का एक पन्ना तो पूरा हो गया कर्नल साहब !

कर्नल—(खाँसते हुए) आ···आ···हुम ।

दूसरा दृश्य

मेयर के घर के बड़े हॉल को फ़ौजी अफ़सरों के रहने के लिए खाली कर दिया गया है। हॉल के भीतर प्रवेश करते ही जिस वस्तु पर दृष्टि पड़ती है, वह लकड़ी और पर्दों से बने हुए कैबिनों की एक पंक्ति है जो हाल की उत्तरी दीवार से लेकर दक्षिणी दीवार तक चली गई है। इन कैबिनों ही में शत्रु के सैनिक अफ़सर रहते हैं। उनके बाहर खाने की मेज़ है, ताश खेलने की मेज़ है। एक ओर मेजर लकड़ी के तख्ते पर किसी पुल का नक़शा बना रहा है। कैप्टिन विलयम पूरी वर्दी पहने हुए उसके निकट खड़ा है।

कै० विलयम—यह किस पुल का चित्र बना रहे हैं ?

मेजर—(चित्र बनाते हुए, सिर उठाये बिना) कोयले की खान के निकट जो रेल का पुल था उसको दुबारा बनाया जाएगा।

विलियम—मेजर, (रुककर) मैं एक बात कहना चाहता हूं।

मेजर—हूं हूं।

विलयम—कैप्टिन फ़्रिट्ज़ की आज कोयले की खान पर ड्यूटी थी। वह असैनिक टोपी पहने हुए वहाँ चला गया।

मेजर—तो क्या हुआ विलयम ?

विलियम—हम शत्रु के देश में हैं। हमें सावधानी बरतनी चाहिए। मिलिट्री मैनुअल की धारा २ के अनुसार ·····।

मेजर—कैप्टिन विलयम, तुम्हारे मन में अकारण सन्देह पैदा हो रहे

हैं। मुझे तो यहां के निवासी सीधे-सादे शान्ति-प्रिय नागरिक दिखाई देते हैं।

विलियम—परन्तु फिर भी मिलिट्री मैनुअल के अनुसार ··

मेजर—(आवाज़ देते हुए) लैफ्टीनेन्ट रोशर !

(एक केबिन में से लैफ्टीनेन्ट रोशर शीघ्रता से बाहर झांकता है। चेहरे पर साबुन लगा हुआ है। पर्दा उठा कर मेजर के सम्मुख आ खड़ा होता है।)

लैफ्टीनेन्ट रोशर—यस् सर।

मेजर—यह स्टूल तनिक खिसका दो। नक्शे पर अधिक प्रकाश पड़ रहा है।

रोशर—(खिसकाते हुए) यस् मेजर !

विलियम—लैफ्टीनेन्ट रोशर !

रोशर—यस कैप्टिन ।

विलियम—तुम्हारे चेहरे पर साबुन का झाग लगा हुआ है।

रोशर—मैं अपनी दाढ़ी बना रहा था।

विलियम—(डांट कर) और तुम्हारे कोट के बटन भी खुले हुए हैं।

रोशर—यस सर···सोने की तैयारी कर रहा था।

विलियम—कोट के बटन बन्द करो। बड़े अधिकारियों के सामने इस दशा में? तुमने मिलिट्री मैनुअल की धारा ७ का अध्ययन नहीं किया ?

रोशर—(कोट के बटन लगाते हुए) यस कैप्टिन ! क्षमा चाहता हूँ।

कर्नल शाफ्ट—(प्रवेश करते हुए) क्या बात है मेजर ? (सब खड़े हो जाते हैं) हैलो कैप्टिन विलियम (हँसते हुए) मिलिट्री मैनुअल पर भाषण दे रहे थे।

मेजर—(थके स्वर में) ये कैप्टिन विलियम बेचारे रोशर पर रुष्ट हो रहे थे।

कर्नल शाफ्ट—कैप्टिन विलियम !

विलियम—यस कर्नल ?

कर्नल—फ्रिट्ज़ आज प्रातःकाल से कोयले की खान पर ड्यूटी दे रहा है। उसकी तबीयत ठीक नहीं है। तुम उसकी ड्यूटी पर चले जाओ।

विलियम—बहुत अच्छा कर्नल।

(विलियम चला जाता है।)

कर्नल—(बैठते हुए) यह छोकरा विलियम एक दिन जनरल हैड-क्वार्टर्ज़ में होगा।

मेजर—वह कैसे ?

कर्नल—मिलिट्री के जितने नियम इसे आते हैं शायद बड़े-बड़े जरनैलों को भी याद न होंगे। और फिर मूर्ख भी है।

मेजर—बिलकुल गधा है। इसीलिए तो···

कर्नल—मेजर यह किसका चित्र है ?

मेजर—रेल का पुल।

कर्नल—आ—आ हुम।

मेजर—कर्नल, यह युद्ध कब समाप्त होगा ?

कर्नल—जब हमारे शत्रु नष्ट हो जायेंगे।

मेजर—परन्तु अब तो हमने सारे यूरोप पर अधिकार कर लिया है। अब हमारा सामना कौन कर सकता है ?

कर्नल—अभी शत्रु बाक़ी हैं।

रोशर—तो युद्ध क्या इस वर्ष समाप्त नहीं होगा ?

कर्नल—क्यों रोशर, क्या बात है ?

रोशर—मैं और आइटल विचार कर रहे थे कि यदि युद्ध इस वर्ष समाप्त हो जाए तो हम यहीं रह जायें। यह स्थान बहुत अच्छा प्रतीत होता है। इस घाटी में हमने एक बहुत रमणीक स्थान देखा है। हमारी इच्छा है कि हम वहां एक फ़ार्म बना लें और शान्ति से रहें।

कर्नल—घर की भूमि क्या हुई ?

रोशर—वह तो थोड़ी सी थी, क़र्ज़ों में बिक गई।

कर्नल—हुम।

रोशर—और कर्नल साहब, मैं और आइटल सोच रहे थे कि अब के क्रिसमस पर यदि फ़र्लो (forlough) मिल जाए तो⋯

कर्नल—क्रिसमस तो आने दो। अभी बहुत से काम करने हैं।

(एक युवा लैफ़्टीनैन्ट प्रवेश करता है।)

कर्नल—आइटल क्या बात है ?

आइटल—(सैल्यूट करते हुए) मि० बारल आपसे मिलना चाहते हैं।

कर्नल—उन्हें अन्दर भेज दो।

(आइटल चला जाता है। बारल अन्दर आता है। उसके सिर पर पट्टी बँधी है।)

कर्नल—क्या बात है बारल ? तुमने सिर पर पट्टी कैसे बाँध रखी है ?

बारल—मैं कोयले की खान के पास से निकल रहा था कि पहाड़ के ऊपर से एक छोटा सा पत्थर लुढ़कता आया और अकस्मात लग गया।

कर्नल—तुम्हें विश्वास है कि यह घटना अकस्मात हुई ?

बारल—पूरा—मैं इन लोगों को भली प्रकार जानता हूँ। यहाँ मैंने भूमि ख़रीद ली है। मकान बनाया है। एक सुन्दर लड़की मेरी नौकरानी है। मेरा विचार है कि वह मुझ से प्रेम भी करती है।

कर्नल—(गम्भीरता पूर्वक) मेरी बात सुनो बारल। तुम अब इस क़स्बे को छोड़ दो तो अच्छा होगा। यहाँ के लोग अब तुम्हें पसंद नहीं करेंगे। वे समझते हैं कि तुमने उन्हें धोखा दिया है। उनकी दृष्टि में तुम एक देश-द्रोही हो। तुमने हमारी सहायता की है। मैंने अपनी रिपोर्ट में तुम्हारी सराहना की है परन्तु इस सचाई से आँखें चुराई नहीं जा सकतीं कि तुम्हारा यहाँ अब और अधिक ठहरना ख़तरे से ख़ाली नहीं।

बारल—परन्तु मैं तो यह कहने आया था कि मेयर के स्थान पर आप मुझे क़स्बे का प्रबन्धक नियुक्त कर दीजिए।

कर्नल—देश-द्रोही से लोग कैसे सहयोग करेंगे ?

बारल—आप क्या कह रहे हैं ? यह लीडर के शब्द नहीं हैं।

कर्नल—मिस्टर बारल, मैं आपको नेक सलाह दे रहा हूँ। आप यहाँ से चले जाइए। मैं इसका अभी प्रबन्ध किए देता हूँ। और सुनिए, जहाँ तक हो सके घर से न निकलिए, फ़ौजी टोपी पहनिए और किसी स्त्री का विश्वास न कीजिए।

बारल—मैं मेयर बनना चाहता हूँ।

कर्नल—मैं आपको मेयर नहीं बना सकता। आपका इस नगर में न प्रभाव है, न प्रतिष्ठा। जो मेयर है, वही मेयर रहेगा। वह यहाँ के जन-साधारण का प्रतिनिधि है, यद्यपि मैं उस पर कड़ी दृष्टि रखता हूँ। परन्तु उसके हाव-भाव देख कर मैं तत्काल अनुमान लगा सकता हूँ कि इस देश के लोग क्या सोच रहे हैं, क्या कर रहे हैं। किस बात की तैयारी कर रहे हैं। मेयर इस जाति, इस देश, की आत्मा का प्रतीक है। मैं उसके निकट रहना चाहता हूँ जिससे कि आने वाले ख़तरे को देख कर उसके लिए पहले ही से प्रबन्ध कर सकूं।

बारल—मैं मेयर बनना चाहता हूँ। मैं यहाँ से नहीं जाना चाहता। मैंने यहाँ काम किया है। मुझे इसका पुरस्कार मिलना चाहिए। मैंने इस विषय में हैड-क्वार्टर्ज़ को एक पत्र लिखा है। मैं उनके उत्तर की प्रतीक्षा में हूँ।

कर्नल—जो जी में आए करो। परन्तु मैं तुम्हें सावधान किए देता हूँ कि तुम्हारी जान ख़तरे में है। लोग तुम से घृणा करते हैं। यह देश हमारा नहीं है। हमने इस पर अधिकार किया है। इस बात को याद रखो कि देश-द्रोही से सब डरते हैं, परन्तु देश-द्रोही को कोई प्यार नहीं करता।

बारल—परन्तु हमने उन्हें पराजित कर दिया है।

कर्नल—पराजय एक अस्थायी वस्तु है। यह देर तक नहीं बनी रहती। पिछले महायुद्ध में हम पराजित हुए थे परन्तु आज हम पुनः उत्थान और विजय के पथ पर अग्रसर हैं। पराजय का क्या विश्वास ? तुम्हें मालूम है लोग बन्द कमरों में शायद किसी नए विद्रोह की तैयारियाँ कर रहे हैं।

बारल—क्या आप विद्रोह से डरते हैं कर्नल ?

कर्नल—(थके हुए स्वर में) मैं केवल उन लोगों से डरता हूँ जो युद्ध का अनुभव प्राप्त किए बिना युद्ध के विशेषज्ञ बन जाते हैं। मुझे याद है पिछले महायुद्ध में मेरा सम्पर्क बेलजियम की एक बूढ़ी स्त्री से हुआ था (स्वप्नमय स्वर में) अबोध, उदास सा मुख, सफ़ेद हाथ—छोटे २ कोमल से हाथ जिन पर नीली २ रगें उभरी हुई दिखाई देती थीं। वह बहुधा हमारी बारक में आती, हमारा राष्ट्रीय गीत हमें गा कर सुनाती, अपने कोमल विकम्पित स्वर में। वह हमारे विभिन्न काम किया करती थी। सिग्रटें हों अथवा स्त्रियाँ वह हमारी प्रत्येक आवश्यकता को पूरा करती थी। (विराम) हमें मालूम न था कि यह वही बुढ़िया है जिसके इकलौते बेटे को हम ने फांसी पर लटकाया था। अन्त में जब हमने उस बुढ़िया को अपनी गोली का निशाना बनाया तो वह उस समय तक हमारे बारह अफ़सरों की हत्या कर चुकी थी, लोहे की एक बड़ी सी सुई से, जानते हो, पिस्तौल या मशीन-गन की गोली से नहीं। एक लोहे की साधारण सी सुई से जिसे वह सदा अपनी टोपी में लगाए रखती थी। वह सुई अब भी मेरे पास है। उसके बीच में सीप का बटन लगा हुआ है जिस पर बत्तख की तसवीर बनी हुई है।

बारल—तो फिर आपने उसे गोली मार दी ?

कर्नल—हाँ।

बारल—फिर तो यह कुचक्र समाप्त हो गया होगा। फिर तो अफ़सरों पर किसी ने प्रहार न किया होगा।

कर्नल—बुढ़िया मार डाली गई परन्तु उससे आग न दबी। आग फैलती गई, प्रचंड होती गई। हत्याएँ, घटनाएँ, प्रतिशोध।

बारल—क्या आप अपने जूनियर अफ़सरों के सामने भी इस प्रकार की बातें करते हैं?

कर्नल—वह इन बातों को नहीं समझ सकते।

बारल—कर्नल साहब, आपको ऐसे कार्य का नेतृत्व करने के लिए नहीं चुना जाना चाहिए था।

कर्नल—मैं कम से कम तुम्हारी भांति मूर्ख नहीं हूँ। मैं परिस्थितियों का अध्ययन करता हूँ और इसलिए भूल भी कम करता हूँ। मिस्टर बारल, तुम्हारा काम यहाँ समाप्त हो गया। मैं तुम्हारी सिफ़ारिश करूँगा। तुम्हें किसी अन्य बड़े नगर में भेज दिया जाय जहाँ तुम अपना कार्य फिर से आरम्भ कर सको, नई विजय प्राप्त कर सको।

(कैप्टिन विलियम शीघ्रता से प्रवेश करता है।)

कर्नल—क्या बात है कैप्टिन विलियम?

विलियम—हुजूर कैप्टिन फ्रिट्ज को एक फ्रांसीसी मज़दूर हारेत ने छुरा मार कर उनकी हत्या कर दी। वह वास्तव में मुझ पर प्रहार करना चाहता था कि कैप्टिन फ्रिट्ज मुझे बचाने को आगे बढ़ आए।

कर्नल—(धीरे से) हुम...यह संकट फिर उठ खड़ा हुआ।

विलियम—हुजूर आपने क्या फरमाया?

कर्नल—कुछ नहीं (विराम) मेयर साहब को हमारा सलाम कहो। बोलो कर्नल साहब अभी मिलना चाहते हैं।

विलियम—यस सर।

(विलियम शीघ्रता से बाहर निकल जाता है। कर्नल सिर पकड़कर बैठ जाता है।)

तीसरा दृश्य

(मेयर के खाने का कमरा। एनी और जॉन एक कोने में रखी हुई मेज़ को सरका रहे हैं।)

एनी—जॉन, देखना, कहीं इसका पाया न निकल जाए।

जॉन—बहुत पुरानी मेज़ है एनी।

एनी—यह लोग इस बड़ी मेज़ को यहाँ क्यों रखना चाहते हैं?

जॉन—लोएज़ा के पति हारेल ने कैप्टिन फ्रिट्ज़ को छुरा मार दिया था। आज उसका कोर्ट मार्शल होगा।

एनी—इस कमरे में?

जॉन—इसी कमरे में।

एनी—और मेयर?

जॉन—विवश है।

एनी—परन्तु लोग इसे सहन न करेंगे। (विराम) मैं इसे सहन नहीं कर सकती।

जॉन—तुम क्या करोगी?

एनी—मैं चार-पाँच पिशाचों को जान से मार कर रहूँगी।

(पग-ध्वनि)

जॉन—हुश, मेयर आ रहे हैं।

एनी—डाक्टर भी साथ में हैं (विराम) अरे लोएज़ा भी है। वह यहाँ कैसे आई, क्यों आई है? कितनी प्यारी लड़की है, अभागी लोएज़ा।

मेयर, डाक्टर और लोएज़ा का प्रवेश। लोएज़ा एक सुन्दर युवती है। बड़ी-बड़ी आंखों में विषाद और निराशा की छाया है।

मेयर—लोग क्या कहते हैं लोएज़ा ?

लोएज़ा—लोग कहते हैं कि शत्रु की सेना के एक अफ़सर की हत्या के अपराध में मेरे पति को जो दण्ड दिया जाएगा, वह आपके आदेश से होगा।

मेयर—लोग यह कैसे कह सकते हैं ? (व्यथित हो कर) मैं यह काम कैसे कर सकता हूं ? डाक्टर, लोगों को मुझ पर विश्वास नहीं रहा, शत्रु भी मुझ पर सन्देह करता है। मैं क्या करूँ ?

एनी—लोएज़ा के पति ने कोई अपराध नहीं किया। सारा क़स्बा जानता है वह बड़ा सज्जन है।

जॉन—हुजूर, हारेत का पिता म्युनिसिपल बोर्ड का मेम्बर रह चुका है।

एनी—(प्रार्थना पूर्वक) हुजूर उसने लोएज़ा को पिछले क्रिसमस पर एक लाल रेशमी गाउन दिया था। मुझे अच्छी तरह याद है। (लोएज़ा के नेत्र सजल हो जाते हैं। जॉन बाहर चला जाता है)

मेयर—परन्तु तुम से किसने कहा कि मैं उसे दण्ड देना चाहता हूँ ? मैं उसे दण्ड क्यों दूँ ? उसने अपने देश, अपनी जाति के विरुद्ध कोई अपराध नहीं किया।

लोएज़ा—मेयर...क्या वे...वे...क्या वे मेरे पति को गोली मार देंगे ? (मेयर को चुप देखकर लोएज़ा सिसकियाँ लेने लगती है)

मेयर—मेरी बच्ची, लोएज़ा, मेरी बच्ची !

लोएज़ा—(सहसा) मुझे न छुओ, मुझे न छुओ......मैं जाती हूं।

(तेज़-तेज़ पग धरती बाहर चली जाती है)

मेयर—(चिन्तातुर होकर) जॉन, एनी, मादाम को शीघ्र बुलाओ।

जॉन—कर्नल आपसे मिलना चाहते हैं।

(जॉन का प्रस्थान, कर्नल का प्रवेश)

कर्नल—मैं चाहता हूं आप स्वयं अपने आदेश से हारेत को मृत्यु-दण्ड दें। उसने कैप्टिन फ़्रिट्ज़ की हत्या की है। आप सारी घटना सुन चुके होंगे।

मेयर—(अनसुनी करके) हारेत कहाँ है कर्नल?

कर्नल—हमने उसे बन्दी बना लिया है। वह अभी यहाँ लाया जाएगा।

मेयर—मैं हारेत को मृत्यु-दण्ड नहीं दे सकता।

कर्नल—क्यों?

मेयर—मैं इस नगर का मेयर हूं। अपने देश के विधान के आधीन मुझे मृत्यु-दण्ड देने का अधिकार नहीं है। परन्तु मुझसे यह बात क्यों कही जा रही है? तुम जानते हो मेरे अधिकार-क्षेत्र में अब कुछ नहीं है।

कर्नल—यदि दण्ड आपकी ओर से दिया जाएगा तो लोगों पर इसका अच्छा प्रभाव पड़ेगा। शान्ति स्थापित हो जायगी और मुझे अधिक लोगों को गोली से उड़ाना न पड़ेगा। जो मनुष्य हत्या करता है, उसे दण्ड मिलना ही चाहिये। क़ानून भी यही कहता है।

मेयर—मैं हारेत को एक शर्त पर दण्ड दे सकता हूँ। और वह शर्त यह है कि आप भी उन लोगों को दण्ड दें जिन्होंने हमारे सैनिकों को हमारे क़स्बे पर आक्रमण के समय जान से मार डाला था।

कर्नल—आप मज़ाक कर रहे हैं।

मेयर—यह मज़ाक नहीं है। मज़ाक तो आप करते हैं। आप हमारे क़स्बे पर आक्रमण करते हैं। हमारे सिपाहियों को जान से मार डालते हैं। यह यदि हत्या नहीं तो क्या है? इसकी सज़ा मृत्यु-दण्ड नहीं होगी तो क्या होगी? और क़ानून, आप किस क़ानून की बात करते हैं? आप और हमारे बीच अब क़ानून कैसा? अब तो केवल एक क़ानून रह गया है—लड़ाई का क़ानून। या आप

हमें नष्ट कर देंगे या हम आपको नष्ट कर देंगे, यह अन्तिम निर्णय है।

कर्नल—क्या मैं इस कुर्सी पर बैठ सकता हूँ ?

मेयर—यह एक और झूठ है—'क्या मैं इस कुर्सी पर बैठ सकता हूं ?' आप मुझसे क्यों पूछते हैं ? मैं कौन हूं ? आप चाहें तो मुझे घण्टों खड़ा रख सकते हैं। इस मज़ाक की क्या ज़रूरत है ?

कर्नल—मैं आपका योग चाहता हूँ।

मेयर—शत्रु शत्रु को योग नहीं दे सकता। हमारे और आपके बीच अब एक नया नाता है, अधिकारी और आधीन का, स्वामी और दास का, घमंड और घृणा का। इस नए नाते की जंजीरें समस्त फ्रांस में फैलती जा रही हैं। मेरे राष्ट्र की घायल आत्मा में प्रतिशोध की भावना को प्रबल बना रही हैं। मैं स्वयं मर सकता हूँ परन्तु हारेत को मृत्यु-दण्ड नहीं दे सकता।

कर्नल—(सिग्रेट सुलगाते हुए) हूं (विराम) मेरा विचार है कि अब बारल ही को मेयर बनाना पड़ेगा (विराम) इसके अतिरिक्त और कोई चारा नहीं। आप कोर्ट-मार्शल के समय तो यहाँ उपस्थित होंगे ?

मेयर—हाँ मैं रहना चाहता हूँ ताकि अभागे हारेत को सान्त्वना दे सकूं।

कर्नल—एक बार फिर सोच लीजिए (कठोरता से) मैं चाहता हूं कि यह रक्त-पात पुनः आरम्भ न हो (मेयर घूमकर एक बड़ी खिड़की पर आ खड़ा होता है और बाहर देखने लगता है।)

मेयर—(कंठ में क्रोध का लेश भी नहीं) बाहर बर्फ पड़ रही है कर्नल साहब (ठहर कर और मुड़ कर कर्नल को देखते हुए) तनिक इस खिड़की में से झांकिए—कैसी सफेद प्यारी सुहावनी बर्फ पड़ रही है।

(कर्नल होंट चबाने लगता है और फिर उठकर खिड़की की ओर बढ़ता है।)

चौथा दृश्य

(वही कमरा परन्तु अब उसे फौजी अदालत का रूप दे दिया गया है। जब पर्दा उठता है तो हारेत का कोर्ट मार्शल हो रहा है और कैप्टिन विलियम हारेत पर लगाए गए अपराध पढ़कर सुना रहा है।)

कैप्टिन विलियम—(पढ़ते हुए) इस पर भी हारेत ने कोई परवा न की और साफ़ इन्कार कर दिया। और जब हारेत को कोयले की खान में काम करने का आदेश दिया गया तो हारेत ने आगे बढ़कर कैप्टिन विलियम पर हमला करना चाहा। कैप्टिन फ्रिट्ज़ ने बीच में आकर उसे बचाना चाहा और छुरा उसकी छाती के पार होगया। (ठहर कर) डाक्टर की रिपोर्ट भी इसके साथ नत्थी है। क्या आप उसे भी सुनना चाहेंगे ?

कर्नल—(जो इस अदालत का अध्यक्ष है) नहीं, नहीं, इसे शीघ्र समाप्त करो।

विलियम—(पढ़ते हुए) इस पूरी घटना को बहुत से सिपाहियों ने देखा, जिनकी शहादतें यहाँ लिखी हुई हैं। (ठहर कर) इस फौजी अदालत का निर्णय है कि हारेत कैप्टिन फ्रिट्ज़ का हत्यारा है। इसलिए उसे मौत की सज़ा दी जाती है। (ठहर कर) सिपाहियों की शहादतें भी पढ़ूं ?

कर्नल—नहीं विलियम, इसकी आवश्यकता नहीं (हारेत से) हारेत, तुम्हें अपनी सफ़ाई में कुछ कहना है ?

मेयर—हारेत, इस कुर्सी पर बैठ जाओ।

विलियम—"ऐसी अदालत में इसे कुर्सी पर बैठने की आज्ञा नहीं दी जा सकती।

कर्नल—नहीं, बैठ जाने दो, इसमें कोई आपत्ति नहीं।

मेयर—हारेत, मेरे निकट आओ, कहो जो कुछ तुम्हें अपनी सफ़ाई में कहना है।

हारेत—मैं...मैं यह कहना चाहता हूं कि मैंने यह कार्य शोक और आवेश में आकर किया। मैं उसे मारना न चाहता था। मुझे कोयले की खान में काम करने के लिए बाध्य किया गया। मैं क्रोध से पागल हो रहा था। मैं...मैं स्वतंत्र स्वभाव का मनुष्य हूं, भावुक भी हूं। मैं कभी किसी का गुलाम नहीं रहा। मैंने कभी किसी का ऐसा हुक्म नहीं माना। मैं उसे मारना न चाहता था। वह तो वैसे ही बीच में आगया। मैं वास्तव में इसे—कैप्टिन विलियम को मारना चाहता था।

कर्नल—इससे कोई बहस नहीं कि तुम किसे मारना चाहते थे। यह बताओ तुम्हें अपने किए पर क्षोभ है?

हारेत—तनिक भी नहीं।

कर्नल—बस और कहने की आवश्यकता नहीं। तुम्हारा अपराध सिद्ध हो चुका है। सिपाहियो, इसे चौक में ले जाकर गोलियों की बाढ़ मार दो। क़स्बे के सब से बड़े चौक में ले जाकर सब के सामने गोली से मार दो (ठहर कर) कैप्टिन विलियम, सब प्रबन्ध ठीक है? मैं कोई बात तो नहीं भूल गया?

मेयर—(कुर्सी से उठते हुए) आप मुझे भूल गए कर्नल साहब! (विराम) हारेत, तुम जानते हो, मैं इस क़स्बे का मेयर हूं। इस क़स्बे के लोगों ने मुझे चुना है। लोग कहते हैं कि तुम्हें दण्ड देने में मेरा हाथ है। मुझे उन लोगों की कोई परवा नहीं। मैं केवल तुम्हें अपने निर्दोष होने का विश्वास दिलाना चाहता हूं क्योंकि तुम काल के गाल में जा रहे हो। मेरी बात सुन रहे हो हारेत!

हारेत—(विचलित होकर) हाँ मेयर।

मेयर—ये लोग आक्रमणकारी हैं। इन्होंने हम पर विजय प्राप्त कर ली है—धोखे से, छल से, बल से।

विलियम—(क्रोध पूर्वक) इस द्रोहात्मक भाषण की अनुमति नहीं दी जा सकती।

कर्नल—चुप रहो विलियम! यह अच्छा है कि इसे साफ़ २ सुन लिया जाए। या तुम यह अच्छा समझोगे कि लोग बन्द कमरों में बैठ कर इसे बार २ दुहराते रहें।

मेयर—जब शत्रु हम पर छा गया तो उस समय लोगों को पता न था कि पराजय क्या होती है, पराधीनता किसे कहते हैं, पर-राज्य का क्या अर्थ है। वे हैरान थे, निस्तब्ध, निश्चेष्ट, पत्थर की मूर्तियाँ बने खड़े थे। परन्तु तुम्हारा क्रोध, तुम्हारी हिंसात्मक कार्यवाही—उसी सामूहिक प्रतिशोध की प्रथम लहर है जो आज समस्त देश की नस-नस में अग्नि की प्रचण्ड धारा की भांति प्रवाहित है।

हारेत—मैं जानता हूं मेयर।

मेयर—(कन्धे पर हाथ रखते हुए) हारेत, क्या तुम्हें डर लगता है?

हारेत—(भर्राए स्वर में) हाँ मेयर।

विलियम—गारद तैयार है कर्नल।

हारेत—जाओ हारेत, मृत्यु के द्वार की ओर जाते समय मैं तुम से केवल यह कहना चाहता हूँ कि इन आक्रमणकारियों को आज से शान्ति का एक सांस भी नसीब नहीं होगा, एक क्षण के लिए भी नहीं होगा। दिन और रात के प्रतिपल एक भयावने, अदृश्य सामूहिक भय का अनुभव इनके कलुषित हृदयों को अशान्त और विकल रखेगा—एक क्षण के लिए भी इन्हें चैन नहीं लेने देगा। विदा हारेत!

हारेत—विदा मेयर !

कर्नल—(ऊँचे स्वर में) सिपाहियों को बुलाओ।

पाँचवाँ दृश्य

(बड़ा हॉल जो दूसरे दृश्य में दिखाया गया था, वहाँ सैनिक अधिकारी पड़े हुए हैं। इस हॉल में प्रकाश कम और अधिकार अधिक है जिससे भयावने-पन और उदासी का वातवरण पैदा हो रहा है। दो-तीन मेज़ों पर मोमबत्तियाँ जल रही हैं, उनके प्रकाश से कमरे की दीवारों पर विचित्र छाया पड़ रही है। लैफ़्टिनेन्ट रौशर, आइटल और रसनबर्ग एक मेज़ पर ताश खेल रहे हैं। दाढ़ियाँ बढ़ी हुई, आँखों में भय की छाया। मेजर उनके निकट नक्शा बना रहा है। विलियम वर्दी पहन रहा है।

रौशर—मेजर, बिजली का डाइनैमो ठीक हो गया ?

मेजर—छः मिस्तरी उस काम पर लगा रखे हैं, गारद का पहरा है। फिर भी न जाने क्यों डाइनैमो फ़ेल हो जाता है।

रौशर—मुझे इन मोमबत्तियों से बड़ी घृणा है, मैं बिजली का प्रकाश चाहता हूँ।

मेजर—(कठोरता से) रौशर, तुम्हारा स्वास्थ्य कुछ ठीक नहीं जान पड़ता। तुम्हारे मस्तिष्क पर युद्ध का बुरा प्रभाव पड़ा है। अपनी बुद्धि भ्रष्ट न होने दो, अपने पर नियंत्रण रखो।

रौशर—मैं घर जाना चाहता हूँ (बालकों की भांति मचलते हुए) मैं अपनी प्रेमिका से मिलना चाहता हूँ। उसको देखे हुए मुझे कितना समय हो गया है।

मेजर—अपने पर संयम रखो। (विराम) विलियम, आज की रिपोर्ट क्या है ? कोई नई घटना ?

आइटल—(ताश के पत्ते फेंकते हुए) नित्य नई घटनाएँ होती रहती हैं। कोई सन्तरी ऊँघ गया उसकी लाश बर्फ़ में पाई गई। कोई सिपाही गारद से अलग हो गया और दूसरे दिन उसकी लाश पहाड़ की खड्ड में पाई गई। कोई सिपाही किसी स्त्री के बुलावे पर उसके घर गया और सदा के लिए लुप्त हो गया।

विलियम—मेजर, रौशर और आइटल का कोर्टमार्शल होना चाहिए। ये कैसी बातें करते हैं ?

मेजर—कहने दो। इस से जी का बोझ हल्का होता है। (विराम) तुम अपनी रिपोर्ट सुनाओ।

विलियम—खान में एक दुर्घटना हुई थी, बी० सैक्शन में बिजली फ़ेल हो गई थी, छः घन्टे काम बन्द रहा, दो ट्रालियाँ टूट गईं।

मेजर—हुम !

विलियम—रेल के पुल की पूर्वी दीवार किसी ने डाइनामाइट लगा कर उड़ा दी।

मेजर—दुष्ट सदा पूर्वी दीवार ही को उड़ाते हैं।

रसनबर्ग—सुना है कर्नल ने और सैनिक सहायता मँगवाई है।

आइटल—(अविश्वास के साथ) सहायता आएगी मेजर ?

मेजर—शायद !

आइटल—(आशा-जनक स्वर में) और हमें छुट्टी मिलेगी। छुट्टी की कल्पना ही से मुख पर मुस्कान फैल जाती है।

मेजर—(हँस कर) तुम तो यहाँ रहना चाहते थे। यह सुन्दर घाटी, एक छोटा सा फ़ार्म, (नक़ल उतारते हुए) एक छोटा सा बाग़, कुछ भेड़ें और शान्तिमय जीवन।

रसनबर्ग—चुप हो जाओ मेजर, भगवान् के लिए ऐसी बातें न करो।

आइटल—जॉन, बराँडी है ? या कोई और शराब ?

(जॉन दूर ही से मिनमिनाता है)

आइटल—(क्रोधित हो कर) सिर क्यों हिलाते हो ? मुँह से बोलो उल्लू के पट्ठे ।

जॉन—(निकट आकर) नहीं साहब, शराब नहीं है ।

आइटल—और बराँडी ?

जॉन—बराँडी भी नहीं है ।

आइटल—तो यहाँ खड़े २ मेरा मुँह क्यों देख रहे हो हरामज़ादे, उल्लू के बच्चे ?

जॉन—मैं जाना चाहता हूँ ।

आइटल—(चिल्लाकर) तो जाओ, दफ़ा हो जाओ, जाओ यहां से ।

(जॉन का प्रस्थान)

रसनबर्ग—तुम्हें अपने मन पर संयम रखना चाहिए, विशेषतया इन लोगों के सामने जो हमारे शत्रु हैं । ये हमारी दुर्बलता से किसी भी समय लाभ उठा सकते हैं ।

रौशर—(भावनाओं के आवेश में) संयम, संयम, संयम—जब सुनो संयम । मैं सिपाही हूँ परन्तु मैं मनुष्य भी हूँ । मुझे यहां अपने चारों ओर घृणा ही घृणा दिखाई देती है । मैं सुन्दर युवतियों की हँसी सुनना चाहता हूँ । (स्वयं से) नृत्य, संगीत और किसी के लावण्यमय शरीर की महक और अँगीठी में चटख़ती हुई लकड़ियों की मीठी-मीठी आँच और अपने मित्रों से गप्पें (सहसा ऊँची आवाज़ में—आवाज़ से हिस्टेरिया का सन्देह होता है) परन्तु यहाँ क्या है ? जब मैं किसी नाच-घर में प्रवेश करता हूँ तो नाच रुक जाता है । हँसी होंटों पर जम जाती है । लोग कठोर दृष्टियों से मुझे देखने लगते हैं । किसी रेसतराँ में जाता हूं तो खाने की स्वादिष्ट महक मेरी भूख को भड़का देती है । खाना मँगाता हूँ तो जी जल कर राख हो जाता है । किसी खाने में नमक कम है, किसी में

मिर्च अधिक है। सालन कड़वा हो गया है तो रोटी जल गई है, और फिर बैरे की दृष्टि—शीतल, भाव-हीन, सूनी।

रसनबर्ग—चुप रहो रौशर, भगवान् के लिए।

(कर्नल का प्रवेश)

कर्नल—क्या बात है? कौन इतने ज़ोर से चिल्ला रहा था?

मेजर—(नक़्शा बनाते हुए) कुछ नहीं, रौशर बेचारा एक मानसिक विकार में ग्रस्त है।

कर्नल—(दस्ताने उतारते हुए) हाँ, ऐसा भी होता है प्रायः।

मेजर—कोई नई ख़बर कर्नल?

कर्नल—सब ठीक है।

मेजर—अँग्रेज़ लड़ रहे हैं?

कर्नल—हां, थोड़ा बहुत, परन्तु उन्हें हार हो चुकी है।

मेजर—और रूसी?

कर्नल—हार चुके हैं परन्तु एक-दो बार फुरेरी सी लेते हैं।

मेजर—सारा संसार हमारा है।

कर्नल—सारा संसार हमारा है।

रौशर—(व्यंग पूर्वक ऊँचे स्वर में) सारा संसार हमारा है और हम एकाकी हैं। सारा संसार हमारा है और हम छायाओं से भी डरते हैं। सारा संसार हमारा है और हम रात्री के अन्धकार में बाहर नहीं निकल सकते।

रसनबर्ग—चुप रहो रौशर।

रौशर—(अनसुनी करते हुए) सारा संसार हमारा है और हमसे कोई नहीं बोलता। कोई हम से प्रेम नहीं करता और कोई हमें देख कर नहीं मुस्कराता। सारा संसार हमारा है और नित्य नई घटनाएँ होती हैं, गोलियां चलती हैं, रेलें उखाड़ी जाती हैं, खानों में तोड़-फोड़ की जाती हैं। गोलियों की सनसनाहट हमारी छातियों को चीरती निकल जाती हैं।

विलियम—चुप रहो बदतमीज़ ।

रौशर—सुना तुमने प्यारे कर्नल, हम विजेता हैं। हमने समस्त संसार जीत लिया है परन्तु हम किसी एक के हृदय को न जीत सके। (हँसी में सिसकी लेते हुए) मुझे उस लड़की से प्रेम है जो क़स्बे की दीवार के पास पुरानी सड़क पर रहती है। उसकी भूरी बड़ी २ आँखें, और सुनहरी बाल—सुना तुम ने मेरे प्यारे कर्नल, हमने समस्त संसार को जीत लिया है परन्तु किसी एक के हृदय को न जीत सके।

कर्नल—क्या कह रहे हो रौशर ? अपने पर नियंत्रण रखो।

रौशर—कल मैंने एक सपना देखा कि लीडर—हमारा लीडर—पागल हो गया। हा, हा, हा और चिल्ला २ कर कह रहा है—मैंने समस्त संसार को जीत लिया, मैंने समस्त संसार को जीत लिया, मैंने समस्त संसार को जीत लिया।

विलियम—(ज़ोर से चपत लगाकर) चुप बदतमीज़।

रौशर—(सिसकियाँ लेकर) मैं घर जाना चाहता हूँ, मैं घर जाना चाहता हूँ।

छठा दृश्य

हारेत के घर में बैठने का कमरा। कमरे की सजावट से गृह स्वामिनी के सुघड़ापे का पता लगता है। हारेत की विधवा लोएज़ा कपड़े सीने की मशीन पर बैठी कपड़े सी रही है। काले वस्त्रों से उसका सौन्दर्य पूर्णतया जगमगा उठा है। वह गुनगुना रही है। वह एक बड़ी-सी कैंची से कपड़ा काटने लगती है कि द्वार पर खटखट होती है।

लोएज़ा—अन्दर आजाइये।

एनी—(प्रवेश करते हुऐ) हैलो लोएज़ा!

लोएज़ा—हैलो एनी, इस समय कैसे?

एनी—(होटों पर उंगली रखकर) शिश, अभी थोड़ी देर में मेयर यहाँ आएँगे।

लोएज़ा—क्यों?

एनी—फ़िलिप्स और उसका भाई आज दोनों यहाँ से इंगलैंड को भाग रहे हैं। आज चन्द्रमा भी नहीं है और उन्हें एक अच्छी नौका मिल गई है। मेयर उनसे बात करना चाहते हैं और उनको एक सन्देश देना चाहते हैं।

लोएज़ा—अंग्रेज़ों के लिए?

एनी—हां।

लोएज़ा—वे कब आएँगे यहां?

एनी—कोई पौन घण्टे तक। मैं तुम्हें सूचना देने आई थी। मेयर ने कहा है कि मैं फ़िलिप्स और उसके भाई से लोएज़ा के मकान पर मिलूँगा। उस दुखांत घटना के बाद से मेयर को तुम्हारा बहुत ध्यान रहता है। (एक पैकिट देती है) लो यह थोड़ा-सा मांस उन्होंने भेजा है। अच्छा अब मैं चलती हूं, विदा लोएज़ा।

लोएज़ा—विदा एनी।

(कैंची से कपड़ा काटकर सीने लगती है और गुनगुनाए जाती है। इतने में द्वार फिर खटखटाया जाता है और रौशर प्रवेश करता है।)

लोएज़ा—(चौंककर) कौन है? (खड़ी हो जाती है)

रौशर—(द्वार पर खड़े होकर) मैं हूं। मैं तुम्हें कोई हानि नहीं पहुँचाना चाहता। मैं तुम्हें कोई हानि नहीं पहुँचाना चाहता।

लोएज़ा—तुम यहां क्यों आए हो, तुम यहां क्यों आए हो?

रौशर—(विनीत स्वर में) मैं—मैं केवल तुम्हारी बातें सुनना चाहता हूं। तुम्हें देखना चाहता हूं, मैं तुम्हें कोई चोट पहुँचाना नहीं चाहता। (निकट आ जाता है)

लोएज़ा—तुम बिना आज्ञा के घर में घुस आए हो। यह उचित नहीं है।

रौशर—प्लीज़ मिस, मैं अभी थोड़ी देर में लौट जाऊँगा (लोएज़ा के समीप कुर्सी खींचकर बैठते हुए) मैं शत्रु का सैनिक हूं परन्तु मैं तुम्हें कोई हानि नहीं पहुँचाना चाहता। क्या तुम मेरी इस बात को समझ सकती हो? क्या तुम थोड़ी देर के लिए इस पर विश्वास कर सकती हो? क्या हम थोड़ी देर के लिए इस युद्ध को नहीं भूल सकते? हम और तुम, केवल दो-चार क्षणों के लिए दो सीधे-सादे मनुष्यों की भांति बात नहीं कर सकते?

लोएज़ा—तुम नहीं जानते मैं कौन हूं। शायद तुम नहीं जानते हो। जानते हो मैं कौन हूं?

रौशर—मैंने तुम्हें इस कस्बे की सड़कों पर बहुधा देखा है। इन बड़ी-बड़ी भूरी आंखों और सुनहरी बालों को देखने की बहुधा कामना की है। मैं केवल इतना जानता हूं कि तुम अति सुन्दर हो। मैं केवल इतना जानता हूं कि मैं तुम से बातें करना चाहता हूं।

लोएज़ा—हूं, तुम निस्सन्देह अकेले हो। अकेलेपन की भावना बहुत बुरी होती है।

रौशर—तुम खूब समझती हो। मेरा भी यही विचार था कि तुम मेरी दशा भली प्रकार समझ सकोगी। भयानक विषाद-पूर्ण एकाकीपन मेरी जान को खाए जा रहा है। इस घोर निस्तब्धता और अगाध घृणा के बीच मैं अपने आप को बिल्कुल अकेला और निस्सहाय अनुभव करता हूं।

लोएज़ा—तुम यहां दस-पन्द्रह मिनट से अधिक नहीं बैठ सकते! (खड़का होता है)

रौशर—क्या यहां कोई आने वाला है ?

लोएज़ा—नहीं, यह छत से बर्फ गिरने का शब्द था। छत से बर्फ गिराने के लिए अब मेरे पास कोई आदमी नहीं।

रौशर—क्या यह दशा हमारे कारण हुई है ? मुझे खेद है (विराम) यदि इस सम्बन्ध में कुछ कर सकूँ ? कल मैं इस छत से बर्फ हटवा दूँगा।

लोएज़ा—(चौंककर) नहीं, नहीं, कदापि नहीं।

रौशर—क्यों ?

लोएज़ा—लोग समझेंगे मैं शत्रुओं से मिल गई हूं।

रौशर—आ हां, मैं समझा। तुम सब हम से घृणा करते हो, तुम सब (विराम) परन्तु मैं तुम्हारी देख-भाल कर सकता हूं, यदि तुम अनुमति दो। मैं तुम्हारी रक्षा करूँगा।

लोएज़ा—तुम मुझ से क्यों पूछते हो ? तुम विजेता हो, जो चाहो कर सकते हो। तुम्हारे सैनिकों को कुछ मांगने की ज़रूरत नहीं, वे जो चाहें, ले सकते हैं।

रौशर—मैं......मैं ऐसा नहीं हूं।

लोएज़ा—(विषाद-पूर्ण मुस्कान के साथ) तुम चाहते हो मैं तुम्हें चाहने लगूँ ? है ना ?

रौशर—हां। (विराम) तुम कितनी सुन्दर हो। तुम्हारे चेहरे में, तुम्हारे बालों में, तुम्हारी गर्दन के ख़म में, अस्त होते हुए सूर्य की समस्त सुन्दरता समा गई है। हां मै चाहता हूँ तुम मुझे चाहने लगो। युग बीत गये, मैं जब से यहां आया हूं, स्त्री की कोमल, मृदु, प्रेम भरी दृष्टि को तरस गया हूं।

लोएज़ा—तुम मुझ से प्यार करना चाहते हो लैफ्टिनैंट और चाहते हो कि मैं भी तुम्हें प्यार करूँ ? क्योंकि इस प्रकार यह प्रेम और अधिक सुन्दर और रुचिकर लगने लगेगा।

रौशर—हां हां, मैं चाहता हूं कि......कि, देखो मैंने सिपाहियों को

आदेश दे रखा है कि रास्ते में तुम्हें कोई न छेड़े। तुम्हें किसी ने तंग तो नहीं किया ?

लोएज़ा—नहीं, धन्यवाद !

रौशर—और मैंने एक कविता भी लिखी है, तुम्हारे लिए। क्या तुम उसे सुनोगी ?

लोएज़ा—बहुत लम्बी तो नहीं है ? तुम्हें थोड़ी देर में लौट जाना होगा।

रौशर—(जेब टटोलते हुए और निकट आते हुए) नहीं, नहीं, एक छोटी-सी कविता है (जेब से निकाल कर) यह रही। पढ़ो इसे।

लोएज़ा—(पढ़कर) क्या यह कविता तुमने स्वयं लिखी है ?

रौशर—हाँ।

लोएज़ा—मेरे लिए ?

रौशर—हां।

लोएज़ा—सचमुच लैफ्टिनैंट यह कविता तुमने लिखी है ? (विराम) निश्चय ही यह कविता तुमने नहीं लिखी।

रौशर—(मुस्कराकर, मानते हुए) नहीं।

लोएज़ा—तो फिर ?

रौशर—मैं ने यह किताब में पढ़ी थी। मुझे यह कविता बहुत पसन्द है। (हँसता है)

(लोएज़ा और रौशर दोनों हँसते हैं)

रौशर—(रुक कर) मैं वर्षों के बाद इस तरह हँसा हूँ। (विराम) तुम कितनी सुन्दर हो—वन के झरने की भांति अबोध, बहती हुई नदी की भांति मोहक।

लोएज़ा—(मुस्करा कर) तुम ने फिर प्रेम जताना आरम्भ कर दिया ?

रौशर—शायद। मैं तुम से प्रेम करना चाहता हूँ। मनुष्य को प्रेम की आवश्यकता होती है। बिना प्रेम के वह जीवित नहीं रह सकता,

उसकी आत्मा का स्रोत सूख जाता है, और शरीर राख का ढेर बन जाता है।

लोएज़ा—(कुछ समय चुप रह कर) तुम मेरा प्रेम चाहते हो लैफ्टिनैन्ट? (कटु स्वर में) मेरे प्रेम का मूल्य है, डबल रोटी के दो टुकड़े।

रौशर—तुम कैसी बातें करती हो?

लोएज़ा—मेरा पति मर चुका है और मैं अकेली निस्सहाय हूं और छत पर बर्फ़ भारी है। यही बर्फ़ मेरी छाती में जम कर रह गई है।

रौशर—तुम ऐसी बातें क्यों करती हो?

लोएज़ा—मैं बहुधा भूखी रहती हूं। मैं जानती हूं भूखा रहना कोई अच्छा अनुभव नहीं है। मेरा मूल्य डबल रोटी के दो टुकड़े और थोड़ा सा मांस है।

रौशर—भगवान के लिए ऐसी बातें न करो। यह सच नहीं है।

लोएज़ा—(थके स्वर में) हाँ यह सच नहीं है। मैं भूखी नहीं हूँ। मैं केवल तुम से घृणा करती हूं।

रौशर—(स्नेह-पूर्वक) मैं एक साधारण सा लैफ्टिनैंट हूं। मैं एक तुच्छ प्राणी हूं। मुझे किसी देश के जीतने की अभिलाषा नहीं है।

लोएज़ा—मैं जानती हूं, मैं जानती हूं।

रौशर—(उसका हाथ अपने हाथ में ले कर) मौत के इस गरजते हुए तूफान में जीवन के कुछ क्षण चाहता हूँ।

लोएज़ा—(स्वप्नमय स्वर में) मैं जानती हूँ, मैं जानती हूँ।

रौशर—क्या इतने से जीवन, इतनी सी खुशी पर भी हमारा अधिकार नहीं? (विराम) क्या बात है? क्या बात है? तुम शून्य में क्यों घूर रही हो।

लोएज़ा—(जैसे अपने सामने हारेत को देख रही हो) वह डरता था और मैं उसे कपड़े पहना रही थी, उजले साफ़ कपड़े। मैं ने उस की कमीज़ के बटन लगाए और वह भय से काँप रहा था।

रौशर—(अचरज से) तुम क्या कह रही हो ?

लोएज़ा—(घूरते हुए) वे उसे घर क्यों लाए ? वह हैरान था कि क्या होने वाला है। उसे कुछ पता न था, वह उजले कपड़े पहने अत्यन्त गम्भीरता पूर्वक सिपाहियों के साथ घर से निकला—जैसे बालक प्रथम बार स्कूल जा रहा हो।

रौशर—वह तुम्हारा पति था ?

लोएज़ा—हाँ वह मेरा पति था और मैं उसके लिए मेयर के पास गई परन्तु वह विवश था। वह कुछ न कर सकता था। (क्रोध से) और फिर तुम उसे पकड़ कर बाहर ले गए और तुमने चौक में ले जा कर उसे गोली मार दी।

(सिसकियाँ लेने लगती है)

रौशर—वह तुम्हारा पति था ?

लोएज़ा—परन्तु अब मुझे विश्वास हो जाता है, इस अकेले घर को देख कर मुझे विश्वास हो जाता है, छत पर बर्फ़ को देख कर विश्वास हो जाता है, इस ख़ाली बिस्तर को देख कर और सूर्योदय से पहले के भयावने एकाकीपन को अनुभव करके मुझे विश्वास हो जाता है (लोएज़ा अपना चेहरा हाथों में छिपा लेती है) काश, यह सच न होता !

रौशर—गुड नाइट (उठते हुए) भगवान तुम्हारी रक्षा करें ! (विराम) क्या मैं फिर कभी आ सकता हूं ?

लोएज़ा—मैं कुछ नहीं जानती।

रौशर—मैं फिर आऊँगा।

लोएज़ा—मैं कुछ नहीं कह सकती।

(रौशर चला जाता है। लोएज़ा चेहरा हाथों में छिपा कर सिसकियाँ लेती रहती है। थोड़े समय पश्चात् एनी द्वार खोल कर अन्दर प्रवेश करती है)

एनी—लोएज़ा, यह कौन था ?

लोएज़ा—(चीख़ कर) एनी !

एनी—(निकट आकर) मैं ने जाते समय उसे देखा था। एक सिपाही, शत्रु की सेना का एक सिपाही। (लोएज़ा की ओर ध्यान से और सन्देह-पूर्वक देखती है)।

लोएज़ा—(उदास, थके हुए स्वर में) हाँ वह शत्रु का सिपाही था। मुझ से प्रेम जताने आया था।

एनी—(चिल्ला कर) लोएज़ा ! लोएज़ा !!

लोएज़ा—(स्वाभाविक स्वर में) मैं पूरी तरह होश में हूँ।

एनी—(सन्देह के स्वर में) तुम शत्रु से मिल तो नहीं गई हो ?

लोएज़ा—इसकी कोई सम्भावना नहीं एनी।

एनी—तुम सच कह रही हो ?

लोएज़ा—हाँ।

एनी—मैं मेयर और उन दोनों लड़कों को यहाँ बुला लूँ जो आज इंग्लैन्ड जा रहे हैं ?

लोएज़ा—हाँ एनी, निश्चिन्त रहो, कोई खतरा नहीं है। मुझ पर विश्वास करो।

एनी—यदि वह सिपाही फिर आया ?

लोएज़ा—मैं उसे न आने दूँगी, तुम चिन्ता न करो।

एनी—(जैसे विश्वास नहीं होता) लोएज़ा ?

लोएज़ा—(निर्णयात्मक स्वर में) एनी, मेयर को अन्दर बुला लो और उन दोनों लड़कों को भी बुला लो—वे कहाँ खड़े हैं ?

एनी—पिछले द्वार के समीप।

लोएज़ा—उन्हें अन्दर ले आओ।

एनी—बहुत अच्छा।

(लोएज़ा कपड़ा काटती है और मशीन चलाती है)

मेयर—(प्रवेश करते हुए) हैलो लोएज़ा, ये हैं फ़िलिप्स और इनका छोटा भाई।

लोएज़ा—(उठकर हाथ बढ़ाते हुए) हाँ एनी ने मुझे अभी बताया था।

मेयर—(बैठते हुए) एनी, द्वार पर खड़ी रहो और जब गारद पास आए तो द्वार पर उंगली से एक बार 'ठक' करना और जब दूर चली जाए तो दो बार।

एनी—बहुत अच्छा (द्वार के बाहर चली जाती है)।

फिलिप्स—आज हम इंगलैंड जा रहे हैं, लोएज़ा।

लोएज़ा—आज की रात अन्धेरी है।

फिलिप्स—(हँसते हुए) भागने के लिए यह रात अच्छी है।

लोएज़ा—मैं ने सुना है तुम मिस्टर बारल को अपने साथ ले जा रहे हो?

फिलिप्स—हाँ हमने उसकी नौका चुराई है, तो सोचा कि इसे भी साथ ले चलें। उसका इस स्थान पर रहना हमें अधिक पसंद नहीं। इसलिए यही अच्छा है कि हम उसे अपने साथ ले जाएं और समुद्र में फेंक दें।

लोएज़ा—क्या तुम सचमुच उसे समुद्र में फेंक दोगे?

फिलिप्स—ऐसा ही करना पड़ेगा। (मेयर को सम्बोधित करके) मेयर आपको कोई विशेष सन्देश देना है?

मेयर—मैं अपने अंग्रेज़ मित्रों से केवल यह कहना चाहता हूँ कि फ्राँस जीवित है, पराजय के बाद भी जीवित है। वह मरा नहीं है उस की आत्मा अजेय और अमर है। युद्ध चल रहा है, निरन्तर, अविराम, अदृश्य रूप से, और उस समय तक चलता रहेगा जब तक फ्राँस आक्रमणकारियों को अपने तट से परे नहीं धकेल देता। हम लोग निहत्थे हैं। यदि हम शत्रु का एक सिपाही मारते हैं तो हमारे पचास आदमियों को मार डाला जाता है। हमें सहायता की आवश्यकता है। बड़ी सहायता की नहीं। उसका भी समय आएगा। इस समय हमें छोटे २ टाइम बमों और डाइनामाइट के फ़लीतों की आवश्यकता है जिनको अंग्रेज़ी बमबार नीचे गिरा दें, जिनको हम आसानी से अपनी जेबों में छिपा

सकें, जिन्हें काम में लाना अधिक कठिन न हो।

(एनी द्वार पर एक बार "ठक" करती है। मेयर चुप हो जाता है। गारद के गुज़रने की आवाज़ सुनाई देती है।)

फ़िलिप्स—चुप—(विराम) (तेज़ २ दौड़ने की आवाज़, गोली चलने का शब्द। एनी दो बार ठक ठक करती है)

मेयर—हमारे अंग्रेज़ मित्रों को बता देना कि हम इन परिस्थितियों में शत्रु का सामना कर रहे हैं। न दिन को चैन, न रात को नींद। हमें यह छोटे २ हथियार चाहिएँ जिन से हम शत्रु के यातायात के साधनों को नष्ट कर सकें, उसका जीना दूभर बना दें। वह कोयला यहाँ से बाहर न ले जा सकें, उसके जहाज़ों को आग लग जाय, रेल की पटरियाँ उखड़ जाएं, उसकी सेनाएँ एक स्थान से दूसरे स्थान तक न जा सकें (विराम) फ्राँस की आत्मा जीवित है, फ्राँस की आत्मा जो दासता को संसार की सब से घृणित चीज़ समझती है।

फ़िलिप्स—हम आपके अंग्रेज़ मित्रों तक आपका सन्देश पहुँचा देंगे।

(एनी एक बार द्वार पर "ठक" करती है। सब चुप हो जाते हैं। एनी का प्रवेश)

मेयर—क्या बात है एनी ?

एनी—एक सिपाही इधर आ रहा है। लोएज़ा, मेरे विचार में यह वही सिपाही है।

मेयर—क्या बात है लोएज़ा (विराम) तुम्हें किसी बात का कष्ट है ?

लोएज़ा—नहीं।

मेयर—यह सिपाही कौन है ?

लोएज़ा—शत्रु की सेना में लैफ़्टिनैन्ट है। मुझ से प्रेम जताने आया है।

मेयर—तुम उसके जाल में न फसोगी ?

लोएज़ा—नहीं।

मेयर—लोएज़ा, मैं तुम्हारी कोई सहायता कर सकता हूं ?

लोएज़ा—(सजल नेत्रों से) नहीं।

एनी—तुम इस सिपाही को तो कुछ न बताओगी ?

लोएज़ा—निश्चिन्त रहो (विराम—पग ध्वनि) लो अब तुम पिछले द्वार से निकल जाओ—जल्दी करो, वह आ रहा है।

मेयर—विदा लोएज़ा ! (द्वार खटखटाया जाता है) जल्दी करो।

(द्वार दोबारा खड़खड़ाता है)

(विराम)

(मेयर, फिलिप्स और उसका छोटा भाई पिछले द्वार से बाहर निकल जाते हैं। द्वार फिर खटखटाया जाता है। लोएज़ा एक दम कपड़ा कतरने की कैंची उठा लेती है और द्वार की ओर बढ़ती है।)

लोएज़ा—ठहरो। मैं आ रही हूं लैफ्टिनैन्ट ! (दबे कंठ से) आ रही हूं, लैफ्टिनैन्ट !

सातवाँ दृश्य

मेयर के घर का बड़ा हॉल।

विलियम—कल रात अंग्रेज़ी बमबारों ने कोयले की खान के पास और बाहर देहातों में डाइनामाइट के फ़लीते और टाइम-बम फेंके।

मेजर—और चाकलेट भी। मैं ने दो एक खाए थे। बड़े स्वादिष्ट थे, सचमुच कर्नल।

विलियम—कल से आज सुबह तक पाँच घटनाएँ हुई हैं। सब रेल की पटरियों पर।

लापता हो गया। उसी दिन लोएज़ा के घर में लैफ्टिनैन्ट रौशर की हत्या हुई। किसी ने उसके पेट में कपड़ा काटने की क्रैंची घोंप दी थी। लोएज़ा जंगलों में भाग गई और अब वह शत्रु के गुरीला दस्तों के साथ है। हुजूर मेरा विश्वास है कि उस विद्रोह का लीडर मेयर है और जब तक उसका सिर नहीं कुचला जाता इस प्रदेश में शान्ति और व्यवस्था स्थापित नहीं हो सकती।

मेजर—शान्ति और व्यवस्था ? क्या तुम्हारा विचार है कि इसके पश्चात्, मेयर को बन्दी बना लेने के पश्चात्, शान्ति और व्यवस्था स्थापित हो जाएगी।

विलियम—(सैल्यूट करता है) हुजूर मैं एक सिपाही हूं। मेरा काम रिपोर्ट करना और अपने उच्च अफ़सरों का आदेश मानना है।

कर्नल—कैप्टिन विलियम, तुम ठीक कहते हो। (विराम) मेजर क्या बात है ? तुम थके से लगते हो। क्या रात-भर सोए नहीं ?

मेजर—हाँ, पुल का नक्शा बनाता रहा।

कर्नल—मैं उन बदमाशों का अभी प्रबन्ध करता हूं। कैप्टिन विलियम जाओ मेयर और उसके मित्र डाक्टर दोनों को हिरासत में ले लो।

विलियम—यस सर।

आठवां दृश्य

(मेयर का शयनागार। मेयर रोग शय्या पर पड़ा है। डाक्टर उसके समीप बैठा है।)

मेयर—यह बीमारी और गिरफ़्तारी ! (खाँसता है)

डाक्टर—आप आराम से लेटे रहिए—बातें न कीजिए।

मेयर—अब तो चलने की तैयारी है। आख़िर यह दिन भी (खाँसता है) यह दिन भी आना था। मैं हैरान हूँ उन्होंने तुम्हें क्यों बन्दी बनाया। शायद मेरे बाद वे तुमको ...... (मादाम का प्रवेश)

डाक्टर—आपके बाद ? आप आराम से लेटे रहिए।

मादाम—बात क्या है ? आज आप कैसी बातें कर रहे हैं ? मैं कहती हूँ आप उनसे झगड़ा क्यों मोल ले रहे हैं ? (विराम) मुझे तो कर्नल शाफ्ट बुरा आदमी नहीं लगता और फिर हमें उन लोगों के साथ मिलकर काम करना होगा, नहीं तो वह विपत्ति आएगी, वह विपत्ति आएगी, (मेयर का माथा छूकर) बुख़ार तो अब हल्का है।

डाक्टर—(सान्त्वना देते हुए) हाँ मादाम, मेयर शीघ्र अच्छे हो जाएँगे।

मादाम—मैं अब जाती हूं। मुझे बाहर खिड़कियों पर काले पर्दे लगाने हैं। जब से अंग्रेज़ी जहाज़ों ने हमले करने आरम्भ कर दिए हैं— हमें अब खिड़कियों पर काले पर्दे भी.........(प्रस्थान)

मेयर—(भावुकता पूर्वक) उसे ज्ञात नहीं कि आजीवन उसे अब काले पर्दों में रहना होगा। डाक्टर, कभी-कभी तो मैं बिल्कुल साहस खो बैठता हूँ। मृत्यु का ध्यान आते ही जी चाहता है यहाँ से भाग निकलूँ, शत्रु से क्षमा मांग लूँ, कर्नल के पाँव पकड़ लूँ और गिड़गिड़ा कर अपनी जान छुड़ा लूँ। (खाँसता है)

डाक्टर—परन्तु यह तो कल्पना है। कल्पना और क्रिया में बड़ा अन्तर है।

मेयर—परन्तु डाक्टर, उन बातों की कल्पना करना भी पाप है।

डाक्टर—हम सब मनुष्य हैं।

मेयर—मुझे कुछ पता नहीं है। और मैं तो एक क्षुद्र प्राणी मात्र हूं। यह एक छोटा-सा क़स्बा है। परन्तु मैं सोचता हूं डाक्टर, कि एक छोटे से क़स्बे, एक छोटे से मनुष्य के भीतर भी अग्नि की

वह चिंगारी निहित रहती है जो अवसर पाने पर प्रचण्ड ज्वाला का रूप धारण करके चारों ओर फैल सकती है।

डाक्टर—तुम्हारा अस्तित्व फ्रांस की स्वतन्त्रता का प्रत्यक्ष प्रमाण है। मेयर को कोई बन्दी नहीं बना सकता। मेयर तो एक विचार है जिसका जन्म स्वतन्त्र नागरिकों की आत्माओं में हुआ है। वह अमर है।

मेयर—(सोचते हुए) लोगों को कैसे पता चला कि मुझे बन्दी बना लिया गया है। उन्होंने कोई औपचारिक घोषणा तो नहीं की है ?

डाक्टर—यह बड़े अचरज की बात है मेयर। मैं देखता हूँ कि सत्य को कोई नहीं दबा सकता, झूठा प्रचार, प्रेस, सेना, सेन्सर। सत्य एक ऐसी वस्तु है जो इन सब दीवारों को तोड़कर बाहर आ जाती है और जनता के हृदयों में समा जाती है। कैसी अनोखी वस्तु है यह सत्य।

(एनी का प्रवेश)

एनी—आपने मुझे बुलाया ?

मेयर—हाँ एनी देखो (खाँसता है) देखो (विराम) तुम सब कुछ जानती हो।

एनी—(दुख के स्वर में) हाँ मेयर, जी हाँ मेयर।

मेयर—देखो मादाम को न बताना और मादाम के पास रहना, जब तक .....

एनी—(सिसकियाँ भरते हुए) बहुत अच्छा...मेयर।

(प्रस्थान)

डाक्टर—परन्तु वे तुमको इस बुखार की दशा में कैसे ले जाएंगे ?

मेयर—ये लोग समय के बहुत पाबन्द हैं (विराम) इन लोगों का एक समय है, एक सेना है, एक लीडर है, एक राय है। इसलिए ये समझते हैं कि हम लोग भी इन्हीं की भांति हैं। और ये जब

हमारे लीडर को मार देंगे हमारी सेना को परास्त कर देंगे तो इन्हें विजय प्राप्त हो जायगी। हम न विचार कर सकेंगे, न काम कर सकेंगे, न स्वतंत्र हो सकेंगे। ये नहीं जानते हमारे राष्ट्र के अनेकों सिर हैं। जब एक सिर कट जाता है तो दूसरा सिर सोचने और काम करने लगता है। (खाँसता है)

डाक्टर—ग्यारह बजे तक का समय दिया था उन्होंने। यदि उस समय तक घटनाएँ न रुकीं तो......।

मेयर—तुम्हारा विचार है कि घटनाएँ रुक जायंगी?

डाक्टर—(निराश होकर) अभी तक तो किसी घटना की सूचना नहीं मिली।

मेयर—(आशापूर्वक) अभी ग्यारह भी तो नहीं बजे। (घड़ी की ओर देखता है) डाक्टर याद रखो (खाँसता है) मेरी मृत्यु भी इन घटनाओं को नहीं रोक सकती। मेरा जीवन अब राष्ट्र के हित के लिए एक बाधा है। लोगों को अपना काम करना चाहिए, प्रति पल, प्रति क्षण।

धमाकों का शब्द सुनाई देता है। कुछ क्षणों के पश्चात घंटा ग्यारह बजाता है)

डाक्टर—लोगों ने अपना काम बन्द नहीं किया है।

मेयर—मैं प्रसन्न हूँ डाक्टर, मैं बहुत प्रसन्न हूं।

(आँखें मूँद लेता है)

(कैप्टिन विलियम प्रवेश करता है। लैफ्टिनैन्ट और कुछ सिपाही साथ हैं।)

कैप्टिन विलियम—अभी २ दो घटनाओं की सूचना मिली है, जिसमें हमारी सेना के कर्नल और मेजर मारे गए हैं। मिस्टर मेयर और डाक्टर! मैं सेनापति की हैसियत से तुम दोनों को विद्रोह और तोड़-फोड़ के अपराध में मृत्यु दण्ड देता हूं। सिपाहियो!

इन्हें पकड़ कर ले जाओ और क़स्बे के बड़े चौक में खड़ा करके लोगों के सामने गोली मार दो।

डाक्टर—मेयर को कोई नहीं मार सकता—वह एक विचार है जो इस नगर के बच्चे २ के हृदय में समा गया है।

विलियम—कैप्टिन रसनबर्ग, वायुयानों के दस्ते को तैयार रखो। मैं इस छोटे से नगर की ईंट से ईंट बजा दूँगा। न मेयर रहेगा न यह नगर।

डाक्टर—मेरे भाई, यह कोई छोटा सा नगर नहीं है। यह नगर फ्रांस है।

(पर्दा)

: ११ :

बाल्कनी

मैं जिस होटल में रहता था उसे 'फिर्दौस' कहते थे। यह एक तिमंज़ला मकान था और चील की लकड़ी का बना हुआ था और दूर से भवन की बजाय कोई पुराना जहाज़ सा लगता था। मेरा कमरा बीच वाली मंज़िल के पश्चिमी कोने पर था और इसकी बाल्कनी में से गुलमर्ग का गाफ़कोर्स, नीडूज़ होटल, और देवदार के वृक्षों के बीच घिरे हुए बँगले, और उनके परे खिल्लनमर्ग का ऊँचा मैदान और उससे भी परे 'अलपत्थर' की चोटी स्पष्ट दृष्टिगोचर होती थी। गुलमर्ग की सन्ध्या मुझे बहुत पसन्द है। फिर यहां से तो सन्ध्या-समय का दृश्य बहुत मनमोहक लगता था। इसलिये भी मैंने इसी कमरे में ठहरना पसन्द किया। बहुत से लोग जो बिना सोचे-समझे यूंही कमरे किराये पर ले लेते थे, बाद में मेरी बाल्कनी की ओर ईर्ष्या-भरी दृष्टि से देखते और कई बार मुझ से पूछ कर मेरी बाल्कनी में बैठकर सूर्यास्त के दृश्य का अवलोकन करने आया करते थे। इस तरह मेरा मिलना-जुलना बहुत से लोगों से हो गया जिनमें से कुछ के सम्बन्ध में मैं इस कहानी में लिखूंगा। इन लोगों में बैंकर भी थे और व्यापारी भी, ठेकेदार भी थे और पांच बच्चों वाली माएँ भी, विद्यार्थी भी थे और दृश्यार्थी भी। भांति-भांति के लोग—मरहटे, ईरानी, एँग्लो-इंडियन, डोगरे, पंजाबी,

देहलवी इत्यादि। विभिन्न भाषाएं, विभिन्न वेश-भूषा, विलक्षण बातें, अनोखी मुस्कान, निराले अट्टहास। सृष्टि के सारे नमूने इस बाल्कनी में एकत्रित हो जाते थे। और ये सब लोग वहां के सूर्यास्त का अलौकिक सौन्दर्य देखना पसन्द करते थे। यद्यपि ये लोग—कम से कम उनमें से अधिकांश लोग—रसज्ञता एवं रसिकता से रहित थे, क्योंकि इनके जीवन का अन्तिम और पहला लक्ष्य रुपया था, फिर भी इन में से कई व्यक्ति दो-दो सहस्र मील की लम्बी यात्रा करके गुलमर्ग में सूर्यास्त का दृश्य देखने आए थे। इस मशीनी और महाजनी युग में हर व्यक्ति रुपया चाहता है। पूंजीवाद ने इसके जीवन को कटु, उसकी आत्मा को अपवित्र और उसके मन को मलिन बना दिया है। परन्तु फिर भी उसमें सौन्दर्य के अवलोकन और निरीक्षण की और उसके प्रति श्रद्धा की भावना अभी जीवित है। वह मनुष्य की सृष्टि के किसी कोने में किसी घायल नस की भांति तड़प रही है। नहीं तो सूर्यास्त का दृश्य देखने के लिये इतनी आतुरता क्यों हो ?

वे लोग तो सूर्यास्त का दृश्य देखते थे और मैं उनके चेहरों का निरीक्षण करता था। वही चेहरे जो दिन में उदास, भूखे और भयभीत से दिखाई देते थे, इस समय किसी अदृश्य ज्योति के आलोक से देदीप्यमान हुए दिखाई देते थे। इन चेहरों की अपराधियों जैसी भावना किसी अलौकिक आनन्द में बदल जाती थी। वे सूर्यास्त के सौन्दर्य को ऐसी लोभी दृष्टि से देखते थे जैसे कोई बच्चा अपनी कल्पना में परियों की रानी के महल को देखता है और वह स्त्री जो पाँच बच्चों की माँ थी, और जिसके सुन्दर मुख पर उसके पति की क्रूर भूख ने छाइयां उत्पन्न कर दी थीं, अपने लुटे हुए सौन्दर्य को क्षण भर के लिये दोबारा प्राप्त कर लेती थी। यह कितने सन्तोष और आनन्द की बात है कि मानव के हृदय में अभी तक सौन्दर्य-उपासना की आदिम अग्नि की चिंगारी शेष है। इसके अन्तर का कवि, उसकी कल्पना का शिशु, इसके परिस्तान की रानी अभी तक जीवित है और जब तक वह

जीवित है तब तक समझो मानव भी जीवित है। पूंजीवाद, निर्दय समाज, जागीरदारी, फैसिज़्म, संसार की क्रूर से क्रूर संस्था भी इस चिंगारी को नहीं बुझा सकती। मैं मानव के भविष्य के प्रति निराश नहीं हूँ।

'फ़िर्दौस' अमीर यात्रियों की आंखों में एक सस्ता और घटिया होटल था, परन्तु मेरे लिये फिर भी मँहगा था। परन्तु क्या करता? किसी हिन्दुस्तानी होटल में जगह ख़ाली न थी। विवश होकर यहां आना पड़ा। इस होटल में जितने लोग ठहरे हुए थे, उनमें से आधे से अधिक पाश्चात्य देशों के थे और शेष एशियाई। बैरे एक विलक्षण-सी भाषा बोलते थे जो न अँग्रेज़ी थी और न हिन्दुस्तानी, वरन् दोनों का सम्मिश्रण था। खाना छुरी-कांटों के साथ खाया जाता था, परन्तु प्रायः छुरियां कुन्द मिलती थे और कांटे बिना पालिश के। और शोरबे में हिन्दुस्तानी खानों की भांति लाल मिर्चों की इतनी भरमार होती थी कि बेचारी आयरलैंड की धायाओं और नर्सों का मुँह जलने लगता और वे होटल के बड़े बैरे को इतनी गालियाँ सुनातीं कि मारे खुशी के बैरों की छाती फूल उठती।

होटल का मैनेजर एक कश्मीरी मुसलमान था। नाम था अहदजू। दुबला पतला कश्मीरी, बी. ए. पास, मुख पर निराशा की छाया, आँखों में उदासी-सी। चालीस रुपये वेतन। होटल का मालिक अलीजू नामी एक बढ़ई था, जिसने यह होटल बड़ी कोशिश से जंगलों में से लकड़ियां चुरा-चुरा कर तैयार किया था। स्वयं चोर था, इसलिए मैनेजर को भी चोर समझता था। वह हर रोज़ होटल के हिसाब-किताब की जांच-पड़ताल करता, दूध, मक्खन और शहद अपने हाथ से देता। इस पर भी उसकी तसल्ली न होती, इसलिए और अधिक देख-भाल के लिए उसने एक सिक्ख को नौकर रख लिया। अब पाकिस्तान और ख़ालिस्तान एक दूसरे के निकट रहते हुए एक दूसरे से भयभीत रहने लगे। जांच-पड़ताल अधिक होने से ईमानदारी में हर घड़ी सन्देह रहने लगा

सीधी बातों में छल दिखाई देने लगा। मन स्वयं बेईमानी की ओर झुकने लगा। हर समय चारों ओर से सन्देह की आंधी सी उमड़ती हुई दिखाई देने लगी। आँखों की सुन्दरता, लज्जा और निरीहता नष्ट होगई। आँखों को कनखियों से देखने का अभ्यास होगया। मन में क्रोध होता, उसे कृत्रिम मुस्कान के पर्दे से छुपाने का यत्न किया जाने लगा। होते होते यह देख-भाल और जांच-पड़ताल इस सीमा तक बढ़ गई कि 'भेदिये' और मैनेजर एक दूसरे का पीछा छाया की भाँति करने लगे। परिणाम यह हुआ कि होटल का सारा प्रबन्ध होटल के बड़े बैरे के हाथ में चला गया। भारत का इतिहास 'फ़िर्दौस' में भी अपने आप को दोहरा रहा था।

बड़ा बैरा हर घड़ी मुस्कराता रहता था। विशेष कर 'बख़्शीश' मिलने के समय तो उसकी बड़ी विलक्षण दशा होती थी। उस समय बड़े २ स्टेशनों पर रक्खी हुई वज़न तोलने वाली झिरीदार मशीन याद आ जाती। इधर झिरी में इकन्नी डालो और उधर वज़न वाला टिकट खट से बाहर! बस बिल्कुल यही हाल उस बैरे का था। इधर आपने 'बख़्शीश' उसके हाथ में थमाई, उधर बतीसी हाज़िर! मुझे उसकी मुस्कान से बड़ा प्यार हो गया था और मैं बख़्शीश के इस यंत्रवत् प्रभाव को देखने के लिए बैरे को कई बार 'टिप' दिया करता था। उफ़! किस तेज़ी के साथ वह बतीसी खुलती थी, बिजली की सी तेज़ी के साथ! तोलने वाली मशीन भी इतनी जल्दी काम नहीं करती। जो लोग यह कहते हैं कि मशीन आदमी से ज़्यादा तेज़ रफ़्तार से काम करती है, उन्हें 'फ़िर्दौस' के बड़े बैरे को देखना चाहिए।

होटल के बड़े बहिश्ती का नाम अब्दुल्ला था। वह एक उजड्ड कश्मीरी किसान था। बेढंगी चाल, आँखों के चारों ओर बड़े २ दायरे, लाल २ गालों पर बड़ी २ नीली रगें उभरी हुईं, सामने के दाँत लुप्त। अवस्था भी उसकी साठ वर्ष से कम न थी। उसका एक बेटा था जो बाप के होते हुए भी अनाथ सा लगता था। आयु कोई ११-१२ वर्ष

की होगी। हाथ-पाँव बड़े मैले, घुटनों तक ऊँचा पाजामा, कमीज़ की बाहें फटी हुईं। हां, आंखें कमल की भांति विशाल और चमकदार थीं। बड़ी २ आँखें और अबोध चेहरा, बाल बढ़े हुए और अस्त व्यस्त, गर्दन पर मैल की तहें—एक पवित्र, निरीह जीव जो निर्धनता की कीचड़ में फंसा हुआ था और बाहर न निकल सकता था। इसे सब लोग छोटा बहिश्ती कहते थे। अब्दुल्ला अपने बेटे को प्यार से 'ग़रीब' कहा करता था। अजीब नाम है यह 'ग़रीब'। यह नाम सुन कर मेरे शरीर के रोंगटे खड़े हो जाते हैं। ग़रीबी संसार का सबसे बड़ा पाप है और संसार में किसी भी बाप को यह अधिकार नहीं है कि वह अपने बेटे को ग़रीब कहे। परन्तु शायद अब्दुल्ला एक तथ्य—एक सचाई—बयान कर रहा था। वह अपने बेटे को 'राजा बेटा' कह कर अपने को और संसार को धोखा नहीं देना चाहता था।

होटल में एक और बहिश्ती भी था जिसका नाम यूसुफ़ था। आकृति से वह कुँजड़ा दिखाई देता था। वह बड़े विलक्षण स्वभाव का था। वह हर रोज़ पिटता, फिर भी गाली खाए बिना काम न करता था। इसके अतिरिक्त वह चरस का दम लगाता था और स्त्रियों की दलाली भी करता था। यूसुफ़ छोटे बैरे का बड़ा मित्र था। छोटा बैरा एक गम्भीर व्यक्ति था और लोगों की बड़ी सेवा करता था। 'जी' के सिवा उसके मुँह से कोई शब्द न निकलता था। लबो-लहजे में इतनी चिकनाई थी कि वह बजाय आदमी के वनस्पति घी का टीन लगता था। इतनी भी क्या चाटुकारिता कि जब देखो हाथ जोड़े खड़ा है। बातों में इतनी चापलूसी कि दूसरे आदमी को उसके शब्द सुन कर शर्म आने लगती थी। मैंने ऐसा नरम बोलने वाला, चापलूस, कृत्रिम मनुष्य अपने जीवन में कभी नहीं देखा। यह भी औरतों का दलाल था। परन्तु केवल अंग्रेज़ औरतों या ऐंग्लो-इंडियन छोकरियों की दलाली करता था। कभी-कभार किसी हिन्दुस्तानी फ़िल्म अभिनेत्री का भी काम कर देता था। उसका नाम था ज़मान खां।

उस जहाज़ की आकृति वाले होटल का वर्णन अधूरा रह जायगा यदि मैं यहाँ के एक स्थायी निवासी के सम्बन्ध में कुछ न लिखूँ। यह एक आयरिश बुड्ढा था और दस वर्ष से इसी होटल में रहता था। दाढ़ी के बाल खिचड़ी थे, आइन्स्टाइन का सा सिर, वही उलझे हुए बाल, वही चौड़ा माथा। हाँ, होटों और नाक की बनावट यहूदियों जैसी न थी। नाक के दाएं नथने पर एक छोटा सा मस्सा था जो उसके चेहरे की गम्भीरता को और भी गहरा कर देता था। उसकी आँखों के रंग का मैं कभी ठीक-ठीक अनुमान नहीं लगा सका। कभी तो वे आकाश की तरह नीली दिखाई देने लगतीं और कभी किसी ठहरे हुए पानी की भाँति हरी। और फिर उसके चेहरे पर एक अज्ञात विषाद की सी छाया पड़ी रहती थी। बूढ़े ओबरायन का चेहरा कभी तो इस छाया में बिल्कुल छुप सा जाता, और कभी यह छाया इतनी बारीक हो जाती कि ओबरायन का समस्त अतीत इस हल्के बारीक पर्दे के पीछे से साफ़ झाँकने लगता। ओबरायन खूब पीता था और सदा बढ़िया शराब पीता था। जब वह नशे में मस्त होजाता तो बड़ी बढ़िया बातें करता। सुलझे हुए दार्शनिक व्यंगात्मक वाक्य जो उसके जीवन के निजी अनुभवों और उनके निष्कर्षों से ओत-प्रोत होते थे। वह कभी तो घंटों बातें करता और कभी घंटों चुप रहता। उसे न शिकार का शौक़ था, न औरतों का। और आश्चर्यजनक बात यह है कि वह मांस भी नहीं खाता था। हां, पनीर उसे बहुत भाता था। कहता था, "पनीर के एक टुकड़े पर मैं दस बीस दिन जीवित रह सकता हूं। तुम अभी बच्चे हो। जब मेरी अवस्था को पहुँचोगे तो पता लगेगा कि स्त्री के यौवन में भी वह आनन्द नहीं है जो पनीर के इस टुकड़े में और इस शराब की एक बूंद में। पीयो, और खूब पीयो, और इस गुलमर्ग के सूर्यास्त को देखो जिसके उबलते हुए खून में इस समय पश्चिमी क्षितिज की शोभा दुगनी हो गई है।"...... ओबरायन 'फ़िर्दौस' का दार्शनिक है। यदि कभी गुलमर्ग जाओ तो उससे अवश्य मिलना। वह जीवन की उन वास्तविक-

ताओं और तथ्यों का वर्णन करता है जिन्हें उसने अपने जीवन के घावों से निचोड़ा है। उसके निष्कर्ष रिसते हुए घाव हैं, एक हलाहल विष के धारे हैं। परन्तु इस विष की जल-राशि की लहरों के ऊपर एक ऐसी मुस्कान का पर्दा है कि तुम उससे आकर्षित हुए बिना नहीं रह सकते।

अब्दुल्ला के बेटे को लिखने-पढ़ने का बहुत चाव था। वह उर्दू की वर्णमाला समाप्त कर चुका था और अब उर्दू की पहली पुस्तक पढ़ रहा था। अब्दुल्ला को जब भी अवकाश मिलता वह अपनी कोठरी में जाकर हुक्का पीता, या कभी-कभार जब मुझे फुर्सत मिलती तो बाल्कनी में आ बैठता। उसका बेटा मुझ से पाठ पढ़ता और अब्दुल्ला मुझे अपने जीवन की राम-कहानी सुनाता। यह कहानी उसने टुकड़ों में, कभी कहीं से और कभी कहीं से, आंसुओं और मुस्कराहटों के बीच, नहाने के टब के पास खड़े होकर, खाँसते हुए, दमे के शक्तिशाली रोग से युद्ध करते हुए सुनाई थी। यह कोई रसीली कहानी न थी, न ही कोई बड़ी दुःखद घटना थी। उसमें कुछ आनन्द के क्षण थे और शेष अगणित आंसू। यह एक सीधे-सादे किसान की जीवन-कहानी थी। उसके पास कुछेक बीघे धरती थी। युवावस्था में उसने प्रेम किया था। विवाह भी किया। कई वर्ष जीवन बहुत आनन्द से बीता। जीवन की नौका आराम से बहती रही। फिर कठिनाइयाँ आईं, परन्तु यौवन के गरम लहू ने उन्हें पार कर लिया। मां-बाप के मरने के पश्चात् उसने गाँव के महाजन का ऋण चुकाया और खेतों की उपज बढ़ाने के उपाय सोचने लगा। अपने खेतों के एक भाग में उसने फलदार पेड़ लगाए। मन में उमंगें थीं। अभिलाषा थी कि वह साधारण किसान न रहे, वरन् गाँव का एक धनवान ज़मींदार बन जाए। धन कमाने के लिये उसने महाजन से ऋण लिया, परन्तु लगातार दो वर्ष तक इतनी वर्षा हुई और इतनी बर्फ़ पड़ी कि बाग़ के पौधे न पनप सके। फिर दुर्भाग्य से अकाल पड़ा। धरती बिक गई, बड़ा लड़का मर गया, पत्नी भी उसी अकाल की भेंट हो गई। वह अपने

छोटे और अन्तिम पुत्र को छाती से लगाए २ जगह-जगह घूमा। उसके गालों की लाली उड़ गई, आंखों की चमक लुप्त हो गई। पाँच छः साल इधर-उधर घूमने के बाद वह अपने देश को लौट आया क्योंकि देश की मट्टी हर भूली-भटकी आत्मा को सदा वापिस बुलाती रहती है। अब वह छः साल से इसी होटल में नौकर है। "परमात्मा का लाख-लाख धन्यवाद है, साहब, कि दोनों समय भोजन मिल जाता है। साहब लोग इनाम भी दे देते हैं। यह मेरा इकलौता, अनाथ बच्चा है, ग़रीब, परमात्मा इस को चिरायु करे। यहां इसी तरह पड़ा रहेगा तो बहिश्ती के अतिरिक्त और क्या बन सकेगा? दो अक्षर पढ़ जाएगा तो जीवन बन जाएगा। परमात्मा आपको इस का फल दे! मेरे 'ग़रीब' को पाठ दीजिये, मैं चलता हूँ। विलियम साहब के नहाने के लिये पानी रख आऊँ।"

उफ़! कितना निर्लज्ज है यह विधाता! कैसा साधारण, निरर्थक सा जीवन है यह! फिर किन आशाओं पर आदमी जीवित रहे? लाखों करोड़ों मनुष्यों का यही जीवन है—हर देश में, हर राष्ट्र में। फिर भी मनुष्य ने आत्म-प्रवंचना का एक पर्दा खड़ा कर रखा है जिस के सहारे वह जीवित रहता है। अब्दुल्ला को ही देख लीजिये, कितना दुखी है, जीवन में कोई रस नहीं, परन्तु फिर भी जिये जा रहा है—इस आशा पर कि वही समाज जिसने उसकी सारी अभिलाषाओं और प्रसन्नताओं को पैरों तले मसल कर रख दिया, उसे जगह-जगह ठोकरें खाने पर विवश किया, वही समाज उसके बेटे को पनपने और उन्नति करने का अवसर देगा। परन्तु अब्दुल्ला आख़िर मनुष्य है, जीवन-संघर्ष उसकी घुट्टी, उसके हर साँस, में है। इसलिये लड़े जा रहा है। शाबाश बेटा! लड़े जा, जिये जा, एक दिन तेरा बेटा जवान होगा, उसकी ठुमकती हुई उमंगों और आकांक्षाओं में तू फिर जीवित होगा। उसके यौवन की ताज़गी में, उसके प्रेम की कहानियों में, उसके आनन्द की ऊँची २ लहरों में, तेरे जीवन का प्रेम और आनन्द

फिर तरंगित और जीवित हो उठेंगे।

बाल्कनी के मिलने वालों में से एक सुन्दर जोड़े की स्मृति मन में अब भी शेष है। वे दोनों युवा थे, सुन्दर, स्वस्थ, पढ़े-लिखे। नया-नया विवाह हुआ था, गुलमर्ग में 'हनीमून' मनाने आए थे। इसी लिए गुलमर्ग को देखने की बजाय एक-दूसरे को देखने में अधिक व्यस्त रहते थे। लड़का लड़की की आंखों में आंखें डालकर कहता, "प्राण-प्यारी! सूर्यास्त का दृश्य कितना मनमोहक है!" और लड़की अपना गुदगुदा हाथ उसके कन्धे पर रखकर कहती, "और यह फूलों से सुवासित, सुगंधित वायु? हाय, मैं तो मर जाऊंगी.........।" बस, ये दोनों दिन भर मरते रहते थे। जब देखो वे सूर्यास्त पर मर रहे हैं, चाँदनी पर मर रहे हैं, देवदार के पेड़ों से लगाकर पहाड़ी घास तक पर मर रहे हैं। यह जोड़ा दिन भर मरता था और रात भर जागता था। इनका कमरा ठीक मेरे कमरे के ऊपर था। रात को कभी गिलास टूटने की आवाज़ आती, और कभी चारपाई उलटने की, कभी बिल्लियां गुर्रातीं और कभी कमरे में भाग-दौड़ का शोर होता। ओबरायन कहता, "ये दोनों मूर्ख एक स्वप्न देख रहे हैं। ये नहीं जानते कि इस स्वप्न-संसार के परले सिरे पर एक भयंकर देव भी रहता है।"

मैंने कहा, "बूढ़े महाशय! तुम्हारी बुद्धि क्षीण हो गई है। क्या विवाह करना बुरा है? विवाह होता है, बच्चे पैदा होते हैं। इस स्वप्न के फल स्वरूप मनुष्य जाति की बस्ती में एक नए घर की बढ़ोतरी होती है।"

ओबरायन कहता, "विवाह बुरा नहीं, स्वप्न का टूटना बुरा होता है। और ये स्वप्न बहुत जल्दी टूट-फूट जाते हैं। प्रकृति अपने जाल बिछाती है। इसी लिये तो उसने फूलों में सुगन्ध, हिरन में कस्तूरी और युवतियों में लावण्य भर दिया। और जब प्रकृति का उद्देश्य पूरा हो जाता है तो फूल मुर्झा जाते हैं, हिरन शिकार हो जाते हैं, स्त्रियाँ बूढ़ी हो जाती हैं और......सपने टूट जाते हैं।"

"जिस तरह रात को मेरे हाथ से शीशे का गिलास टूट गया था," लड़की ने मुस्कराकर कहा और कनखियों से अपने प्रेमी को देखने लगी और दोनों ने आंखों-आंखों में किसी रसीली घटना को दोहराया।

मैंने पूछा, "फिर क्या हुआ ?" वे दोनों हँसने लगे। लड़की बोली, "रात का समय था। गिलास टूट गया और पानी बह निकला। फ़र्श लकड़ी का था और नीचे आपका कमरा...... ।"

मैंने कहा—"वह तो ख़ैरियत यूं होगई कि मेरा बिस्तर एक कोने में था......हां, कमरे की दरी अभी तक गीली है।"

"अहा, डार्लिंग ! देखो वह चिड़िया कितनी सुन्दर है।" लड़की ने मुझे टूटे हुए गिलास की भांति व्यर्थ समझकर, अपने पति को सम्बोधित करके कहा और वे दोनों एक दूसरे का हाथ दबाते हुए बाल्कनी से बाहर देखने लगे।

ओबरायन बोला, "सौन्दर्य शाश्वत, अनन्त, अमर नहीं है। बस, मुझे सृष्टि और उसके बनाने वाले पर रह-रह कर यही क्रोध आता है। आख़िर उसने ऐसा क्यों किया है ?"

मैंने कहा, "कौन कहता है कि सौन्दर्य अमर, शाश्वत नहीं है। तुम सौन्दर्य को व्यक्तिगत रूप में देखते हो। यह तुम्हारी भूल है। इस मामले में तुम्हारे विचार बड़े रूढ़िवादी हैं। सौन्दर्य को समष्टि रूप से एक गुण की अभिव्यक्ति के रूप में देखो। फूल सदा मुस्कराते हैं। कस्तूरी-मृग में कस्तूरी सदा महकती है। लड़कियों में लावण्य सदा...... ।" मैंने लड़की की ओर देखकर वाक्य को अधूरा छोड़ दिया। ओबरायन की आंखें गहरी हरी हो गईं।

मैंने कहा, "और फिर इस बात पर ध्यान दो कि सौन्दर्य समय का एक भाग है, उसकी कलात्मक अनुभूति है। जब तक समय नहीं मरता 'सौन्दर्य कैसे मर सकता है ? स्त्री अपनी लड़की में, फूल अपनी कली में, और हिरन अपने नाफ़े में सौन्दर्य को परवान चढ़ता देखता है।"

"और अब्दुल्ला अपने बेटे में," ओबरायन ने व्यंग से कहा।

हम बहुत देर तक चुप रहे। लड़का और लड़की चले गए। फिर भी निस्तब्धता रही। बैरे ने चाय रखदी। हम दोनों चुपके-चुपके चाय पीने लगे।

पहाड़ों पर धुन्ध गहरी हो गई थी। गाफ़ कोर्स पर बदलियों के चंचल हाथ बढ़ते हुए दिखाई दिये। शीघ्र ही वे हमारी बाल्कोनी तक आ पहुँचे और हमारे गालों को छूने लगे।

"बस, गुलमर्ग में यही चीज़ मुझे सब से ज्यादा पसन्द है। यह सूक्ष्म सा स्पर्श। धुन्ध की सफ़ेद अंगुलियां। अपने गांव का सा दृश्य है।" ओबरायन अपनी पुरानी स्मृतियों में खो गया।

फिर थोड़ी देर के बाद वह सहसा कहने लगा, "शराब कभी बूढ़ी नहीं हुई। बस, यही एक चीज़ संसार में अनन्त है, अजर-अमर है। मैंने एक युवती से प्रेम किया था, उसने मुझे ठुकरा दिया। मैंने अपने प्रेम के नशे को वर्षों तक जीवित रखा। फिर यह प्रेम भी बूढ़ा हो गया। मैंने उसे युवा रखना चाहा, परन्तु हर घड़ी उसके चेहरे पर झुर्रियाँ पड़ती गईं और आख़िर में एक दिन वह मर ही गया।"

"और......वह युवती?"

"पता नहीं। होगी कहीं। मैं अब उसे देखना नहीं चाहता। मैं अपने देश को अब नहीं लौटना चाहता। बीस साल पहले मैंने उसे देखा था। वह पयानो पर बैठी हुई एक प्यारी गत बजा रही थी।" ओबरायन धीरे-धीरे सीटी से वह गत बजाने लगा। उसकी आंखें अश्रुपूर्ण हो गईं। बाहर धुन्ध में वह लड़का और लड़की लुप्त होते जा रहे थे।

फ़िर्दौस में प्रेम का ढंग बड़ा विलक्षण है। वहां हर रविवार को टंगमर्ग से नर्सें आती थीं और आयाओं और नाश्ता खिलाने वाली लड़कियों को हर बुधवार को छुट्टी मिलती थी। इस लिये उस होटल में हर बुध और रविवार की रात को खाने और 'पीने' का विशेष प्रबन्ध

होता था। एक तो खाना अधिक तैयार किया जाता, शराब का भी खूब प्रबंध किया जाता और फिर उसी दिन गोरे और अमरीकन फ़ौजी भी न जाने कहां से टपक पड़ते। बिल्कुल बच्चों के से चेहरे। बाह्य कठोरता के होते हुए भी वे मुझे अत्यन्त सरल, अबोध, शिशु जैसे दिखाई देते। पतलूनों की नुकीली तराश, टोपी का तिरछापन और छाती के असाधारण फैलाव के बावजूद वे मुझे बुरे न लगते। उनके चेहरे जैसे कुछ माँग रहे थे, जैसे किसी चीज़ की तलाश में थे, भूखे थे, प्यासे थे, कुछ प्राप्त करना चाहते थे।

ये लोग 'प्रेम' की तलाश में थे। ज़मान खां, जो प्रेम-मंडी का बड़ा व्यापारी था, इनकी आवश्यकताएँ पूरी कर देता था। ढंग यह होता था :—

"वैल बैरा ?"

"यस सर।"

"क्या बाट है ?"

"सब ठीक है। टंगमर्ग से नया मिस साहब आया है। लेकिन, वह चार बजे टंगमर्ग में मेजर साहब के बंगले पर हाज़िर होना मांगता।"

"ओह, सब ठीक है। अम खुद, सुना टुमने, अम खुद पहुंचाएगा।"

एक ढंग यह होता :—

"हैलो डार्लिंग !" वह कहता।

"हैलो स्वाइन !" (सूअर के बच्चे) वह नर्स कहती।

"कम-ऑन !" (आ जाओ)

"यू स्टूपिड ! डोन्ट बी सिल्ली !" (मूर्खता की बात न करो) कम-ऑन ! (अब आ भी जाओ)।

"यू आर चीकी !" (तुम तो अत्यन्त सुन्दर, आकर्षक हो)।

"शट-अप !" (बकवास बन्द करो)।

इस सुन्दर, सभ्य परिचय के पश्चात दोनों देवदार के जंगल में बनफ़शे के फूल चुनने चले जाते।

ओबरायन इन भूखे मस्तों को क्षमा कर देता था। ये बेचारे कुछ दिनों के लिये छुट्टी पर आए थे, इसके बाद फिर लड़ाई के मैदान में लौट जाएँगे। ये सैनिक इन इने-गिने दिनों में ही जवानी का सारा रस निचोड़ लेना चाहते थे; अपनी ख़ाली गोद को सौन्दर्य और प्रेम की सारी मधुर अनुभूतियों से भर लेना चाहते थे; अपनी अभिलाषाओं के संसार को चुम्बनों के शहद से मधुर बना लेना चाहते थे। फिर इसके बाद वही रेतीले मैदान होंगे, वही खाइयां, बन्दूकें और फिर—मौत!

"मैं सिपाही को सदा क्षमा कर देता हूँ। वह एक स्त्री के सतीत्व पर हाथ डालता है परन्तु सैंकड़ों के सतीत्व को बचाता भी है।" ओबरायन का यह वाक्य मुझे अब तक याद है। उन्हीं दिनों बर्मा से आए हुए एक हिन्दुस्तानी ठेकेदार ने मुझे कहा था, "साहब, कैसा सतीत्व और कैसा धर्म! यह सिद्धान्त खाना खाने के बाद सूझता है। अजी साहब, जब हम बर्मा से भागे तो मेरे साथ पूरा कुटुम्ब था। स्त्री थी, लड़कियां थीं, छोटे २ बच्चे थे। सब मार्ग में ही समाप्त हो गए। मैंने स्वयं अपनी आंखों से, अपनी स्त्री और बच्चों को एक एक टुकड़े के लिये तरसते देखा। मेरी युवा लड़कियां पेट की आग बुझाने के लिये उस खूनी सड़क पर अपना धर्म बेचती थीं। सतीत्व! वह आदमी हरामज़ादा है, उल्लू का पट्ठा है जो ख़ाली सतीत्व, ईमान और धर्म में विश्वास रखता है। ये सब सिद्धान्त पेट भरने के बाद सूझते हैं......!"

वह देर तक इसी तरह बकता-झकता रहा था।

ओबरायन के चेहरे पर से जब गम्भीरता की छाया उठती तो वह कहता, "शराब मंगाओ! बस शराब कभी बूढ़ी नहीं होती। शराब कभी पराई नहीं होती, शराब कभी धोखा नहीं देती। वह मानव की भांति दुष्ट और क्रूर नहीं है। खुदा की क़सम, वह कभी क्रूर नहीं होती।"

गहरे नीले आकाश में तारे चमकने लगे। नीडोज़ होटल की पहाड़ी पर सहसा बिजली के बल्बों की पंक्ति देदीप्यमान हो उठी। ऐसा लगा मानों किसी ने बनफ़शे के फूलों की टोकरी सहसा आकाश में उछाल दी। और फिर चाँद पश्चिमी क्षितिज पर, लजाया-सा, संकोच से भरा हुआ सा प्रकट हुआ—उस चन्द्रमुखी मधुबाला की भांति जिसने अपने कमल जैसे हाथों में पहली बार मीना उठाई हो।

कमरा नं० ७ में एक इटैलियन बुड्ढा और उसकी लड़की मेरिया रहते थे। मेरिया दिन भर अपने कमरे में पयानो बजाती और शाम को अपने बाप के साथ सैर करने जाती। मेरिया की आकृति में पूर्वीयाईपन था। शायद इसी लिए मैं उसे इतना अधिक चाहता था। बूढ़ा इटैलियन यहां २५-३० वर्ष से रहता था। बाज़ार में उसकी एक दुकान थी जहाँ वह विलायती भोजन के डिब्बे आदि रखता था। उस के पास पुस्तकों का एक छोटा सा पुस्तकालय भी था जिसमें अधिकतर अश्लील उपन्यास, जासूसी कहानियाँ, भूतों की कहानियाँ, और इसी प्रकार का साहित्य था जो सिपाहियों को और धनिकों को बहुत पसन्द होता है। वे लोग इसके पुस्तकालय में से किराये पर पुस्तकें पढ़ने के लिये ले जाते। बूढ़े इटैलियन को छड़ी बनाने का बहुत शौक़ था। और वह जंगल की लकड़ियों से ऐसी सुन्दर छड़ियाँ बनाता था कि वे गुलमर्ग की सौग़ातों में गिनी जाने लगीं। लोग उन्हें अच्छे दामों में ख़रीद कर बड़े चाव से अपने देश को ले जाते थे। इसके अतिरिक्त उसे 'कन्सरटिना' बजाने का भी बहुत चाव था। रात के समय वह खाना खाकर 'कन्सरटिना' बजाता और गाना गाता, और मेरिया पयानो बजाती। मेरिया पयानो बहुत बढ़िया बजाती थी। युद्ध से पहले वह कई उच्च अंग्रेज़ी घरों में पयानो सिखाने जाया करती। युद्ध प्रारम्भ होते ही ये दोनों, बाप-बेटी, प्रतिबंध में ले लिए गए। बाद में जब उन्होंने यह प्रमाणित कर दिया कि वे कितने ही वर्षों से भारत में ही रहते आए हैं और उन्होंने इसी देश को स्थायी रूप से

अपना देश मान लिया है तो उन्हें छोड़ दिया गया। फिर भी इन पर कड़ी निगरानी रखी जाती थी। युद्ध से पहले बूढ़े की दुकान का नाम 'इटैलियन स्टोर' था। युद्ध प्रारम्भ होते ही उसने यह नाम बदल कर 'ऐन्टी-फ़ासिस्ट स्टोर' रख दिया था। प्रतिबंध और उस से छूटने के पश्चात् स्टोर का नाम 'अलाइड स्टोर' रख दिया। वास्तव में इस बूढ़े को राजनीति से कोई प्रयोजन न था। युद्ध प्रारम्भ होने के पश्चात् मेरिया का अंग्रेज़ों के घरों में आना-जाना बन्द हो गया और पयानो सिखाने से जो आमदनी हो जाया करती थी वह बन्द होगई। उधर उनकी दुकान की आमदनी भी कम हो गई थी, इस लिये उनकी दशा कुछ चिन्ताजनक थी। ये सब बातें देखकर 'फ़िर्दौस' के छोटे बैरे ज़मानखां ने मेरिया पर अपना जाल फैंका था, परन्तु वह उसके हत्थे नहीं चढ़ी। कोई-कोई ग़रीब आदमी बड़े ढीठ होते हैं और बड़ी कठिनाई से क़ाबू में आते हैं। मेरिया इन्हीं 'कठिन' शिकारों में से थी। ज़मानखाँ उस के कारण बहुत व्याकुल था। होटल के बड़े बहिश्ती अब्दुल्ला को इस कारण मेरिया और उसके बाप के प्रति बड़ी सहानुभूति थी—क्योंकि वह स्वयं एक लुटा हुआ किसान था। वह अपने अन्दर एक घायल हृदय रखता था, इसी कारण उसकी ज़मानखाँ और छोटे बहिश्ती से लड़ाई हुई क्योंकि वे कमरे नं० ७ का कार्य ध्यान से न करते थे। ज़मानख़ाँ तो कमरा नं० ७ का काम करने की बजाय उल्टा लड़की को परेशान करता था। अब्दुल्ला लड़ाई में बुरी तरह पिटा, उसके हाथ-पावों में काफ़ी चोटें आईं। मैनेजर ने उसे अलग डाँटा, क्योंकि कमरा नं० ७ की देख-भाल ज़मानख़ाँ और यूसुफ़ के ज़िम्मे थी। फिर अब्दुल्ला को उनके काम में हस्तक्षेप करने का क्या अधिकार था?

मेरिया मुझे पसन्द थी। उसका प्रभात का सा सौन्दर्य, कमल की भाँति लावण्यपूर्ण मुख, आँखों का शिशुत्व, शरीर के कलात्मक मोड़, होटों पर खेलती हुई हल्की सी मुस्कान। परन्तु मेरिया सदा गम्भीर-सी रहती थी। उसकी गम्भीरता मुझे बहुत बुरी लगती थी। मैं चाहता

था कि यह लड़की गम्भीर न रहे। इन निष्पाप, अबोध, पवित्र आँखों में चञ्चलता खेलने लगे, इन कमल की पत्तियों पर हँसी की तीतरियाँ उड़ने लगें, इस उज्वल मुस्कान में चञ्चलता, शरारत की बिजली तड़प उठे, उस के सारे शरीर में एक ऐसी थरथरी आ जाए कि उसके अस्तित्व का कोना २ जाग उठे और उसके जीवन का बहाव किसी बरसाती नदी की भाँति उमड़ता हुआ दिखाई देने लगे।

मेरिया एक दिन पयानो पर एक अत्यन्त मधुर धुन बजा रही थी। मुझ से उस दिन न रहा गया। मैंने पास जा कर कहा, "या तो तुम निरी मूर्ख हो, भावना-हीन, अनुभूति-हीन, और या...!"

"या ? हाँ कहो।"

"या तुम लड़की के भेस में 'रास्पुटिन' हो। तुम्हारी इस धुन को सुनकर मुझ जैसे कूढ़-मग़ज़ एशियाई का भी जी नाचने को चाहता है। और एक तुम हो कि बुझे हुए बल्ब की भाँति ठस बैठी हो। क्या बात है आख़िर ? उठो, भागो-दौड़ो, नाचो—यहाँ तक कि तुम्हारे अस्तित्व का कण-कण गतिवान हो उठे और तुम्हारे शरीर का एक-एक अंग थक कर चूर-चूर हो जाए।" यह कह कर मैंने उसे हाथों से पकड़ कर पयानो पर से उठा दिया और तेज़ी से नाचते हुए कमरे के दो-तीन चक्कर लगाए। फिर मैं सहसा ठहर गया। अब वह मेरी बाहुओं के घेरे में थी। मैंने उसके होंट चूमते हुए कहा, "इस युद्ध के सम्बन्ध में तुम्हारे क्या विचार हैं ?"

उसने अपने आपको मेरे हाथों के घेरे से छुड़ाकर मेरे मुँह पर एक हल्का सा थप्पड़ लगाया और बोली, "तुम बड़े जङ्गली हो।"

मैंने कहा, "मैं यही क्रोध देखना चाहता था। मुझे तुम्हारी विषादपूर्ण मुस्कान से बड़ी चिढ़ है। तुम्हारी बातें और व्यवहार इटैलियन लड़कियों जैसे नहीं हैं – वह पागलों का सा जोश, वह समय-असमय हँसना, हर समय उछल-कूद। वह सब कुछ तुम में नहीं है। परमात्मा की सौगन्ध, तुम युवती नहीं हो, संग-मरमर का बुत हो।

और तुम अपने जीवन, अपनी आत्मा और अपने मन पर इस भारी गाम्भीर्य का मोटा पर्दा जान-बूझ कर डाले हुए हो ताकि लोग तुम्हारा रोब मानते रहें—यू रास्पुटिन गर्ल, इधर आओ, मेरे पास बैठो।"

वह कहने लगी, "जब तुम मेरी अवस्था को पहुँचोगे तो तुम्हें पता लगेगा।"

मैंने आश्चर्य से कहा, "मैं तो तुम से दस वर्ष बड़ा हूँ!"

उसने कहा, "मेरा तात्पर्य वर्षों से नहीं वरन् मानसिक अवस्था से था। वास्तविक आयु वही होती है। तुम वर्षों में मुझ से दस वर्ष बड़े होगे। परन्तु तुम्हारा मस्तिष्क, तुम्हारी बुद्धि, तुम्हारा व्यवहार मुर्ग़ी के एक छोटे चूज़े की तरह ही है।"

"अच्छा, तो जैसे मैं एक चूज़ा हूँ?" मैंने क्रोध से उसकी कमर में हाथ डाल कर कहा।

"एक कच्चा चूज़ा!" यह कहकर वह मुस्कराई। वही विषादपूर्ण, चिन्ता-ग्रस्त मुस्कान!

मैंने पूछा, "इस युद्ध के सम्बन्ध में तुम्हारा क्या विचार है?"

वह कहने लगी, "युद्ध?...युद्ध?...तुम्हारा चुम्बन बहुत अच्छा था। युद्ध बहुत बुरी चीज़ है। मैं एक लड़की हूँ। मैं पुरुष के चुम्बन को समझ सकती हूँ, उसको वध कर डालने की भावना को नहीं समझ सकती। यह खून खच्चर क्यों होता है।...मेरा भाई इस समय सैनिक क़ैदी है।" उसकी आँखें गीली हो गईं।

मैंने कहा, "क्षमा करना, यह युद्ध तो तुम्हारे फ़ैसिस्टों ने आरम्भ किया है।"

वह कहने लगी, "मैं फ़ैसिस्ट नहीं हूँ। न ही मेरा भाई फ़ैसिस्ट है। मेरा बाप छड़ियाँ बनाता है और रात को कन्सरटिना पर गाना पसन्द करता है। मुझे पयानो से प्रेम है। मैंने कभी राजनैतिक बातों के सम्बन्ध में नहीं सोचा। राजनीति की ओर से मैं सदा उदासीन और अनभिज्ञ सी रही हूँ। मुझे फ़ैसिज़्म पसन्द नहीं, जब मेरा जन्म

हुआ तो वरसाई की संधि पर हस्ताक्षर हो चुके थे और हिन्दुस्तान में ही मेरा जन्म हुआ था। मुझे मसोलिनी के प्रति कोई श्रद्धा नहीं। उस ने तो मेरा पयानो सिखाने का काम भी बन्द करा दिया।" उस की आँखें डबडबा आईं।

मैंने कहा, "तुम तो इस तरह बोल रही हो जैसे किसी पुलिस आफ़िसर के सामने बयान दे रही हो।"

वह बोली, "मुझ से तो सभी पुलिस-आफ़िसरों का सा व्यवहार करते हैं। मेरे लिये यह नई बात नहीं है। परन्तु, वास्तव में दोष हमारा ही था। हम लोग आनन्द के गीत गाते रहे, कन्सरटिना बजाते रहे और राजनीति की ओर से उदासीन हो गए। हमने फैसिस्टों को मन-मानी कार्यवाही करने का अवसर दे दिया...।" उसका साँस रुकने लगा।

मैंने उसकी ठोड़ी छूकर कहा, "अच्छा चलो जाने दो...यह अन्तिम युद्ध नहीं है। यदि हम लोग पचीस-तीस वर्ष और जीवित रहे तो एक और युद्ध देखेंगे—इससे कहीं अधिक भयानक और घातक युद्ध। यह युद्ध फैसिस्टों का तो शायद विनाश कर देगा, परन्तु पूर्व और पश्चिम की पेचदार गुत्थियों को न सुलझा सकेगा। और न ही आज का संसार समाजवाद के सिद्धान्तों पर खड़े होने वाले जगत् को जन्म दे सकेगा जिसके बिना भूख, बेकारी और शिक्षा के अभाव का नाश नहीं हो सकेगा। इसलिये आओ, बीथोवन का कोई प्यारा-सा, मीठा-सा राग बजाओ ताकि इस जीवन के संकट और अपने आदर्शों की दूरी का दुख कुछ देर के लिये दूर हो जाए।"

मेरिया ने अपने आँसू पोंछ डाले और पयानो बजाने लगी।

चाँदनी रात थी। मैं और ओबरायन खाना खाने के बाद बाल्कनी में बैठे हुए अपने कल्पना-जगत् में घूम रहे थे। मैं सोच रहा था कि 'अल्पत्थर' की झील के बीच में बरफ़ के ग्लेशियरों से घिरा हुआ एक सुन्दर महल हो और उसमें मेरिया हो, और उसके बजाने के लिये

चाँदी का एक बहुत सुन्दर पयानो हो और मेरिया के वस्त्र सेब के फूलों के हों...और मेरिया और मैं.. बस और कोई न हो...उल्लू कहीं का। लोग भूखे मर रहे हैं, आटा रुपये का दो सेर बिक रहा है, और आप सोच रहे हैं कि एक चाँदी का पयानो हो, झील के बीच में एक महल हो, यह हो, वह हो...बस यही दुख है कि ये सुन्दर सपने इसी तरह सहसा टूट-फूट जाते हैं। परन्तु आदमी ऐसे सपने देखता ही क्यों है? और आदमी से आपका क्या तात्पर्य है? अब्दुल्ला भी तो आदमी है। अब्दुल्ला ने भी कभी ऐसे स्वप्न देखे थे, और अब भी अपने बेटे के लिये दिन-रात सपने देखता रहता है। मानव को यह सपनों का संसार क्यों प्यारा है? और क्यों वह इन सपनों को साक्षात्कार नहीं कर लेता? सूर्य, चाँद और वायु की भांति यदि धरती और उसकी सारी उपज भी सब मनुष्यों के लिये समान रूप से उपलब्ध हो जाए तो हर घर इन सुन्दर सपनों वाला जगमगाता हुआ एक महल बन जाए। फिर मनुष्य-समाज ऐसा क्यों नहीं करता? वह क्यों सारा ऐश्वर्य स्वयं ही भोगना चाहता है? वह समाजवादी क्यों नहीं है? क्या उसमें इतनी सी भी बुद्धि नहीं है कि इस छोटी सी बात को समझ ले?

ओबरायन सिगार झाड़ते हुए बोला, "हैनरी फोर्ड का लड़का मर गया है।"

मैंने पूछा, "फिर? इससे मोटरों के व्यापार पर क्या प्रभाव पड़ेगा? शहतूत के पेड़ों पर फल लगने बन्द हो जायंगे क्या?"

ओबरायन बोला, "नहीं, वास्तव में मैं इस बात पर विचार कर रहा था कि वह हैनरी फोर्ड का इकलौता बेटा था। हैनरी फोर्ड अमरीका में पूंजीवाद का द्योतक है। अब मैं सोचता हूँ—अनन्त पूंजी का स्वामी फोर्ड प्रसन्न था? प्रसन्न है? प्रसन्न रहेगा? आख़िर ये धन-दौलत के ढेर क्यों! इनका उद्देश्य ही क्या है? जबकि फोर्ड दिन भर में दो बिस्कुट और आध पाव दूध से अधिक नहीं पचा सकता?"

मैंने कहा, "हैनरी फोर्ड बहुत बड़ा आदमी है। वह इतना भारी

परिश्रम करता है कि कुछ खा नहीं सकता।"

ओबरायन बोला, "माउन्ट एवरेस्ट भी बहुत बड़ा है। महानता दोनों में है—हैनरी फोर्ड में भी और माउन्ट एवरेस्ट में भी। परन्तु फोर्ड की महानता कृत्रिम है, अप्राकृतिक है। उसकी स्थिति एक क्रूर डाकू की सी है। माउन्ट एवरेस्ट का आकर्षण एक बच्चे का सा है जो सफेद बर्फ पर खेल रहा हो। उसकी महानता अमर है, अनन्त है।"

मैंने पूछा, "गांधी के सम्बन्ध में तुम्हारा क्या विचार है?"

ओबरायन बोला, "बहुत समय तक मुझे काले आदमियों से घृणा रही। अब भी कभी २ यह घृणा जाग उठती है। मुझे इनका रंग पसन्द नहीं। इनकी अपने को छोटा, शक्तिहीन, व्यर्थ समझने की भावना पसन्द नहीं। इनकी चापलूसी की आदत पसन्द नहीं। मेरे विचार में इनके अन्दर बिल्ली की सी चालाकी और लोमड़ी का सा धोखा पाया जाता है। और हब्शियों को तो मुद्दतों तक मनुष्य समझने से इन्कार करता रहा। गांधी काला आदमी है, वह कभी सफेद आदमी का मित्र नहीं बन सकता। कुछ लोग उसे ईसामसीह की भांति पवित्र, निर्दोष, उज्ज्वल समझते हैं। परन्तु मैं इस बात को नहीं मानता। मेरा ख्याल है कि वह सफेद जातियों के लोगों का कट्टर शत्रु है।"

मैंने कहा, "वह तो केवल यह चाहता है कि भारत में भारतीयों का ही राज्य हो।"

ओबरायन बालकनी पर झुक गया और बोला, "सम्भव है मेरे विचार तास्सुब से भरे हुए हों। आख़िर मैं भी तो एक सफ़ेद जाति से सम्बन्ध रखता हूँ। परन्तु, इस समय इस मामले ने हमें बड़ी विकट परिस्थिति में डाल दिया है। हिन्दुस्तान भर में इस समय एक आग सी फैली हुई है और यह अशान्ति हमें जापानियों का मुक़ाबला करने से रोक रही है।"

ठीक उसी समय ज़ोर से बिगुल बजने की आवाज़ आई। और

साथ ही बहुत से घोड़ों की चाप। अंग्रेज़ घुड़सवारों का एक दस्ता हमारी बाल्कनी के नीचे से निकल कर जा रहा था। ये लोग पिस्तौलों और राइफ़लों से लैस थे। आगे-आगे दो अंग्रेज़ बिगुल बजा रहे थे।

यह क़ाफ़ला बाल्कनी के नीचे से गुज़रता हुआ गाफ़कोर्स की ओर चला गया।

मैंने कहा, "अविश्वास से अविश्वास उत्पन्न होता है। यह जीवन का एक सिद्धान्त है। अंग्रेज़ों को हिन्दुस्तानियों की गणतन्त्रात्मक भावनाओं पर विश्वास नहीं और हिन्दुस्तानियों को अंग्रेज़ों की सहानुभूति और सद्भावना पर। अब देखिये, यहां गुलमर्ग में कोई दंगा-फ़िसाद नहीं। फिर भी ये लोग हर रोज़ रात के समय नियमपूर्वक चक्कर लगाते हैं।"

सक्युलर रोड की ओर से वह युवक जोड़ा चला आ रहा था। चान्दनी में नहाता हुआ, हृदय आल्हाद से परिपूर्ण, उमंगों से व्याप्त। नीचे की मंज़िल में एक लंकाशायर की रहने वाली मिस जॉयस नामक अंग्रेज़ लड़की अपने देश का एक लोक-गीत अत्यन्त उदास लहजे में गा रही थी। उसका नया यार शराबी लहजे में बार-बार कह रहा था, "डार्लिंग! मैं भी लंकाशायर का रहने वाला हूँ। डार्लिंग! मैं भी लंकाशायर का रहने वाला हूँ।"

चाँदनी में नहाती हुई चन्द्रमुखी को अपने आलिंगन में ले कर युवक पति सड़क पर खड़ा हो कर वहीं अपनी प्रेयसी को चूमने लगा।

निचली मंज़िल में नर्स सहसा रोने लगी "मैं घर जाना चाहती हूं, डार्लिंग बॉए, मैं घर जाना चाहती हूँ।"

ओबरायन अपनी ठेठ दार्शनिक शैली में कहने लगा, "मनुष्य अभी अपने भौगोलिक प्रेम के बन्धनों से मुक्त नहीं हुआ। गांधी हिन्दुस्तानी है, उसे हिन्दुस्तान से प्रेम है। यह नर्स लंकाशायर की रहने वाली है, इसे लंकाशायर से प्रेम है—यद्यपि सच बात यह है कि

गुलमर्ग की तुलना में लंकाशायर......।" वह सिर हिलाकर चुप हो गया।

मैंने कहा, "परसों वकीमल की दुकान पर मेरी भेंट एक अंग्रेज़ दर्ज़न से हुई। वह इंग्लैंड की लेबर-पार्टी की सदस्या थी। वह भी तुम्हारी तरह गांधी को बुरा-भला कह रही थी। कहती थी, अब गुलमर्ग में भी दंगा होगा और यही लोग जो आज हमें शहद, शलग़म, डबल रोटी और आलू बेचने आते कल हम पर लाठियों और छुरियों से आक्रमण करेंगे। फिर वह मुस्करा कर कहने लगी, "यह अधिक अच्छा होगा कि मैं उन लोगों के हाथों मारी जाऊँ जो मुझे जानते हैं। मुझे अपरिचित लोगों के हाथों मरना अच्छा नहीं लगता।"

ओबरायन बोला, "तुम ने उसका व्यंग्य देखा?"

मैंने कहा, "यह व्यंग्य बिल्कुल अनुचित था। गांधी किसी अंग्रेज़ का वध कराना नहीं चाहता। और फिर उस दर्ज़न को जो लेबर-पार्टी की सदस्या थी, हिन्दुस्तानियों से इतना भय क्यों लग रहा था? यह इतना अविश्वास क्यों? क्या इसमें अंग्रेज़ों के अपने दोषों और पापों की अनुभूति सम्मिलित नहीं है?"

नीचे अब नर्स ज़ोर-ज़ोर से चिल्ला रही थी, "मैं लंकाशायर जाना चाहती हूँ, सिल्ली बॉए! मैं लंकाशायर जाना चाहती हूँ डार्लिंग बॉए!"

इतने में सहसा अब्दुल्ला का लड़का भागता हुआ आया और जल्दी २ कहने लगा, "बाबू जी, न जाने अब्बा को क्या हो गया है? अभी भले-चंगे थे, बैठे हुक्का पी रहे थे। फिर खांसने लगे और फिर एकदम चुप हो गए। मैंने कहा, अब्बा, अब्बा! मगर वे बोले नहीं। वे बोलते ही नहीं। बाबू जी! ज़रा देखो तो...।"

मैं भागा-भागा नीचे गया। अब्दुल्ला अपनी कोठरी में मरा पड़ा था। आंखों की पुतलियां ऊपर को चढ़ गई थीं—सपनों की प्रतीक्षा

करते २। हाय! कितनी निराशा भरी थी उन आंखों में! ये सपने कभी सच्चे नहीं होते!!

इतने में मैनेजर कोठरी तक भागा हुआ आया। उसने मेरी या अब्दुल्ला की ओर देखा तक नहीं। 'ग़रीब' को देख कर बोला, "मेजर साहब के लिये गरम पानी चाहिए। जल्दी टब भर दो।" और वह भागता हुआ वापिस चला गया।

'ग़रीब' ने अपनी वर्णमाला धरती पर रख दी और बाल्टी उठाने लगा।

"मेरे अब्बा को जगा दीजिये," उसने निराशापूर्ण लहजे में, बड़ी विनम्रता से कहा। "मैं मेजर साहब के लिये पानी रख आऊं।"

अब्दुल्ला आज ही क्यों मरा? ऐसी सुन्दर चाँदनी रात में! वह युवक जोड़ा अभी तक गुलमर्ग की चाँदनी में नहा रहा था। वायु में जंगली फूलों की महक भरी हुई थी। क्या अब्दुल्ला आज से कुछ वर्ष बाद न मर सकता था? शायद उसका बेटा कुछ पढ़-लिख कर उसकी कल्पना के सपने सच्चे कर देता। और फिर यह कौन सा तरीक़ा है मरने का कि साहब लोगों के लिये पानी की बाल्टियां भरते २ मर गया। क्या वह अपने खेतों में, अपने बाग़ीचे में, अपनी मिट्टी के घर में न मर सकता था? मैं पूछता हूँ यह कैसा मज़ाक़ है? इस तरह मरने का उसे क्या अधिकार था, क्या आवश्यकता थी? वह क्यों इस तरह भूखों मरते-मरते एड़ियाँ रगड़ते-रगड़ते, झूठे सपने देखते २ मर गया। संसार में ये लाखों-करोड़ों अब्दुल्ला रात-दिन इस तरह क्यों मरते हैं? यह कैसी सृष्टि है, कैसी प्रभुताई है?

फ़िर्दौस में देखे हुए कुछ अजीब से चेहरे याद आ रहे हैं। एक सिख और उसकी सुन्दर पत्नी गुलमर्ग देखने आए और दो दिन के बाद इसलिए वापिस चले गए कि गुलमर्ग में पहाड़ों के सिवाय और कुछ देखने को न था। सरदार की पत्नी ठोड़ी पर अंगुली रखकर बड़े नख़रे से कहने लगी, "ऐ है! यहां क्या रक्खा है? बस, पहाड़ ही

पहाड़ हैं। मुझे तो कश्मीर तनिक भी अच्छा न लगा। यहां है ही क्या? पहाड़ ही पहाड़!"

एक बूढ़ा पैन्शनर वज़ीर और उसके साथ एक ग़रीब अंग्रेज़ पादरी, जो फ़ौज में नौकर था—सरकारी फ़ौज में ईसाई-धर्म का प्रचारक। फिर भी वह इस विचार से अपने को हीन और क्षुद्र समझता था कि वह एक पादरी-मात्र है। वह एक बड़ा व्यापारी, सैनिक आफ़िसर, अभिनेता अथवा बड़ा पादरी क्यों नहीं बना? पादरी! कितनी वि[illegible]ता थी उसकी आँखों में! वे आकुल-आतुर आँखें जिनमें से निराशा फैली पड़ती थी!

बूढ़ा वज़ीर हर समय अपने लड़के के सम्बन्ध में कहता रहता जो उस समय स्कॉटलैंड में था और जिसका हिन्दुस्तानी होते हुए भी स्कॉच के घर पालन-पोषण हो रहा था। बूढ़ा वज़ीर बड़े गर्व के साथ इस बात को अपने होटल के मिलने वालों के सामने कहता था और इस बात को दोहराते न थकता था—"जमाल मेरा बेटा है। जमाल स्कॉटलैंड में है। वह एक स्कॉच के घर में रहता है।"

इसके अतिरिक्त उसमें एक बुरी आदत भी थी और वह यह कि मेरी बालकनी में मेरी आज्ञा के बिना ही आ बैठता था। फिर वह मेरा बाथ-रूम भी प्रयुक्त करने लगा। एक दिन मैंने चिढ़कर कहा, "साहब, यह बालकनी और बाथ-रूम मेरी इजाज़त के बिना प्रयुक्त नहीं कर सकते।"

"क्यों?" उसने भौंहें कसकर बड़े क्रोध में पूछा।

"इसलिये कि जमाल बेशक आपका बेटा है और वह स्कॉटलैंड में है, परन्तु जब तक वह भला आदमी यहां आए, मैंने आपको आपके पादरी दोस्त के साथ इस बाल्कनी से नीचे फेंक देने का संकल्प कर लिया है।"

"परन्तु शायद आप मुझे जानती नहीं!" उसने और भी भड़क कर कहा। "यहां के सब लोग, सब बड़े २ आदमी मेरे मित्र हैं। मैं वज़ीर

रह चुका हूँ, और वायसराय बहादुर का अतिथि भी। मैं आपको जेल भिजवा सकता हूँ। आप किससे बातें कर रहे हैं ? मेरा लड़का... ।"

मैंने धमकी के तौर पर घूँसा दिखाते हुए कहा, "अच्छा हो कि आप भी स्कॉटलैंड चले जाएं। कम से कम बाल्कनी की तरफ़ अब कभी न आएं। नहीं तो..."

...के पाँच-छः मुलाक़ाती तमाशा देखने के लिये इकट्ठे हो गए। वज़ीर साहब ने उनको सम्बोधन करके कहा, "वाह ! यह भी कोई बात है, मेरा कोई इस तरह अपमान करे। मैं वज़ीर रह चुका हूं और मेरा लड़का... ।"

पादरी उसे खींचकर एक ओर ले गया।

एक हिन्दुस्तानी लड़की आई थी—कमरा नं० ४२ में। न वह सिनेमा-अभिनेत्री लगती थी, न स्कूल की अध्यापिका, न वेश्या, न विवाहिता। परन्तु फिर भी अकेली आई थी, और जितने दिन गुलमर्ग में रही अकेली रही, और वापिस भी अकेली गई।

ओबरायन कहने लगा, "इस लड़की को देखकर मेरे मन में अपनी प्रेयसी की स्मृति जागृत होने लगी है।" बाल्कनी के कारण मुझे इससे भी मुलाक़ात करने का अवसर प्राप्त हुआ। ओबरायन ने उससे पूछा, "क्या पिछले जन्म में आप किसी आयरिश घराने में उत्पन्न हुई थीं ?"

उसने अत्यन्त भोलेपन और सीधे स्वभाव से उत्तर दिया, "मुझे तो याद नहीं।"

हाय, क्या भोलापन था ! कितनी प्यारी सरलता थी ! ओबरायन का बुरा हाल हो गया। कहने लगा, "हो न हो, यह वही मेरी प्रेयसी है जो अब एक हिन्दुस्तानी लड़की के रूप में मुझे धोखा देने के लिये आई है। यह कुछ दिन और यहां रही तो मैं निःसन्देह पागल हो जाऊँगा। मेरा सारा दर्शन और ज्ञान धरा रह जाएगा। 'मुझे तो याद नहीं !' हाय, हाय !

परमात्मा की यही कृपा हुई कि कुछ ही दिनों के पश्चात् वह वापिस चली गई। तब ओबरायन की जान में जान आई।

बाल्कनी में एक सुहानी दोपहर। ठंडी हवा, सुहाती, मीठी २ धूप। प्लेटों में सेब और मिस्त्री आलूचे, मेरिया की सुनहरी बाहें और कलियों की भांति कोमल अंगुलियां। मेरिया कहने लगी, "वह पिकनिक तुम्हें याद है जब हम दोनों ने फ़ीरोज़पुर नाले में मछलियां पकड़ने का असफल प्रयत्न किया था ..?"

"और 'फ़िशरीज़' के विभाग के एक अफ़सर ने हमें बिना आज्ञा मछलियाँ पकड़ने के अपराध में पकड़ना चाहा था।" मैंने उत्तर दिया।

उसने एक और आलूचा उठाते हुए कहा, 'मेरा तात्पर्य यह है कि वह पिकनिक बुरी तो न थी। अब फिर कभी चलो। और इस बार हम फ़िशरीज़ विभाग से मछलियां पकड़ने की आज्ञा भी ले लेंगे।"

मैंने कहा, "मुझे तो उस पिकनिक में केवल अख़रोटों का तिल्ला पसन्द आया था। या फिर बेदे-मजनूँ का झुंड, जहां नाले का पानी भी सोया हुआ सा लगता था और बेद की शाखाएं पानी पर झुकी पड़ी थीं।

"और चुनार के पत्तों का रंग शराबी था," मेरिया ने स्वप्नमय आवाज़ में कहा।

"बिल्कुल तुम्हारे होंटों जैसा," मैंने चञ्चलता से कहा।

"बच्चे हो। बस मिठाई देखकर ललचा जाते हो। तुम्हें प्रेम करना नहीं आता। मेरिया ने एक गम्भीर मुस्कान के साथ कहा। "शायद इसीलिये तुम मुझे इतने पसन्द हो।"

बहुत देर तक हम दोनों चुप रहे।

"फिर, युद्ध के बाद मैं अपने देश को लौट जाऊँगी। वहाँ समाजवादी पार्टी में सम्मिलित हो कर राजनैतिक कार्य करूंगी। पयानो बजाने से काम न चलेगा। यह युद्ध समाप्त हो जाए, फिर हम सब

मिलकर पूरा २ प्रयत्न करेंगे कि युद्ध फिर कभी न हो। ठीक ना ?"

मैंने कहा, "मुझे भी साथ लेती चलोगी ?"

"अवश्य," उसने पुलकित हो कर कहा। हमारा गाँव लम्बार्डी में है। वहां अंगूर की बेलें हैं और शहतूत के पेड़, और खेतों के किनारे लाइम के पेड़। तब तक मेरा भाई भी मुक्त हो जाएगा। फिर हम सब मिल कर खेत बोएंगे और रेशम के कोये एकत्रित करेंगे और पापा को एक ऊँची सी कुर्सी पर बिठाकर असली इटैलियन शराब पिलाएंगे और कभी...कभी—और युद्ध न होने देंगे।"

दूसरे दिन मेरिया और उसके बाप को पुलिस ने फिर पकड़ लिया। यह पकड़-धकड़ केवल सावधानी के तौर पर की गई थी। युद्ध युद्ध ही है और अभी फ़ैसिस्ट इटैलियनों और समाजवादी इटैलियनों में भेद मालूम करना बड़ा कठिन काम है। यद्यपि अधिकारी वर्ग को इन दोनों पर कोई सन्देह न था, फिर भी सावधानी बरतना आवश्यक था।

चलते समय मेरिया के बाप ने एक छड़ी मुझे भेंट की।

मेरिया ने एक विषादपूर्ण मुस्कराहट के साथ कहा, "और मैं तुम्हें क्या दूँ, कच्चे चूज़े ?"

मैंने पयानो की ओर इशारा करके कहा, "मैं तुम से बसन्त का राग सुनना चाहता हूँ। मेरा विश्वास है कि इस पतझड़ के पश्चात् बसन्त अवश्य आएगा।"

वह पयानो पर बसन्त का राग बजाने लगी। उसकी आंखों से आंसू गिर रहे थे। राग की गहराइयों में कोयल बोल उठी, फूलों भरी डालियां लहराने लगीं, शहतूत के पत्ते आनन्द-विभोर होकर नाचने लगे—स्त्रियों के आनन्द भरे अट्टहास, और निरीह बच्चों की चंचलताएं।

बसन्त ! बसन्त !! बसन्त !!! मेरिया की आंखों से आँसू गिर रहे थे। बसन्त अवश्य आएगा। एक दिन मानव के उजड़े उद्यान में बसन्त ऋतु अवश्य आएगी। यह राग कह रहा है—मेरिया ! तेरे आँसू निष्फल नहीं रहेंगे !

: १२ :

दुर्घटनाएँ

कुछ स्मृतियाँ ऐसी होती हैं जो हृदय में कील की भांति गड़ जाती हैं और किसी तरह से भी नहीं मिटतीं। उन्हें जितनी बार मिटाने का प्रयत्न करो वे और भी अधिक गहरी हो जाती हैं। ऐसी ही स्मृतियों में से एक स्मृति मेरे छोटे भाई की हत्या है। असंख्य प्रयत्न करके हार चुका हूँ परन्तु उस घटना को अपने हृदय-पटल पर से नहीं मिटा सका हूँ। यूं ही बैठे-बिठाए, मित्रों से गप्पें लड़ाते हुए सहसा उसका चेहरा मेरे सामने आ जाता है और उसकी बड़ी-बड़ी आँखें आँसुओं से भरी हुई चुपचाप मुझे देर तक घूरती रहती हैं। और मेरा उल्लास तुरन्त न जाने कहाँ चला जाता है। मेरे होंटों की मुस्कान इस तरह मुर्झा जाती है जैसे तेज़ धूप में चम्बेली का फूल।

वह मेरा सबसे छोटा भाई था। नाम था राजा। वह सचमु राजा लगता था—परियों के देश का राजा। कदाचित् इसीलिए हम सब भाई-बहिन उससे चिढ़ते थे। मैं तो किसी न किसी बहाने उससे सदा लड़ाई-झगड़ा मोल लेता रहता था। यद्यपि मैं आयु में उससे बहुत बड़ा हूँ—वह उन दिनों सातवीं श्रेणी में पढ़ता था और मैं बी. ए. में—परन्तु मेरे मन में उसके प्रति बड़ी ईर्ष्या थी। मैं सोचता, जब यह छोकरा बड़ा होगा तो कितना सुन्दर होगा और जब यह

कालिज में जाएगा तो जिस क्षेत्र में हम बिल्कुल बुद्धू समझे जाते हैं उसमें इसकी विजयें सिकन्दर की विजयों से भला क्या कम होंगी? यही सोच-सोच कर मेरा जी अन्दर ही अन्दर घुटने लगता।

अपनी ईर्ष्या की अग्नि को हम सब उससे लड़कर और उसे मार-पीटकर बुझाने का प्रयत्न करते थे। राजा अत्यन्त तीक्ष्ण-बुद्धि, चंचल और बदपरहेज़ था और माँ और बाप का सबसे अधिक लाड़ला और चहेता बेटा था। मेरे पिता जी तो सदा उसे अपने साथ खाना खिलाते थे। इससे हमारी ईर्ष्या की अग्नि और भी भड़क उठती थी।

राजा अपनी बदपरहेज़ियों के कारण सदा बीमार रहता था। कुछ 'गुप्त' रोगों को छोड़कर संसार की कोई बीमारी ऐसी न थी जिसने उस पर एक-दो बार आक्रमण न किया हो। परन्तु इन सब बीमारियों पर राजा तुरन्त विजय प्राप्त कर लेता और थोड़े दिनों के पश्चात् उसका वही सुन्दर, मुस्कराता हुआ चेहरा हमें फिर चिढ़ाने के लिए घर में, बाहर, सब जगह मौजूद होता।

उसकी हत्या का प्रारम्भ एक लड़की के मुस्कराने से हुआ। सज्जिया क्यों मुस्कराई (उस लड़की का नाम सज्जिया था), इसका उत्तर मेरे पास नहीं है; शायद किसी के पास नहीं है। मैं पूछता हूं कि सज्जिया इतनी अलौकिक सुन्दरी क्यों थी और वह क्यों मुस्कराई? मेरे पिताजी की तब्दीली वहाँ, उस दूरस्थ पहाड़ी गाँव में, क्यों हुई, जहाँ दो नदियाँ मिलती थीं, जहाँ देवदार के जंगलों से अटे पहाड़ थे। लड़कियाँ जब पानी की गागरें उठाए एक पंक्ति में चलतीं तो दिल की गागर में यौवन का कच्चा लहू क्यों छलकने लगता था? यदि जीवन 'दुर्घटनाओं की लड़ी' का नाम है—जैसे कि कुछ दार्शनिक कहते हैं तो निःसन्देह सज्जिया के मुस्कराने को एक दुर्घटना समझना चाहिए।

उसे मैंने सबसे पहले अपने मकान के बाग़ की बाड़ के समीप खड़े देखा था। वह एक काली शलवार, और नीली क़मीज़ पहने खड़ी थी। मैंने पूछा, "तुम कौन हो?" वह उत्तर में मुस्कराई। वह अलौकिक,

सजाई हुई शहद जैसी मधुर मुस्कान मुझे अब तक याद है। इतनी ही स्पष्ट जितनी मेरे भाई की हत्या। ये दोनों घटनाएँ एक ही दुर्घटना की कड़ियाँ कैसे हो सकती हैं? जब वह मुस्कराई तो मुझे इतना अवश्य महसूस हुआ कि कोई बड़ी दुर्घटना हो गई ।

उसने मुझे बताया कि वह यहाँ से बहुत दूर एक गाँव में रहती थी। फिर वह अपने प्रेमी के साथ दस-पन्द्रह दिन तक इधर-उधर घूमती रही। पहले-पहल बहुत आनन्द आया था, हर वस्तु सुन्दर और अलौकिक लगती थी। जीवन एक नशे की सी हालत में बीत रहा था। फिर यह नशा उतर गया। वे दोनों इस छुपने और भागने के जीवन से उकता गए और जब दो-चार बार भूखा रहना पड़ा तो सारा प्रेम हवा हो गया। फिर वे एक दूसरे के लिए असह्य हो गए, मन-मन में एक दूसरे को गालियाँ देने लगे, फिर खुल्लम-खुल्ला, फिर एक दूसरे को उपालम्भ देने लगे और फिर प्रेमी ने प्रेयसी को पीटा और वह भाग खड़ी हुई। अब वह अपने घर लौट जाना चाहती है, वह तीन दिनों से भूखी है, उसने यह बाग़ और इसके पके हुए फल देखे और सोचा कि बाग़ में रात बिताएगी और फल खाकर अपना पेट भरेगी और जब प्रभात होगा तो चुप-चाप यहाँ से चली जाएगी।

इसके बाद वह मुस्कराई। मैंने कहा, "सजिया, तुम्हारे घर वाले अब तुम्हारा स्वागत नहीं करेंगे। और यदि क्रोध में आकर उन्होंने तुम्हारा नाक काट दिया तो सारी आयु तुम्हें भीख माँगकर पेट भरना पड़ेगा।" यह सुनकर सजिया की मुस्कान आँसुओं में बदल गई और वह कहने लगी, "तो अब मैं क्या करूँ?"

मुझे एक उपाय सूझा। मैंने उसे वह उपाय बता दिया। पहले तो उसने इन्कार कर दिया परन्तु फिर वह सहमत हो गई। अब दुर्भाग्य यह हुआ कि जब मैं उस से बातें कर रहा था तो राजा ने मुझे देख लिया। वह मेरे उच्च आचरण और ऊँचे विचारों को भली प्रकार जानता था इसलिये वह सदा मेरी कड़ी निगरानी रखता था। सजिय

ने वह रात बाग़ में बिताने की बजाय माली के घर में बिताई, फिर भी राजा को मुझ पर सन्देह बना रहा।

सज्जिया को माली ने मेरे कहने से अपने घर में जगह दे दी और वह माली की भानजी बनकर वहां रहने लगी और हमारे घर का और बाग़ का काम करने लगी। किसी को उसकी वास्तविकता का पता न था; हां राजा सारी बात से परिचित था। उसका मुँह बन्द रखने के लिये मुझे कई उपाय बर्तने पड़ते थे, जिनके कारण मैं उससे और भी अधिक तंग रहने लगा। उसके प्रति मेरी घृणा और भी बढ़ गई।

कुछ दिन इसी हालत में बीते और मैं उस लड़की के साथ प्रेम की उन मंज़िलों को तय करने लगा जिनका सम्बन्ध चाँदनी रातों, नदी के निर्मल पानी, बुलबुल के चहचहों और निर्झर के किनारे काँपती हुई फूलों की कलियों से है। सारे वातावरण में कवित्व रच गया था।

अब एक दुर्घटना और हुई और वह यह कि पहाड़ी नदियों में भयानक बाढ़ आ गई, तीन दिन तक बराबर वर्षा होती रही और सारी घाटी में पानी ही पानी हो गया। बहुत से गाँव बह गये, जिनमें सज्जिया का गाँव भी था। और सैंकड़ों आदमी और पशु बाढ़ में बह गये जिनमें उस लड़की के माता-पिता भी थे। अब उसका मेरे सिवाय कौन रह गया? मैंने मन में ठान ली कि इस बार गर्मी की छुट्टियों के बाद जब कालिज वापिस जाऊँगा तो उसे अपने साथ ले जाऊँगा, वहाँ एक मकान लेकर उसमें दोनों रहा करेंगे। जब मैं कालिज से लौटकर आया करूँगा तो वह मेरी प्रतीक्षा में द्वार पर खड़ी मिला करेगी। बस आनन्द ही आनन्द होगा। और मैं दिल में गुनगुनाने लगा, 'इक बंगला बने न्यारा।'

मैंने लड़की से यह बात कह दी और उसे 'इक बंगला बने न्यारा' वाला गीत भी सुना दिया। वह मेरी बात सुनकर आनन्द-विभोर हो उठी। परन्तु यहाँ एक दुर्घटना और हो गई। संयोग से राजा ने हमारी ये बातें सुन लीं!

इसके बाद जो कुछ हुआ उसे मैं दुर्घटना नहीं कहता, हत्या भी नहीं कहता, केवल अपना दुर्भाग्य कहता हूँ। हुआ यह कि बाढ़ उतरने पर जबकि नदियों का पानी अभी गदला था और उसमें पशुओं और मनुष्यों की लाशें सड़ रही थीं, राजा ने उन गन्दे और ख़तरनाक पानियों में नहाने की ठानी। वह बहुत देर तक उन पानियों में तैरता रहा, नहाता रहा और कुल्लियाँ करता रहा। काफ़ी पानी उसके पेट में भी चला गया। परिणाम यह हुआ कि उसी शाम को उसे ज्वर हो गया और सारे शरीर पर सूजन हो गई। फिर यह सूजन बढ़ती गई, यहाँ तक कि सारा शरीर फूल कर कुप्पा हो गया। सुन्दर आँखें सूजे हुए पपोटों में छुप गईं। चंचल होंट फटे हुए अंजीर दिखाई देने लगे। हाथ-पाँव बिल्कुल भद्दे हो गये। जो सब से सुन्दर था वह सब से कुरूप हो गया। इससे हम सब भाइयों को आन्तरिक सन्तोष हुआ—यद्यपि प्रकट में हम भी उसकी बीमारी पर कुढ़ाते थे। मैं तो इसलिये भी प्रसन्न था कि अब कोई मेरी पड़ताल करने वाला न था।

डाक्टर ने उसका इलाज किया, परन्तु वह अच्छा न हुआ, उल्टी सूजन बढ़ती चली गई। शहर से एक और डाक्टर बुलाया गया। उसके इलाज से सूजन घटने लगी और कुछ दिनों के बाद घटते २ लगभग पूरी तरह जाती रही। माता-पिता अत्यन्त सन्तुष्ट और प्रसन्न हुए। परन्तु दूसरे दिन उसकी सूजन फिर बढ़ने लगी। इस तरह उस की सूजन पाँच बार कम हुई और पांच बार बढ़ी। डाक्टर बहुत ध्यान, प्रेम और लग्न से इलाज करता था, परन्तु यह सूजन घटकर बढ़ जाती और बढ़कर घट जाती। पूरी तरह वह कभी दूर नहीं हुई। इस बीमारी में उसका सारा सौन्दर्य मर गया, होंटों की हँसी समाप्त हो गई और चंचल आंखों में उदासी और निराशा झांकने लगी।

डाक्टर ने कहा, "यह जगह तर है और अब ऋतु भी ठंडी है। राजा को ओडिमा हो गया है, और दिल बहुत कमज़ोर हो गया है। अतः इसे किसी खुश्क जगह पर भेज दीजिये जहाँ धूप हो और इसे

को विदा दो।"

राजा ने मुझ पर एक दृष्टि डाली। वह दृष्टि मेरे हृदय में अब तक सुरक्षित है—बर्छे की नोक की भांति। राजा पिता जी के कहने पर भी नहीं मुस्कराया। दोनों हाथ जोड़ कर, चुपचाप, सब प्रकार की भावनाओं से रहित, उसने नमस्ते की और फिर बिस्तर पर लेट गया।

इसके पंद्रह दिन के बाद वह मुझे स्वप्न में मिला जैसे वह ठीक हो गया है और वैसा ही सुन्दर, और बाहों पर हाथ फेरते हुए स्वर्ग से कहने लगा, "देखो भैया, मैं अब अच्छा हो गया हूं।"

मेरी आंख खुल गई और मैंने स्वप्न सज्जिया को सुनाया।

दूसरे दिन तार मिला। राजा उसी रात दिल की धड़कन बन्द हो जाने से मर गया था।

मेरा विश्वास है कि मैं उसकी मृत्यु का ज़िम्मेदार नहीं हूँ। वह यदि मेरे साथ भी आजाता तो भी उसका बचना असम्भव था। उसकी मृत्यु का मुझे बहुत दुख हुआ, उसकी याद में मैं कई बार रोया हूं। मैं उसकी मृत्यु का बिल्कुल ज़िम्मेदार नहीं हूं।

परन्तु कभी २ उसकी मोटी २ सूजी हुई आंखें मुझे रात को अंधेरे में घूरने लगती हैं—वे आंखें जिनमें न प्यार है, न घृणा, न उपालम्भ, न दुख, न कोई और भावना। मैं इन निगाहों को नहीं सह सकता। मैं सोचता हूं, मैं ही उसकी मृत्यु का ज़िम्मेदार हूं, मैं उसका हत्यारा हूं। जब वह बिस्तर पर लेटा मुझे विदा दे रहा था तो उसके शरीर का रोम-रोम सुनहरी धूप, खुश्क ऋतु और संगतरे के रस के लिये तड़प रहा था। ये चीज़ें मैं उसे दे सकता था, परन्तु मैंने उसे उस ठंडे, तर, पहाड़ी स्थान पर मरने के लिये छोड़ दिया। इसका कारण यह था कि सज्जिया मुस्कराई थी और वह मेरे साथ थी। जीवन सचमुच दुर्घटनाओं की एक लम्बी ज़ंजीर है!